प्रद्युमन चरित्र

एवं

श्री जिनसेना रानी की कथा



रचयिता :

मुनि पार्श्व



प्रकाशक :

श्री गोविन्दराम भनसाली पारमार्थिक संस्था

७५, नेताजी सुभाष रोड,

कलकत्ता-७०० ००१



प्रकाशन तिथी :

दिपमालिका सं० २०४३

ता० : १-११-१९८६

प्रद्युमन चरित्र

एवं

श्री जिनसेना रानी-की कथा

☐

रचयिता :

मुनि पार्श्व कुमार

☐

प्राप्ति स्थान :

गोविन्दराम भीखनचन्द भनसाली

७५, नेताजी सुभाष रोड,

कलकत्ता-७०० ००१

एवं

भीखनचन्द भनसाली

गोलछों का मोहल्ला, (राजस्थान)

बीकानेर—३३४००१

☐

मूल्य : १५ रु०

☐

मुद्रक :

रेफिल आर्ट प्रेस

३१, बड़तल्ला स्ट्रीट, कलकत्ता-७०० ००७

फोन : ३९-७८२५, ३१-१४१६

आचार्य प्रवर श्री १००८ श्री नानालालजी
महाराज साहब के आचार्य पद की
रजत जयन्ती महोत्सव के प्रसंग पर

समर्पण

तव सान्निध्य को पाकर मेरा
मन पंकज खिल जाता है,
हर्षोल्लसित मेरा मस्तक
चरणो में झुक जाता है।

नानागुरु का वरद्‌हस्त पा
सदा-सदा मैं जिया करूँ,
समता से अलोकित मुख का
सतत् दर्श मैं किया करूँ,

समता विभूति गुरु नाना के
मैं चरणों में रहता हूँ।
मुक्त पार्श्व कण के लेखन को
सतत् समर्पित करता हूँ।

—मुनि पार्श्व
१-११-८६

समर्पण

उन
महिमामण्डित
समता विभूति
समीक्षण ध्यान—योगी
हुक्म—क्षितिज
के
दीप्तिमन्त
नक्षत्र
आचार्य देव
नानेश को
जिनके
महनीय—व्यक्तित्व
ने
इस अज्ञ पर
अपूर्व अनुग्रह
का
संवर्षण कर
साधना
के
अमोघ पथ पर
अग्रसर किया।

—मुनि पार्श्व

काव्यकार : एक परिचय

भारत की सभ्यता एवं संस्कृति विश्व में सर्वाधिक प्राचीन ही नहीं अपितु चिरन्तन एवं शाश्वत भी है। शत सहस्र वर्षों के घात प्रतिघात, प्रबल झंझावात एवं विपुल वात्याचक्र भी इसके रूप को प्रतिहत करने में असमर्थ रहे हैं। कष्ट काठिन्य के निकषोपल पर कसकर यह अधिक तेजस्वी और भास्वर हुई है। ऐसे महानीय भारत के मध्यम भाग में मध्य प्रदेश उसका हृदय प्रदेश है। यदि इसके इतिहास पर एक दृष्टि निक्षेप किया जाय तो ज्ञात होगा कि मध्य प्रदेश की धरा गौरव गरिमा से युक्त अपूर्व तेजोमय है। अनेक विशेषताओं से गुम्फित इतिहास प्रसिद्ध दशपुर (मन्दसौर) जिले के अन्तर्गत प्राकृतिक सुषमा से मंडित शस्यश्यामल दलौदा ग्राम अपनी महत्ता के कारण प्रख्यात है।

दलौदा ग्राम की इसी पावन भूमि पर ३७ वर्ष पूर्व विद्वद्वरेण्य श्री पार्श्व मुनि ने जन्म ग्रहण किया। अपनी माता श्रीमती मोहनबाई भण्डारी के धार्मिक भावों से अनुप्राणित आठ वर्ष की लघुवय में ही परम श्रद्धेय चारित्र चूड़ामणि आचार्य श्री नानेश एवं कर्मठ सेवाभावी श्री इन्द्रभगवान का पुनीत सान्निध्य प्राप्त कर तथा इनके दिव्यप्रवचनों से प्रेरित होकर संसार से विरक्त हो गये। आचार्य प्रवर के छत्तीसगढ़ (मध्यप्रदेश) प्रवास प्रसंग पर सात "मुमुक्षु आत्माओं" के साथ दीक्षित होकर अपने जीवन को आत्मोन्नयन के प्रति भावित करते हुए विचरण करने लगे।

बाल्यकाल से ही आप मे अप्रतिम प्रतिभा थी। परम श्रद्धेय आचार्यदेव तथा कर्मठ सेवाभावी श्रीइन्द्र भगवान जैसे कुशल शिल्पकार के साहचर्य से जीवन में अद्वितीय निखार आया। बीकानेरमें मुनिपुंगव के सान्निध्य

में अनेक वर्षों तक संस्कृत, व्याकरण, न्यायदर्शन, भारतीय संस्कृति एवं साहित्य आदि गहन विषयों का गंभीर अध्ययन किया।

आपकी वक्तृत्व कला प्रभावशालिनी है। प्रवचन में गम्भीर से गम्भीर विषयों को सहज सरल रूप से निरूपित करना, नैसर्गिक कला है, जिससे आबाल वृद्ध लाभान्वित हुए बिना नहीं रहता।

प्रस्तुत गेय काव्य प्रद्युम्न चरित्र के रचनाकार आप श्री हैं। इसमें मंगलाचरण के साथ कथा का प्रारम्भ होता है, फिर परिवार का विकास वर्णित है। बीच में शिशु का अपहरण दृष्टिगत है, सांत्वना उपाय भी किये जाते हैं। प्रसंग से प्रद्युम्न के पूर्व जन्म की आख्यायिका भी दी गई है। दिग्विजय का प्रसंग भी अत्यन्त रोचक है। प्रद्युम्न के आगमन से परिवार में अत्यन्त प्रसन्नता छा जाती है, और वातावरण स्नेहिल हो उठता है। अश्रुभरी विदाई भी बीच में उपस्थित होने से काव्य रोचक बन गया है, और अनेक प्रकार से लाभान्वित होकर प्रत्यावर्तन भी होता है। भामा के मनोहर महल का वर्णन अपूर्व है। रूक्मिणी आदि महारानियों के प्रसंग से चरित्र-चित्रण अति समीचीन दिखाई देता है। जहाँ-तहाँ संघर्ष का वातावरण भी उपस्थित हुआ है जो लक्ष्य पूर्ति में कहीं भी आशोभनीय प्रतीत नहीं होता। बाल्यकाल के कौतुहल पूर्ण वर्णन ने मनोरंजन का सहज पुट दे दिया है, जिससे पाठक के मानस में सहज ही गुदगुदी होती है। शाम्ब के शैशव एवं शिक्षा का वर्णन भी बड़ा मनोहारी दृष्टिगत होता है। प्रद्युम्न, शाम्ब आदि राजकुमारों का साथ-साथ क्रीड़ा कौतुहल तथा शैशव की सौम्य लीला ने काव्य रस में अनुपम रंग भर दिया है वसन्त का सुषमापरक वर्णन पाठक के हृदय को छूता है। तीर्थंकर अरिष्ट नेमि के प्रासंगिक वर्णन एवं देशना ने काव्य सौरभ में अपूर्व निखार ला दिया है, जिससे मुमुक्षु आत्मा आत्मकल्याण के पथपर अग्रसर होकर आत्मोत्थान करती है।

इस प्रकार इस महत्वपूर्ण काव्य में सांगोपांग वर्णन किया गया है, जो गेय दृष्टि से अत्यन्त सफल है।

श्री नानेशाचार्य नमः

मंगलाचरणः

दोहे

महासार्थ सिद्धार्थ सुत, महावीर भगवान।
महानन्ददायी सदा, महामांगलिक स्थान ॥ १ ॥

सेवित सुर-नर-असुर से, क्षमाशील अरिहंत।
माता त्रिशला के तनय, प्राप्त प्रभुत्व अनंत ॥ २ ॥

ते-देगें जगत को, समता का संदेश।
युग-युग तक जीते रहो, जय-जय गुरू नानेश ॥ ३ ॥

नमता की सत्साधना, जीवन का शुभ सार।
मुमुक्षओं को मिल गया, वहुत वड़ा आधार ॥ ४ ॥

ुझे शक्ति दें, भक्ति दें, यही प्रार्थना एक।
किसी जगह चुँकू नहीं, लिखते समय विवेक ॥ ५ ॥

न्म मृत्यु का जगत में, कठिन चढ़ाव उतार।
पाँऊ गुरूवर की कृपा, हो जाऊँ भव-पार ॥ ६ ॥

यो न इन्द्र भगवान का, मैं गाऊँ गुण-गान।
जिनसे पाई प्रेरणा, पाया स्थान महान ॥ ७ ॥

रो भी मैं बोलूँ-लिखूँ, सुने-पढ़े सवलोग।
देगें इसमें क्यो नहीं, समाय स्वास्थ्य सहयोग ॥ ८ ॥

ल्पवृक्ष था पुण्य का, श्री प्रद्युम्नकुमार।
कथा रसीली मैं लिखू, ले प्राचीन आधार ॥ ९ ॥

चरित बहुत परिचित न था, फिर भी उससे प्यार।
कौन अपरिचित से करे, प्रेम भरा व्यवहार॥ १०॥
स्थिर तन स्थिर मन स्थिर वचन, बनकर कर अनुराग।
पिये प्रेम से श्रोता-गण, प्रवचन पुण्य पराग॥ ११॥

कथा का प्रारंभः

(तर्ज—यह गढ़ चित्तौड़ की कथा रसीली गाऊ)

था पुण्यरूप वह कल्पवृक्ष बतलाऊँ।
प्रद्युम्न कुंवर की कथा रसीली गाऊँ॥ ध्रुवपद॥

है जंबुद्वीप में भरतक्षेत्र सुखदाई।
थी पुरी द्वारिका यहीं, सुरों ने रचाई।
था वहाँ कृष्ण का राज्य, यहीं मैं बताऊँ॥ प्रद्युम्न—१॥

सामन्त सेठ महाराज, बसे मन भाया।
थे सुखी सभी नरनार, कृष्ण गुणगाया।
था जिन्हें धर्म से प्यार, हर्ष गुण गाऊँ॥ प्रद्युम्न—२॥

थी महारानियाँ आठ, बड़ी सुखकारी।
महलों में आनन्द भोग, लगे थे भारी।
था स्नेह सभी के संग, ऐसा दरसाऊँ॥ प्रद्युम्न—३

गुणवती उनमें एक, रुक्मिणी रानी।
थी सुन्दरता की मूर्ति बड़ी सुखखानि।
थी यह महलों की शान, सही समझाऊँ॥ प्रद्युम्न—४

सोतिया डाह :—

दोहे

लाये स्त्री पर स्त्री अगर, उसे वताई सौत।
सोत नहीं संसार में, है डाह सुख की मौत ॥ १ ॥

(तर्ज मूल की)

है डाह-सौतिया कष्ट वडा ही भारी।
वच पाती होगी इससे विरली नारी।
भामा थी ईर्ष्याखोर, यही में वताऊँ ॥ प्रद्युम्न—५ ॥

जव सुने रुक्मिणी की वह, महिमा भारी।
लग जाती उसको चिन्ता की चिनगारी।
वह सोचे मन में किसको, दुखड़ा सुनाऊँ ॥ प्रद्युम्न—६ ॥

एक समाचार :—

कुरू जागल का था वड़ा, दुर्योधन राजा।
वह लिखता कागज त्वरित कृष्ण को ताजा।
मैं आज यही आपस में शर्त लगाऊँ ॥ प्रद्युम्न —७ ॥

हो पुत्र आपके पुत्री, कुल में मेरे।
तो परिणय में हो उन दोनों के फेरे।
हो जाये यही संवध, आज में चाहूँ ॥ प्रद्युम्न—८ ॥

पढ़ पत्र कृष्ण का चित्त, वहुत हरषाया।
कर सूचित सबको वहुत वहुत हरपाया।
मैं स्वीकृति पत्र दिराय, हर्ष मनवाऊँ ॥ प्रद्युम्न—९ ॥

यह वृत ज्ञात होने पर, मन में हर्षी।
भामा के महलों में खुशियाँ बर्षी।
वह सोचे मन में अब मैं भी सुनपाऊँ ॥ प्रद्युम्न—१० ॥
हो जाये मेरे पुत्र महा बलधारी।
मैं जिससे पाऊँ खुशियाँ बहुत ही भारी।
फिर दुर्योधन दुहिता से व्याह रचाऊँ ॥ प्रद्युम्न—११ ॥
दासी के सम्मुख भेद, स्वयं का खोला।
जा अभी-अभी तू बुला रूक्मिणी को ला।
मै मेरे मन की इच्छा, सकल पुराऊँ ॥ प्रद्युम्न—१२ ॥
आ गई रूक्मिणी दासी, के कहने से।
सुख होता सब से मिल जुल कर रहने से।
क्यों याद किया ? दो आज्ञा, शीश चढ़ाऊँ ॥ प्रद्युम्न—१३ ॥

नई होड़ :—

जो अपने सुत को पहले व्यावे।
तो पीछे वाली अपने सिर मूंडवावे।
वे बाल चढ़े चरणों में, मैं बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-१४ ॥
सुन कहे रूक्मिणी बात, बहन ! तुम सुनना।
क्या शोभास्पद है मार्ग आज यह चुनना।
छोड़ो यह व्यर्थ विचार सार समझाऊँ ॥ प्रद्युम्न-१५ ।
क्यों भेद-भावना ऐसी, मन में रखनी।
यह बात दुःख दोनों को ही दे सकती।
क्यों लगी लगाने आग, तुम्हें समझाऊँ ॥ प्रद्युम्न-१६ ।

क्या हरि हल धर को यहाँ बुला लिया जावे।
हाँ, सुनकर दासी उन्हे बुलाने जावे।
वे आये मिलकर साथ, यही मैं बताऊँ॥ प्रद्युम्न-१७॥
भामा ने अपनी शर्त सुनाई, सारी।
सुनकरके बोले हलधर और गिरधारी।
क्या है तुमको मजूँर यहीं मैं चाहूँ॥ प्रद्युम्न-१८॥
रुचि होड़ लगाने में न, जरा भी मेरी।
परवश होकर ही स्वीकृति देती मेरी।
स्वस्थान गये फिर सभी, यहा दिखलाऊँ॥ प्रद्युम्न-१९॥

स्वप्न और फलः—

उठ सती रुक्मिणी रंग महल मे आवे।
रमणीय पलंग पर निर्भय हो सो जावे।
निशि मे देखे दो स्वप्न, शुभ बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न-२०॥
आभा से मंडित देव विमान दिखा है।
एरावत अपने उर में आन टिका है।
फल उत्तम सपने का अब, मैं बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न २१-॥
वह स्वप्न सुनाने निकट कृष्ण के आवे।
सुन स्वप्न कृष्ण भी फल उनके बतलावे।
सुन जनमेगा पुनवान, एक दिखलाऊँ॥ प्रद्युम्न २२॥
वह गर्भ-पालना बड़े प्रेम से करती।
हो नहीं गर्भ को कष्ट ध्यान यह धरती।
यह चतुर स्त्रियों का काम, यही समझाऊँ॥ प्रद्युम्न-२३॥

भामा के विचार :—

अब सतभामा भी स्वयं, सेज पर जावे ।
रवि स्वप्न देखकर चित्त बहुत हरषावे ।
था मेघाच्छादित भानु, यहि दरसाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२४ ॥

जग, ऊठी कृष्ण के पास चली है आती ।
सपने की जैसी स्थिति वैसी बतलाती ।
रवि जैसा सुत जनमोगी यही बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२५ ॥

फल सुन के स्वप्न का, शर्त याद हुई सारी ।
वह लगी सोचने कब हो सुत बलधारी ।
कर पुत्र-व्याह, सिर सौत का मैं मुड़वाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२६ ॥

थी नहीं पुण्य के योग्य, उदर की वृद्धि ।
हो गई सौत के शंकाओ की सिद्धि ।
अब सतभामा के मन की बात बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२७ ॥

है नहीं गर्भिणी रूक्मणी, ढ़ोग रचावे ।
सिर मुंडवाने के भय से ही भय खावे ।
वह सोचे बच, जाने का जाल रचाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२८ ॥

रूक्मिणी ने सुनके मन में, खूब विचारा ।
क्या रवि उगने पर भी रहता अंधियारा ।
मिट जायेगी शंका फिर मैं क्या मिटाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२९ ॥

जन्म और बधाई :—

हो गया पुत्र का जन्म, समय पर सुखसे ।
जो पापी होते पैदा होते दुःख से ।
था पुत्र बहुत बलवान, यही बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-३० ॥

माँ देख पुत्र का तेज, वहुत मन हर्षी ।
अनुचर के अंतर में भी खुशियाँ वर्षी ।
श्री कृष्ण को जाकर मैं भी आज वधाऊँ ॥ प्रद्युम्न-३१ ॥

दोहाः—

गया कृष्ण के पास में, वैठा लेकर मौन ।
सोयें हों स्वामी अगर, तब बोलेगा कौन ॥ २ ॥

ले हर्ष वधाई अनुचर आया भारी ।
सोये है श्री यदुनाथ उन्हें न जगाऊँ ॥ प्रद्युम्न-३२ ॥

बैठूँ न पांयते मैं हूँ अनुचर ऊँचा ।
यह सोच स्वयं ही सरहाने पर पहुँचा ।
दोनों ही वैठे आस लगाय वताऊँ ॥ प्रद्युम्न-३३ ॥

इतने में कृष्णजी स्वयं ही जागे ।
अनुचर के सोये भाग्य स्वयं ही जागे ।
लो पुत्र वधाई लाया, आज वधाऊँ ॥ प्रद्युम्न-३४ ॥

तज राजचिन्ह आभूषण, उसको देवे ।
वह हर्षित होकर वड़े प्रेम से लेवे ।
हो गया है निहाल अनुचर मैं वतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-३५ ॥

अब भामा का भी अनुचर दिया दिख ई ।
उसे से भी सुत की, पाई श्रेष्ठ वधाई ।
हो रहा हर्ष पर हर्ष, यही वतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-३६ ॥

बुलाया कोषाध्यक्ष, वहाँ पर आया ।
खुलवाया भाडागार, इनाम दिलवाया ।
वह चला गया पर उसके भी भाव सुनाऊँ ॥ प्रद्युम्न-३७ ॥

जा उसने सत्यभाम से चुगली कीनी।
सब पक्षपात की बाते बतला दीनी।
मैं आप बीच में भेद न सहने पाऊँ ॥ प्रद्युम्न-३८
सुन कर के सतभामा भी, बहुत भन्नाई।
बुलवाकर हलधर को है बात सुनाई।
सुन हलधर बोले अभी जाय समझाऊँ ॥ प्रद्युम्न-३९
फिर पुत्र जन्म का उत्सव, कीना भारी।
तब पुरी द्वारिका दुल्हण सम सिणगारी।
अष्टान्हिक उत्सव किया गया बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न ४०
भय रहा नहीं है, अन्य, किसी का मन में।
भय मामा का ही छाया है जीवन में।
महलों पर पहरा शस्त्र, सहित बिठलाँऊ ॥ प्रद्युम्न-४१ ॥

शिशु का अपहरण :—

तब पांच दिवस तो सुखके, साथ बिताये।
अब छठी रात की बात अंधेरा छाये।
फिर अपहृत हुआ नवजात शिशु बतालॉऊ ॥ प्रद्युम्न-४२
जगने पर शिशु को माँ न वहाँ पर पावे।
इतउत देखा पर कहीं नजर नहीं आवे।
आई है मूर्च्छा गिरी, भूमि दिखलाँऊ ॥ प्रद्युम्न-४३ ॥
यह देख दासियाँ दौड़-दौड़ के आई।
उपचारों द्वारा मूर्च्छा गई हटाई।
हुई दर्दनाक यह दशा आज दरसाँऊ ॥ प्रद्युम्न-४४ ॥

हा! देव बता क्या तूने खेल खिलाया।
तू मेरे पर भी जरा दया नहीं लाया।
वह नयन सितारा पुत्र कहाँ पर पाऊँ॥ प्रद्युम्न-४५ ॥
हे लाल! तेरी थी कितनी, कोमल काया।
तू अपनी माँ पर तरस जरा नहीं लाया।
मैं रोती रोती तुझ को आज बुलाँऊ॥ प्रद्युम्न-४६ ॥
क्या किसी निर्दयी नर ने, तुझको चुराया।
है कौन शत्रु वह, नहीं समझ में आया।
कर दिया हाय! यह रंग में भंग बतॉऊ॥ प्रद्युम्न-४७ ॥
थी आजतलक मैं भ्रम में डुबी रहती।
है जग में मुझ से कौन सुखी हो रहती।
दुख पर्वत को अब कैसे दूर हटाँऊ ॥ प्रद्युम्न-४८ ॥
ज्ञानी जन कहते हर्ष विषाद है साथी।
स्थिति अभी रूक्मिणी नहीं समझने पाती।
है यही दशा दुनिया की, मैं दिखलाँऊ॥ प्रद्युम्न-४९ ॥

सान्तवना और उपाय!

सुन कोलाहल श्री कृष्ण, वहाँ पर आये
अपहर्ण की सुनके, बात बहुत अकुलाये।
यह दुस्साहस है किसका, सुनना चाहूँ॥ प्रद्युम्न-५० ॥
फिर कहे कृष्णजी सुनलो, रूक्मिणी रानी
तुम करो नहीं चिन्ता है दुख की खानी।
मैं तुरंत पुत्र का पता, आज लगवाऊँ॥ प्रद्युम्न-५१ ॥

तब भेज चरोंको कृष्णजी, खोज करावें
पर नहीं कहीं पर पता पुत्र का पावे।
उड़ गया कपूर समान यहीं दरसाऊँ ॥ प्रद्युम्न-५२ ॥

भामा के महलों में अब, खुशियाँ छाई
मर गया सांप लाठी न टूटने पाई।
सुत व्याहूँ मैं रूक्मिणी का सिर मुंडवाऊँ ॥प्रद्युम्न ५३ ॥

वहाँ इसी बीच में, नारद बाबा आये
कर दर्शन उनके कृष्ण चित्त हरपाये।
रूक्मिणी को छुटी अश्रुधार बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-५४ ॥

यह देख नारदजी पूछे, बाते सारी
तब कहे कृष्ण है पुत्र हरण दुख भारी।
सुन कहे नारद भी, तेरा दुःख-मिटाऊँ ॥ प्रद्युम्न-५५ ॥

आकाश मार्ग से नारद बाबा जावें
वे जगह जगह पर रूके पता नहीं पावें।
अब मेरूगिरी से विदेह में, जाते दिखाऊँ ॥ प्रद्युम्न-५६ ॥

कर प्रभु को वंदन नारद, बहु हरपाये
वहाँ बोध श्रवण को चक्री भी थे आये।
नारद को देखि चक्री सोचे बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-५७ ॥

यह दीख रहा नर जैसे कीडा कोई
प्रभु आप बताओ जैसा हो यह बोही।
कहते है भगवन इसका भेद सुनाऊँ ॥ प्रद्युम्न-५८ ॥

द्युम्न का पूर्व जन्म—

था कौशलपुर का 'पद्मनाभ' महाराया।
वह राणी 'धारिणी' के है मन को भाया।
सस्नेह रहे राजा अरू राणी बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-५६ ॥
इक बार स्वर्ग से जीव, दोय है आये।
वे युग्मरूप से जन्में भ्रात कहाये।
है जयेष्ठानुज 'मधु' 'कैटभ' नाम रखाऊँ ॥ प्रद्युम्न-६० ॥
पढ़ विद्या वे बन गये, विलक्षण भारी।
कर शादी लाये लक्षणवंती नारी।
अब 'पद्मनाभ' राजा की विराकी दिखाऊँ ॥ प्रद्युम्न-६१ ॥
नृप आत्मन्नोति हित साधुवृति को धारे।
वे ज्ञान-ध्यान रत उग्र तपस्या करे।
सब कर्म खपाकर पाये मुक्ति बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-६२ ॥
इत बहुत प्रेम से रहते, दोनों भाई।
इक दिवस नगर में हल्ला दिया सुनाई।
चर से नृप पूछे, कारण सुनना चाहूँ ॥ प्रद्युम्न ६३ ॥
नर जो भी पुर से बाहर आते जाते।
नृप 'भीमसेन' के सैनिक उन्हें सताते।
है परेशान सब, सच सच, मैं बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-६४ ॥
यह सुन के 'मधु' को क्रोध बहुत ही आया।
ले सेना आया अरिको दूर भगाया।
फिर उसका पीछा नहीं है छोड़ा बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-६५ ॥

इन्द्रप्रभा चाहिये:—

मारग में 'वटपुर' नाम नगर था भारो ।
नृप वहाँ 'हेमरथ' नृप का आज्ञाकारी ।
ले गया महल में सोचा, शोभा पाऊँ ॥ प्रद्युम्न-

रानी से बोला तुम्हीं, परोसो खाना ।
रानी ने इसको उचित नहीं है माना ।
हो कोई आज्ञा और तो शोश चढ़ाऊँ । प्रद्युम्न-६७ ॥

है सुन्दर इनके यहाँ दासियाँ भारी ।
तू क्यों समझे, मैं ही हूँ सुंदर नारी ।
करना ही होगा कार्य यही मैं चाहूँ ॥ प्रद्युम्न-६

राजा का कहना मान, चली है रानी ।
हो जाती ऐसे, कभी कभी हानी ।
पहने थे गहने कपड़े, काम चलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-६९ ।

'मधु' देख रानी को मुग्ध, बना भारी ।
परनारी इसको लगी बहुत ही प्यारी ।
यह बड़ी बुरी है बात, तुम्हें दिखलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-७०

मन था रानी में, खाना खा न सका है ।
क्या कैसे करना, रास्ता पा न सका है ।
हो गया है उदास निरास, बहुत बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-७१

क्यों हो तुम, मंत्रीश्वर से पूछा ।
नृप लगा सुनाने मनका हाल समूचा ।
जो मिले नहीं रानी तो, यही मरजाऊँ ॥ प्रद्युम्न-७२ ॥

त्रीव की सूझ:—

मंत्री बोला-पहले अरि को मारो।
विजय प्रेम से अपने शहर पधारो।
फिर सोचो अन्य उपाय, यहीं समझाऊँ ॥ प्रद्युम्न-७३ ॥

र मान गया है कहना, अरि को जीता।
र खड़ा कर दिया, उसने वही फजीता।
चल साथ मिला रानी से, मैं अकुलाऊँ ॥ प्रद्युम्न ७४ ॥

टपुर' के बदले 'कोशलपुर' ले आया।
र समझ न पाया, जो मंत्री को माया।
सब किया नृपति के हित में, ऐसा गाऊँ ॥ प्रद्युम्न-७५ ॥

। बोला तू ने छल से काम लिया है।
श्वासघात का हलका काम किया है है।
मैं जीऊँगा तब जबही, उसको पाऊँ ॥ प्रद्युम्न-७६ ॥

नृपरनारी पर ललचाना, पाप बड़ा है।
मुख ऊँचा कर नर रह सकता न खड़ा है॥
है मेरा जो कर्त्तव्य, उसे मैं, निभाऊँ॥ प्रद्युम्न—७७ ॥

नृप बोला तेरा, कथन उचित है सारा।
जो वह न मिले तो, मेरा नहीं गुजारा॥
ले उत्सव मिष उसको यहीं बुलाऊँ॥ प्रद्युम्न—७८ ॥

धु को सफलता—

आमत्रंण भेजा रानी, सहित आने का।
रानी ने समझा कारण बुलवाने का॥
नृप नहीं मानता कैसे, फिर समझाऊँ॥ प्रद्युम्न –७६ ॥

उत्सव में शामिल होने को, वे आये !
सम्मान देखकर मन में विस्मय पाये ॥
नृप सोच रहा है और अधिक रूक जाऊँ ॥ प्रद्युम्न—

वेश्यावत् परकीय दारगमनं शास्त्रे निषिद्धं भृशं, ।
यस्मात् तद् वितनोति दुःखमनिशं, मानप्रतिष्ठापहम ॥
शुद्धे चापि कुले कंलक निकरं, विस्तारत्यञ्जसा, ।
वैरं वर्द्धयते भयं चक्रुरुते, हन्त्यात्मनः सद्गतिम् ॥

हा नष्ट सहंलकया जितवलः सीता रतो रावण ।
द्रोपद्याः हरणेन दुःखमधिकं प्राप्तश्च पद्मोत्तरः ॥
भ्रातृस्त्री निरतो मृतो मणिरथो हत्वा निज भ्रातर—
मन्यस्त्री रमणो हाना हतनया ध्वस्ता महान्तोनके ॥

दी बिदा 'हेम' को रानी, को हे रोका ।
हो जाया करता कभी-कभी यों धोखा ॥
था हेम नृपति मनसे आते, सरल सुभाऊँ ॥प्रद्युम्न—

अब क्या हो—

दे लालच रानी को, अनुकूल बनाया ।
पद पट रानी का देकर रंग रचाया ॥
सुन 'हेम' बना विक्षिप्त, यही दिखलाऊँ ॥ प्रद्युम्न—

वह प्रिया ! प्रिया ! कर आया, कौशलपुर में !
बस प्रिया प्रिया ही बसी इसी के स्वर में ॥
गलियों में घूम रहा है, तुम्हें बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न—

रानी ने देखा अपने पास बुलाया।
मत घूमो ऐसे धीरज भी बंधवाया!
जो हुआ हो गया, भूलो, मैं समझाऊँ॥ प्रद्युम्न—८४॥
सुन नृप ने सोचा रानी, अब न मिलेगी।
मुरझाई कलियाँ वापिस नहीं खिलेगीं॥
बन जाऊँ तापस तनपर, खाक जमाऊँ॥ प्रद्युम्न—८५॥

दोहे—

वन में तापस बन गया, कल का राजा "हेम"।
"इन्द प्रभा" का हो गया, मधु से मनभर प्रेम॥३॥
'मधु' नृप मधुकर बनगया, 'इन्द्रप्रभा' हैं फूल॥
रस पीता है रातदिन, नहीं समझता भूल॥४॥
राज्य व्यवस्था में उसे, रहा नहीं रस लेश।
इसी बीच में घट गई, घटना एक विशेष॥५॥

राजा का सुधार—

तर्ज—मूल की

इक जार पुरुष को फासी, गया चढ़ाया।
अपराधी नर को जाता, पाठ पढ़ाया॥
रानीं ने पूछा-मैं इक, प्रश्न उठाऊँ॥ प्रद्युम्न—८६॥
क्या दंड व्यवस्था सबकी, एक कहानी।
नृप बोला-इससे तू क्या कहना चाहती।
क्याँ मैं भी तो परनारी, नहीं कहलाऊँ॥ प्रद्युम्न-८७॥
क्यों दंड न लेते आप, अगर हो दोषी।
सुन लगा सोचने राज, बन संतोषी।
मैं दोषी हूँ, क्यो अपना, दोष छिपाऊँ॥ प्रद्युम्न-८८।

मन क्रोध न आया और, घृणा मन आई ।
प्रभु वीतराग की वाणी, भली सुहाई ।
उपयुक्त यही है, धर्म-शरण में जाऊँ ।। प्रद्युम्न-८६ ।।

दीक्षा और स्वर्ग :—

लेने को भिक्षा आये, संत सुहाये ।
दे दान भाव से 'मधु' ने पुण्य कमाये ।
शुभ अवसर आया करता, पुण्य कमाऊँ ।। प्रद्युम्न-६० ।।

गुरुसेवा में फिर आये, दोनों भाई ।
धर्मोपदेशना दी गुरू ने सुखदाई ।
दोनों ने दीक्षा ले ली, सुख उपजाऊ ।। प्रद्युम्न-६१ ।।

अब 'इन्द्र प्रभा' ने भी है, संयम धारा ।
कर लिया अंत में तीनों ने संथारा ।
'मधु' गया बारवें स्वर्ग, सही बतलाऊँ ।। प्रद्युम्न-६२ ।।

दोहा :—

च्यव आया है स्वर्ग से 'मधु' राजा का जीव ।
पुत्र 'रूक्मिणी' का बना, पाया सौरे अतीव ।। ६ ।।

तर्ज स्थूल की :—

है जीव 'कैटभ' का 'जांमवती' सुतहोगा ।
वह कला ज्ञान विद्या से संयुक्त होगा ।
जो होना हैवहहोगा, मैं क्या बढ़ाऊँ ।। प्रद्युम्न-६३

"रामसंकर" नृप की बनी, एक जो रानी ।
वह 'इन्द्रप्रभा' थी पहले जानी-मानी ।
है नाम "कनकमाला" बस सत्य सुनाऊँ ।। प्रद्युम्न-६४

कुछ भव करके वह तापस, दैत्य बना है ।
उस 'धूम्रकेतु' के मन में, रोष घना है ।
है वैर-स्नेह भी होते, बहुत टिकाऊ ।। प्रद्युम्न-९५ ।।

है बैठ बिमान में, 'धूम्रकेतु' जब आया ।
'रूक्मिणी' महल से आगे नहीं बढ़ पाया। ।
है ज्ञान से जाना पूर्वशत्रु बतलाऊं ।। प्रद्युम्न-९६ ।।
'रूक्मिणी' महल में देव, वही है आवै ।
अदृश्य होय शिशु लेय, गगन में जावे ।
कहे दुष्ट! तुझे कर्मों का मजा मै चखाऊँ ।। प्रद्युम्न-९७ ।।
वैताढ्य शैल पर आके, खड्डा कोना ।
रख बावन कर की शिला, दवा है दोना ।
ले बच्चू! किये का भोगों, फल बतलाऊँ ।। प्रद्युम्न-९८ ।।
है चरम शरीरी जीव, भव्य नहीं मरता ।
वह दवा हुआ भी सांस जोर से भरता ।
हिल रही सास से शिला, यही दिखलाऊँ ।। प्रद्युम्न-९९ ।।

राजा के घर:—

है 'यमसंवर' नृप मेघकूट' के स्वामी ।
है'कनकमाला' रानी उनकी अनुगामी ।
बैठ विम ान में आये, वन में बताऊँ ।। प्रद्युम्न-१०० ।।
हिलती शिला को देखि, चकित हो जावे ।
शिला हटा के शिशु को छाती लगावे ।
यह मिला दिव्य उपहार, तुम्है बकसाऊँ ।।प्रद्युम्न-१०१ ।।

युवराज का पद दिया, उसे मन भाया ।
सुन रानी का मन और, अधिक हरपाया ।
चुपके से घर चल आए, बात सजाऊँ ॥ प्रद्युम्न-१०
था गूढ़गर्भ रानी ने, लड़का जाया ।
राजा ने ऐसा ढ़िढ़ोरा पिटवाया ।
जन्मोत्सवभो कर दिया,बहुत खरचाऊ ॥ प्रद्युम्न-१०

'प्रद्युम्न" नाम भी दिवस, बारवे रखते ।
यह वृत सुनाकर जिनवर आगे कहते ।
सोलह वर्ष मेंसोलह, लाभ बताऊ ॥ प्रद्युम्न-१०

प्रद्युम्न नामका अर्थ, बड़ा बलधारी ।
या कामदेव ने मानो काया धारी ।
'रूकमणी' पुत्र यादव कुल शोभाऊ ॥ प्रद्युम्न-१०

मिलन के समय :—

जब सूखे तालावों में पानी आयो ।
जब सूखे तरू भी हरे भरे हो जाये ।
स्वर मधुर केकिला गाये, अधिक लुभाऊ ॥ प्रद्युम्न-१०
कमलों पर मधुमर मीठी,गूंज मचाये ।
नर नेत्रहीन को नेत्र स्वतः मिल जाये ।
गूंगो को वाणी मिले, शांति उपजाऊ ॥ प्रद्युम्न
पय से स्तन माताजी के, भर जायेगं ।
ये लक्षण सारे प्रगट, नजर आयेगं ।
जब होगा सुत का मातृमिलन समझाँऊ ॥ प्रद्युम्न

यह सुन के वाणी भव्य-जीव हरषाये।
कर वन्दन नारद 'मेघकूट' पर आये।
कहे रानी से मैं सुनूँ, देखना चाहूँ ॥ प्रद्युम्न-१०६ ॥

उसको देखकर आशीष बहुत दिरावे।
फिर 'नारद' बाबा पुरी द्वारिका आवे।
सुन वृत हुई है मिलन-आशा दिखलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-११० ॥

आशा पर जीने लगी'रूक्मिणी' रानी।
कब बीते सोलह वर्ष सुनू सुतवानी।
इत बालक बढता चन्द्र तुल्य बतलाऊँ ॥ प्रद्युनम्-१११ ॥

प्रद्युम्न की चर्चा :—

प्रकृष्टं-द्युम्नं बलं यस्य सः प्रद्युम्न।
द्यून का अर्थ-चमक, शक्ति और तेज भी होता है।
थी 'यमसंवर' को कनकमाल अतिप्यारी।
"प्रद्युम्न" वजह से बनी (अति) और भी प्यारी।
हुई पुत्र-पुण्य से राज्यवृद्धि बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-११२ ॥

रख कलाचार्य के निकट कला सिखलाई।
है अल्पसमय में उसने पूर्णता पाई।
बढ़ गया तेज है उसका, अपार दिखलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-११३ ॥

कौमार्यावस्था त्याग युवा में आये।
तब माता-पिता यों अपने मन से चावे।
गुणवंती कन्या संग हो, व्याह बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-११४ ॥

दिगविजय और हर्ष :—

इस बीच में कुंवर राय ढिग आवे।
दिग्विजय करूँ मैं अभिलाषा बतलावे।
कर के राज्य-विस्तार, सुयश मैं पाऊँ ॥ प्रद्युम्न-११५।
है युद्ध करना नहीं सरल, पुत्र! तू छोटा।
मैं पितृ-कृपा से जीतूँ राज्य गण मोटा।
माता का एक सुपुत्र, स्वय कहलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-११६ ॥
सुन ओजभरी शुभवाणी, राजा बोले।
हो मर्ण प्रशस्त सभी तब जय-जय बोले।
शुभ आशीष लेकर कहे अभी मैं जाउं ॥ प्रद्युम्न-११७।
कर सेना सज्जित कुंवर वहाँ से चाले।
थे रथ पैदल गज अश्व अधिक बलवाले ॥
उस विपुल सैन्य से कांपी धरती बतलाऊँ ॥प्रद्युम्न-११८।
झुक गये स्वयं ही बड़े-बड़े महाराया।
जो झुका न उसको बल से मार मिटाया।
यह बात नहीं है युद्ध, जबल बतलाऊं ॥ प्रद्युम्न-११९।
कर विजय प्राप्त फिर अपने, पुर आया।
सुन पुत्र ऊणमन नृप मन में हरषाया।
पा ऐसे सुत को अपना, भाग्य सराऊँ ॥ प्रद्युम्न-१२० ॥
गुण गुण की गणना में जो प्रथम पद पावे।
राजा भी उसको वहाँ बधाके लावे।
कर रहो प्रशंसा प्रजा, यही बतलाऊं ॥ प्रद्युम्न-१२१ ॥

पुण्य प्रभा से सभी सब ही आदर पाते।
नृप युवराजा के पद उसे बिठाते।
दे रहा दान नृप स्थायी यश फैलाऊँ॥ प्रद्युम्न-१२२॥

ईष्या के कारनामें:—

थे अन्य मात के अनुज पाच सौ उसके।
'प्रद्युम्न' उन्हीं की आखो में अति खटके।
ईर्ष्या की ज्वाला लगी, उन्हें दिखलाऊँ॥ प्रद्युम्न१२३॥

उन सब की माताओं ने उन्हें पुकारा।
क्यो तुमने अपना साहस खोया सारा।
लो दीर्घ दृष्टि से काम, तुम्हें समझाऊँ॥ प्रद्युम्न-१२४॥
यह युवराजा कल राजा बन जायेगा।
पद राजमाता का कहो कौन पायेगा।
मिल करके काटा दूर, करो बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न-१२५॥

१—एकोपि गुणवान् पुत्रों, निर्गुणैः किं शतैरपि।
एकश्चन्द्रो जगच्क्षु-र्नक्षत्रैः किं प्रयोजनम्॥ १॥

एकेनापि सुपुत्रेण सिंही स्वपिति निर्भयम्।
सहैव दशभिः पुत्रै-र्भारं बहति रासभी॥ २॥
गुणिगण गणनारम्भे, न पतति कठिनी सुसभ्रमाद्यस्य।
तेनाम्ना यदि सुतिनी, वद वन्धया को दृशोनाम्॥ ३॥
२—दह्यमाना सुतीव्रेणा नीचा परयशोग्निना।
अशक्ता स्तत्पदं गन्तुं ततो निन्दा प्रकुर्वते॥ १॥

हो गये उत्तेजित कहे, सुनो तुम माता ।
है कंटक सम यह भ्राता हमें न भाता ।
अवश्य करेंगे नाश, प्रतिज्ञा सुनाऊँ ॥ प्रद्युम्न-१२६ ॥
है कितनी उनकी ऊलटी चिन्तनधारा ।
'प्रद्युम्न' तुल्य करे कार्य होय निस्तारा ।
वे क्या करते है अग्र, तुम्हें बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-१२७ ॥

लाभ पर लाभ :—

षड़यन्त्र हैं रचते सभी परस्पर भाई ।
कन्दुक क्रीड़ा की मांग सभी को भाई ।
कर निश्चय 'गोपुर-गुफा' गये बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-१२८ ॥
प्रद्युम्न कुवर ने गेंद को, डंडा लगाया ।
वह गई गुफा में सबने, शोर मचाया ।
तुम को ही लानी गेंद कहे, मैं सुनाऊँ ॥ प्रद्युम्न-१२९ ॥
प्रद्युम्न गुफा में निर्भय, होकर जावे ।
वहाँ घोर गर्जना करता राक्षस आवे ।
भिड़ गये परस्पर आगे, हाल सुनाऊँ ॥ प्रद्युम्न-१३० ॥
पुण्य प्रभावे राक्षस को है गिराया ।
फिर बैठा छाती उपर वह (सुर) घबराय ।
दो छोड़ मुझे मैं तुम्हें इनाम दिराऊँ ॥ प्रद्युम्न-१३१ ॥
संतुष्ट होय तब 'मंत्र कोष' हे देवे ।
'अवंतस' मुकुट के साथ गेंद भी लेवे ।
ले चीजे बाहर आया, यही बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-१३२ ॥

सकुशल लौटते देखि, निराश छावे ।
फिर गुफा दूसरी में उसको भिजवाये ।
जीता असुर को वहाँ, यही बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-१३३ ॥

वहाँ पुष्प वस्त्र और छत्र चवंर युग पाया ।
ले भेंट अमोलक लौट शांति से आया ।
फिर भीन हुवे वेशांत, यही मैं सुनाऊँ ॥ प्रद्युम्न-१३४॥

अब भेजा तीसरी बार गुफा के मांहि ।
फुत्कार नाग की वहाँ विषैली आई ।
साहस कों देखकर हर्षित नाग दिखाऊँ ॥ प्रद्युम्न-१३५॥

अवतंस, वस्त्र, सिंहासन वस्तुयें दीनी ।
अरू सैन्य सुरक्षा-शिल्प की विद्यालीनी ।
स्वस्थान् आगया हर्षित, होय बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-१३६ ॥

चौथी बार बांबी में उसे भिजवाये ।
है असुर मकरध्वज उसे वहाँ मिल जावे ।
हुआ प्रखर पुण्य से हर्षित देव बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-१३७ ॥

मकर चिन्ह से चिन्हित ध्वज बकसावे ।
है मकरध्वज भी नाम तभी से पावे ।
लोटते देखि है चकित होते सुनाऊँ ॥ प्रद्युम्न-१३८ ॥

फिर अग्निकुंड युत पर्वत पर हैं आवे ।
जो हारेगा वह अग्निकुंड में जावे ।
स्वीकार शर्त करी खेलन लगे दिखाऊँ ॥ प्रद्युम्न-१३९ ॥

तब जान बूझ कर घर कुंड में जावे।
कर तुष्ट देव से कनकवस्त्र युगलावे।
पटधारी दग्ध नहीं हो, यही बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-१४०
अब मेषाकार गिरि पर खेलने आवे।
'प्रद्युम्न' हार कर मध्य में दौड़ लगावे।
कहे त्वरा देख सुर कुंडल युगम दिराऊँ ॥ प्रद्युम्न-१४१
फिर आम्रवृक्ष पर है, राजकुंवर चढ़ता।
है करके असुर से युद्ध, पराजित करता।
आकाश गमन की उससे मिली खड़ाऊँ ॥ प्रद्युम्न-१४२
अब बार आठवीं है, इकबन में आता।
गजरूप असुर को लड़कर, वहाँ हराता।
आधीन होयकहे. जब भो बुलावो आऊँ ॥ प्रद्युम्न-१४३

जाकी राखे साईंया मार सके ना कोय

है एक गिरि पर कुंवर आरोहण करता।
फिर भुजंग असुर के संग लड़ाई लड़ता।
हो तुष्ट असुर ने जो भी दिया बताऊँ ॥ प्रद्युम्न १४४
इक अश्व रत्न अरू दिव्य कवच है दीना।
विश्व मोहिनी अंगूठी साथ है लीना।
यों आया है, 'प्रद्युम्न' यही दिखलाऊँ ॥ प्रद्युम्न १४५।
आय 'श्रावमुख' गिरीपर असुरहराया।
कटिसूत्र और कंठी रत्नों को पाया।
क्या हुआ हाल बाद में, सभी मैं गाऊँ ॥ प्रद्युम्न १४६।

वन ब्रहान मे राजकुंवर है आवे।
फिर पुष्पधनुप जय शंख वहाँ से पावे।
उद्विग्नकारी था अरि को यही बताऊँ ॥ प्रद्युम्न १४७॥

अब पकंजवन में विधाधर ठिग आया।
कर पराजित बांध लिया यश पाया।
सुन दीन प्रार्थना छोड़ा उसे बताऊँ ॥ प्रद्युम्न १४८॥

तब उसने एक सुरूपा कन्या दीनी।
सह रूप बदलने की दो विद्या दीनी।
दे दिया हार मन इच्छित रूप बनाऊँ ॥ प्रद्युम्न १४६॥

फिर दैत्य 'कालवन' से जो कुछ भी पाया।
धनुवाण पुष्पमय पानी गुणमय लाया।
गुन गिने गये वे अद्भुत कर दिखलाऊँ ॥ प्रद्युमन १५० ॥

उन्माद युवतियों में भर देता पानी।
ज्वर हर देता वह देता मनहर वानी।
कर सके काम को वश में, गुण बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न १५१॥

मन मोहन रूप बनाने वाला पानी।
ये दिव्य शक्तियाँ मिलती जब पुनवानी।
पड़ गया नाम अब 'मदनकुंवर' दिखलाऊँ॥ प्रद्युम्न १५२॥

फिर भीम गुफा में राजकुंवर है जावे।
यशकारी शय्या पुष्पमयी है पावे।
अरु छत्र पुष्पमय पाये वहाँ सुनाऊ ॥ प्रद्युम्न १५३॥

अब सभी विपुल बन में मिल करके जावे।
अहितेषी बांधव अहित रात-दिन चाने।
वे कन्दुक क्रीड़ा करते, साथ बताऊँ ॥ प्रद्युम्न १५४ ॥

तब गेंद उछल कर गिरी विकट मनमाहीं।
हो निर्भय मन वह गया गेंद के तांई।
जो हुआ वहाँ पर हाल सत्य दरसाऊँ ॥ प्रद्युम्न १५५ ॥

था वृक्ष बड़ा ही "नग्म जयंती" तटपे।
नव युवती बैठी ध्यान लगा सिलपट पे।।
पहने थी सितपट कर में माला दिखाऊँ ॥ प्रद्युम्न १५६ ॥

टकटकी लगाकर कुंवर, देखता उसको।
युवती न देखती लेकिन किसी पुरुषको।
विद्याधर आया एक वहाँ बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न १५७ ॥

वह कहे भाग्य से आप यहाँ पर आये।
यह कौन बैठी सुस्वरूपा ध्याना लगाये।
वह कहे सर्व ही मैं वृतान्त सुनाऊँ ॥ प्रद्युम्न १५८ ॥

है विद्याधर 'नगनगर प्रभंजन' राया।
है 'वागदेवी' पटरानी उनकी जाया।
गुण रूप कला की खान सुता बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न १५६ ॥

नैमित्तिक कोई राजसभा में आय।
पति कौन सुता का होगा प्रश्न उठाया।
जो उसने बोला वही, तुम्हें बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न १६० ॥

इस घड़ी वार तिथी को जो आवे बनमें।
ये शुभ-शुभ लक्षण होवे जिसके तनमें।
इस कन्या का भावी वर बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न १६१ ॥

यह योग्य आप के नगर पधारो स्वामी।
विधि पूर्वक इसको स्वीकारो यशकामी।
उठ आये तीनों पुर में साथ वताऊं॥ प्रद्युम्न १६२॥

न सूचना:—

वे वन्धु मार्ग में खड़े, सोचते मन में।
वह गया हुआ मर गया, इसी ही वन में।
आता तो आ ही जाता, नहीं रूकाऊ॥ प्रद्युम्न-१६३॥

हो गया है वांछित सिद्ध हमारा।
खून किये विना ही अरि को हमने मारा।
मिल गया राज्य अब हमें, यही मैं सुनाऊँ॥प्रद्युम्न-१६४॥
खुश होकर के फिर गये नगर में सारे।
जा माताओं को वृत सुनाये प्यारे।
सुन सब को ही आनन्द हुआ बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न-१६५॥
जब यही सूचना 'कनकमला' ने पाई।
वह मूर्च्छित होकर गिरी, होश में आई।
जल बिना मीन सम तड़फी, वह बतलाऊँ॥प्रद्युम्न-१६६॥
यह सुनके हाल 'यमसंवर', बहुत घबराया।
फिर महलों में वह दौड़ा दौड़ा आया।
अब दे ता है आश्वासन, सुख उपजाऊँ॥ प्रद्युम्न-१६७॥
सुन पुन्यवान. वह कभी न, मरनेवाला।
वह किमी शत्रु से कभी न डरनेवाला।
सच मान रही क्यो, है यह वात उड़ाऊ॥ प्रद्युम्न-१६८॥
सुन वचन नाथ के धैर्य, उसे वंध जावे।
मन सुत दर्शन के लिये बहुत ललचावे।
पल वीत रही युग तुल्य, यही उपमांऊ॥ प्रद्युम्न-१६९॥

प्रद्युम्न का आगमन:—

प्रद्युम्नराज' इत 'नगपुर' को है आया ।
दिल देख सभी का बहुत-बहुत हरषाया ।
मिल गई बराबर जोड़ी, कहे बतलाऊँ । प्रद्युम्न
शुभ लगन घड़ी में परिणय किया गया है ।
जो देना था वह सब कुछ, दिया गया है ।
ससुराल में दिन बीते सुख बरताऊ ।। प्रद्युम्न-१५
अब मत पिता को याद सताती मन को ।
,नगपुर, न चाहता है 'प्रद्युम्न' गमनको ।
क्या हुये पाहुणे बोलो, कहीं टिकाऊ ।। प्रद्युम्न-
चल 'भीम' नाम मे वन में, आकर ठहरा ।
अब "शकरासुर" आया गुस्सा गहरा ।
ठन गया युद्ध परस्पर, तुम्हें दिखलाऊँ ।। प्रद्युम्न-१७
'प्रद्युम्न कुंवर' ने 'शकटासुर' को हराया ।
फिर कामधेनु अरू रथ पुष्पों का पाया ।
रथ बैठा दंपति आते यही बताऊँ ।। प्रद्युम्न-१८
भेज सचिव को पितु को खबर कराई ।
यह सुन के प्रजा बहुत हरषाई ।
हर्षित है माता और पिता बतलाऊँ ।। प्रदयुम्न-१९
सम्मान सहित लाने को, सेना सजाई ।
फिर धुमधाम से बजी वहाँ शहनाई ।
यथा योग्य सतकार है कीना दिखाऊँ ।। प्रदयुम्न-

तव उसका वैभव देख सभी चकराये।
सव करे प्रशंसा वहुत-वहुत गुण गाये।
है पूर्वजन्म का पुण्य सही वतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-१७७ ॥
वड़े घुम-धाम से सभी, नगर में लावे।
लग गई दौड़ तव हृदय, अनोखा छावे।
जोड़ी देख क्या कहते सभी दरसाऊँ ॥ प्रद्युम्न-१७८ ॥
ला राजसभा में सिंहासन विठलाया।
फिर वन्दन कीना, पितु ने उर से लगाया।
"चिर जीवो" ऐसी आशीष दीनी वताऊँ ॥ प्रद्युयुम्न-१७९ ॥
चल महलों में माँ को शीशझुकावे।
सुत दर्शन से माँ फूली नहीं समावे।
क्या माँ को मन को शब्दाकार सजाऊँ ॥ प्रद्युम्न-१८० ॥
सम्मुख अपने शचि को तुच्छ वतावे।
झट उठा पुत्र को अपने गले लगावे।
वहाँ वैठ गया सुत माँ के निकट वताऊँ ॥ प्रद्युम्न-१८१ ॥

तैर से और :—

दुर्जेय जगत में काम-वासना भारी।
इसके द्वारा ही जाती है मति मारी।
दुःख पाते हैं इससे ही, सभी वताऊँ ॥ प्रद्युम्न-१८२ ॥
विवेकवती थी रानी, काम से हारी।
प्रद्युम्न छवि को देख, जावे वलिहारी।
उन्मत्त वनी क्या करती है वतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-१८३ ॥

१ खणमित्र सुक्खा· वहुकाल दुक्खा,
पगाम दुक्खा, सणिगाम सुक्खा।
संसार मोक्खस्स, विपक्ख, विपक्ख भूया।
खाणो अणत्थाण ३ काम भोग।

२ न कठोर न वा तीक्ष्णा,-मायुधं पुष्प धन्वनः।
तथापि जितमेवासी-दमुना भुवन त्रयम्॥

मुख आकृति बदल गई है छिन में सारी।
सुत पूछ रहा पर बोली ना महतारी।
प्रद्युम्न समझने सका न कुछ समझाऊँ॥ प्रद्युम्न
उठ तुरत वहाँ से निजी महल में आवे।
तब काम वासना महिपी की बढ़ जावे।
तज लाज बनी मतवाली मैं बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न
तन ताप शांति करने को लेप लगावे।
उससे तो काम लेकिन और बढ़ जावे।
अज्ञानो बाहर खोजे, शांति बताऊँ॥ प्रद्युम्न
फिर राजा सुनकर तुरत महल आवे।
अत्यन्त निपुण वहाँ राजवैध बुलवाजे।
नाड़ी में रोग नहीं था, यही समझाऊँ॥ प्रद्युम्न-

रान्नी बोल पड़ी:—

बढ़ रही व्याधि दिन रात, शाति नहीं पावे।
"प्रद्युम्न कूंवर" की इकदिन राय बुलावे।
तू क्यों न संभाले माँको, जाय बताऊँ॥ प्रद्युम्न-

क्या हुई वात (मैं) पितु समझा, मैं नहीं पाया।
उपकार माँ का आगमन में वहुत गाय।।
सुन माँ ऋण से उऋण ना हो वतलाऊँ॥ प्रद्युम्न १८६ ॥

जा मातृ अवस्था देखि, पुत्र अकुलावे।
नतमस्तक होकर अश्रुधार वरसावे।
हा, दैवा हुआ क्या समझ नहीं मैं पाँऊ॥ प्रद्युम्न-१६० ॥

नाड़ी देखीं पर रोग, समझ नहीं आया।
वतलाओ क्या कुछ कष्ट आपने पाया।
यह नहीं प्रकट की वात, तुझे वतलाऊँ॥ प्रद्युम्न-१६१ ॥

फिर पाय इशारा सभी, वहां से जावे।
तव अपने मन के भाव मात वतलावे।
सुन चकित हुआ 'प्रद्युम्न कुंवर' वतलाऊँ॥ प्रद्युम्न-१६२ ॥

वह वोली तुम हो पूर्वक जन्म के स्वामी।
दो प्रणय भीख भरतार, रहे क्यों खामी।
सुन कहता धिक्धिक्! मात तीर्थ वतलाऊँ॥ प्रद्युम्न-१६३ ॥

मैं मात नहीं, तुम पुत्र नहीं हो मेरे।
वन में से लाई, उठा स्वयं के डेरे।
है जन्मदायिनी कोई अन्य वतलाऊँ॥ प्रद्युम्न-१६४ ॥

जो वोई सुधा की वल्लरी फल है चखना।
क्या प्रान दान का फल जीवना का हनना।
माँ माफ करो, मन वशमें, यही सुनाऊँ॥ प्रद्युम्न-१४५ ॥

मैं समझा अब जननी तुम, नहीं हो मेरी।
पर, पालन से हो मातृ-तुल्य तुम मेरी।
धर्म नहीं मैं प्राण दे ऋण को चुकाऊं॥ प्रद्युम्न-१९९।
राजकुंवर माता को, बहुत समझावे।
पर कामतुर माँ नहीं समझने पावे।
है मात! तुझे धिक्! धिक् मैं आज सुनाऊं॥ प्रद्युम्न १९७।
राजकूँवर के मन में घृणा बहु आई।
क्या जाति स्त्रियों की ऐसी होती आई।
उठ चला बाग में आया, मैं बतलाऊं॥ प्रद्युम्न-१९८।

स्नेह का कारण :—

वहाँ चरण-करण के पालक मुनि को पावे।
मुनि ध्यान मग्न थे देख कुंवर हरषावे।
करि वन्दन मुनि को जीवन-धन्य बनाऊं॥ प्रद्युम्न-१९९।
फिर खोल ध्यान फिर मुनिजी, बोध दिरावे।
कहे नोति धर्म सह सदाचार अपनावे।
है वाणी आपकी सत्य, यही मैं गाऊं॥ प्रद्युम्न २००॥

दोहे:

जो होवे कुछ रोग तो, हो जावे वह शान्त।
काम व्यधि से थी बनी, रानीजी आक्रान्त॥ ७॥
वैद्यों द्वारा दी गई, गई दवा बेकार।
ऐसे रोगों का नहीं, हो सकता उपचार॥ ८॥
मन शंका है कुछ समाधान फरमावें।
दुर्भाव हुये क्यों माँ को आ बतावें।
सुन मुनिवर बोले, सुनलो साफ सुनाऊं॥ प्रद्युम्न-२०१।

तव मात पूर्व में हेम की थी पटरानी।
तू 'मधु' या तेरी थी वेहोश जवानी।
फुसलाकर उसको रानी वनाई वताऊँ ॥ प्रद्युम्न-२०२ ॥

वही माता वनी फिर स्नेह पूर्व का जागा।
है माता-पिता फिर कौन ? प्रश्न यह जागा।
कहते मुनिवर जग की दशा वतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२०३ ॥

फिर तीव्र लालसा जान मुनिजी वतावे।
श्री "कृष्ण" पिता "रूक्मिणी" माता कहलावे।
जो हुआ आज तक मुनि ने सुनाया वताऊँ ॥ प्रद्युम्न २०४ ॥

शिशु वय मे मातृ वियोग कहाँ से पाया।
था 'कोशाम्बी' का वड़ा "महीश्वर राया"।
मोहिनी थी पटरानी उसी की वताऊँ ॥ प्रद्युम्न२०५ ॥

इक दिवस वाग में फाग खेलने जावे।
रंग गये हाथ कपड़े ओ अंग सुहावे।
थे वहाँ मयूरी के दो अंडे वताऊँ ॥ प्रद्युम्न-२०६ ॥

इक अंडे को रानी ने हाथ उठाया।
उस अंडे पर कर रंग लगा सुखदाया।
सेवे न मयूर उसको साफ वताऊँ ॥ प्रद्युम्न-२०७ ॥

सोलह घड़ी के वाद वादल जव वरसा।
धुल गया रंग तव उसकी माँ ने फरसा।
यह अंतराय वंध गई यहाँ पर गाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२०८ ॥

हास्य-विनोद में कर्म बहुत बंध जावे।
रो रो कर प्राणी उनका फल भुगतावे।
तुम बिना विचारे कार्य करो बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-२०६

इक वार पधारी साधवी बोध सुनावे।
सुन कर के रानी दीक्षा-व्रत अपनावे।
की घोर तपस्या संचित कर्म खपाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२१० ॥

है अंत समय में मास संथारा ध्याया।
कर काळ बारवें देवलोक को पाया।
च्यव वही 'रूक्मिणी' बनी तुम्हें बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२११ ॥

सोलह घड़ी का विरह उसने जो दीना।
फल उसका अपने पुत्र विरह से लीना।
छुटकारा भोगे विना नहीं बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२१२ ॥

'प्रद्युम्न कुंवर' से कहते हैं मुनिराया।
है मात पास दो विद्या, हो मन चाया।
रोहिणी अरु प्रज्ञाप्ति, हो मन चाय ॥ प्रद्युम्न-२१३ ।

फिर मात मोह वश विद्या तुमको देगी।
मनवाञ्छित सिद्धि वे विद्या कर देगी।
सुन के हर्षित हुआ, कुंवर दिखलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२१४ ।

धर दिया दूर संदेह, अनुग्रह कीना।
कर चरण-वन्दना अपना पथ ले लीना।
कह उत्सुकता से मात-निकट मैं जाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२१५ ।

-नॉं हो गुरूणी हो:—

निकट माता के जाय, प्रणाम न कीना।
जा सम्मुख मुख को परम निरख है लीना।
यह देख महिपी कहती क्या बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२१६ ॥
अति पुण्य पुरंदर मुझे, कृतारथ कीना।
यह तन-मन-धन चरणों में अर्पण कीना।
मैं आज्ञाकारी दासी सही सुनाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२१७ ॥
यह कार्य नहीं है सरल, सुनो महारानी।
जब ज्ञात होय तब होगी, बहु हैरानी।
तब एकाकी मैं कहाँ ठहरने पाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२१८ ॥
अब इसकी चिन्ता करो न हे स्वामी।
दो विद्या है मम पास बड़ी ही नामी।
फिर बाल न बाका कोई, करे दिखाऊँ ॥ प्रद्युम्न-६१६ ॥
अभिलाषा हो पूरण तो, देवूं विद्या।
है कौन कौन सी निकट आपके विद्या।
प्रज्ञाप्ति रोहिणी को मैं शक्ति बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-२२० ॥
है प्राज्ञप्ति से सेना विनिर्मित होती।
मन चाहा सुंदर रूप रोहिणी देती।
हो जायेगें फिर आप अजये बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-२२१ ॥
पाने को विद्या मिष्ट वचन वह बोला।
क्या कभी आपकी आज्ञा से मैं डोला।
दे विद्या सेवक करलो काम बजाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२२२ ॥

कामान्ध "कनकमाला" ने स्वीवृति दीनी।
वे विद्याये फिर विधिवत् बतला दीनी।
कुंवर कहे मैं इन्है साधकर आऊँ॥ प्रद्युम्न-२२३॥
वे शीलवान के तुरंत, सिद्ध हो जावे।
फिर हर्षित होकर महिषी निकट वह आवे।
नत होकर कहता पाई कृपा से बताऊँ॥ प्रद्युम्न-२२४॥
नत देख कुंवर को दंग रही वह रानी।
मैं चरण सेविका, देख प्रणत अकुलानी।
हे! स्वामिन् सेवा चरणों की मैं चाहूँ॥ प्रद्युम्न-२२५॥
रानी वचन को सुन, कुंवरजी कहते।
नहीं देखी मात आप, ही माता रहते।
सुत सम्मुख ऐसा बोलो मत असुहाऊं॥ प्रद्युम्न-२२६॥
ढ़ह गये रानी के महल, कलपना वारे।
करबद्ध होय वहू विनय करे सुन प्यारे।
जो की है प्रतिज्ञा पालन करो बताऊं॥ प्रद्युम्न-२२७[1]॥
अब बुद्धि लुप्त हो गई, आपकी सारी।
इस कारण से ही दोप लगाती भारी।
दे प्राण प्रतिज्ञा अपनी सदा निभाऊं॥ प्रद्युम्न-२२८।
मैं सेवक होऊं यही प्रतिज्ञा लीनी।
नही धर्मभ्रष्ठ करने की प्रतिज्ञा लीनी।
कर अधम कार्य मैं पतितन तुम्हैं बनाऊँ॥ प्रद्युम्न-२२९॥

(१) "न निश्चितार्थाद्धं निरमन्ति धीराः"

ये नीच कार्य जिन लोगों ने भी कीने।
क्या कभो किसी ने शुभफल उनके लीने।
माँ विद्यागुरिणी बनी आप बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२३०॥

रूप बदला :—

यह सुनकर रानी विकट रूप को धारे।
चट पकड़ कुंवर का पल्ला खड़ी सहारे।
वह पल्ला छुड़ाके भागा, झट बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-२३१॥
पीछे से रानी धरती पर गिर जावे।
और छाती माथा पीट पीट चिल्लावे।
हा दे गया धोखा छलिया मुझे सुनाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२३२॥
उस छली कुंवर का बदला मैं अब लूंगी।
यदि न लिया तो विद्याधरी न रहूँगी।
यह सोच के रचती त्रिया चरित्रदिखलाऊँ ॥प्रद्युम्न-२३३[1]॥
सुन रूदन उसी का सौत, दासियाँ आवे।
रोने का कारण पूछे पर न बतावे।
है कहाँ कुक्करी सम बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-२३४॥
फिर समझाने पर समझ वह नहीं पावे।
इक दासी नृप को तुरत बुलाने जावे।
तब राय वहाँ पर आय, यही बताऊँ । प्रद्युम्न-२३५॥

१—स्त्रियो ह्यकरूणा· क्रूरा,–दुर्मर्षा· प्रिय·-साहसाः ।
घ्नन्त्यल्पार्थे पि विश्रब्ध-पति भ्रातरमप्युत ॥ १॥

रानी राय को देखि बहुत चिल्लाई।
जब पूछा तब वह जोरों से झल्लाई।
मैं पुत्र वधू हूँ छुना नहीं बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-२३६॥

सुन चकित बना नृप समझ कुछ नहीं पाया।
बस जिसे आपने शीस चढ़ाया।
उसने ली मेरी इज्जत, यह सुनाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२३७॥

किसने किया यह काम जरा तो बताओ।
है जिसको पाला पुत्र-भाति, फल पाओ।
जो उसको मारो, तो मैं प्राण टिकाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२३८॥

"प्रद्युम्न" हाय यह महा नीच है बनता।
यह प्रकट होय तो क्या बोलेगी जनता।
है प्रिये! उसे निष्प्राण ही तुझे दिखाऊँ ॥प्रद्युम्न-२३९[२]॥

गुप्त योजना—

नृप अन्य सुतों को बुलवा, कर फरमावे।
जीते जी उसके राज्य नहीं मिल पावे।
छुप उस को मारो, मैं विश्वास दिलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२४०॥

वे पितृ-वचन सुन बने, अंचभित कहते।
क्यों कहते यों, जो जिस पर मरते रहते।
मन चाही बातें मिली स्वतः! बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-२४१॥

२—अनुचित कार्यारम्भः, स्वजनविरोधी वलियसि स्पर्धा,
प्रमदाजनं विश्वासो, मृत्युद्वारिणिचत्वारो ॥ २॥

हम कर देंगे यह काम, भरा हुंकारा ।
युवराजा बनने का मिल गया इशारा ।
"यमसवर" खुश हो गया, महल बतलाऊं ॥प्रद्युम्न-२४२ ॥

वे कपटी-मित्र बने हैं उसके प्यारे ।
पुण्योदय से तब देवी करे इशारे ।
सुन सावधान वह करता कार्य सुनाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२४३ ॥

कर निर्णय क्रीड़ा करने, को सब आये ।
आ अन्ध कूप की ओर सभी खुश पाये ।
गिरा कूए में करदें नष्ट बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-२४४ ॥

यह मनोभावना जानी, विद्या द्वारा ।
क्या पुण्यवान यों जा सकता है मारा ।
निज रूप बनाया काई, काम चलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२४५ ॥

वह नकली कुंवर खेल. रहा है बाजी ।
वे सभी हो रहे मन ही मन में राजी ।
चढ गये वृक्ष पर सारे, साथ सुनाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२४६ ॥

सब उस कूए में कुदे मिलकर भाई ।
प्रद्युम्न कुंवर की सबने खोज लगाई ।
वह हाथ नहीं आया है रूप बनाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२४७ ॥

जो कुछ भी अबतक किया साथ मे मेरे ।
ये आज आ गये यहाँ हाथ में मेरे ।
मैं इनको सारा फल तत्काल चखाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२४८ ॥

उतनो ही ऊंची एक शिला बनवावे ।
ढंक, उससे पैर चिपा, औंधे लटकावे ।
वे, दुःख के मारे, रोते हैं बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२४९॥
उनमें से अनुज इक किसी तरह बच जावे ।
दुर्दशा देखि के पिता निकट वह आवे ।
कहे भ्राताओं के प्राण बचाओ, सुनाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२५०॥
महाराजा कहते इतना क्यों घबराता ।
जो बनी बात वह क्यों न साफ बतलाता ।
कुँए में डाल दिया सबको दिखलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२५१॥
सुन आग बबूला 'यमसवंर' बन जावे ।
वे अपने सेनापति को वहाँ बुलावे ।
तुम चलो, तुरत मैं आया, हुक्म सुनाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२५२ ॥

मूल सम्बन्ध गाथा—

नृप पहुँचा, बोला दुष्ट ! कहाँ तू छिपता ।
लड़ने को आजा जो तू हिम्मत रखता ।
अब तेरी करनी के फल तुझे चखाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२५३। मिल
क्या शील बचाने से मैं भो अपराधो ।
क्यों मेरे पीछे सेना बड़ी सजा दी ।
क्या असलियत का पता इन्हें बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२५४
क्या हुवा पाप जो बाप स्वय चढ़ आये ।
जो हुआ, क्या उसका पढ़कर आये ।
कुछ बोलुं ? मौन रहूँ ? या सैन्य सजाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२५५

रण छिड़ा रक्त की नदियाँ, बहकर निकली।
नृप सेना की बस वहाँ हो गई ढ़िगली।
राजा को पकड़ने आया कुंवर बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-२५६ ॥
रण छोड़ नृपति महिषी के, सम्मुख आवे।
कहे, कुँवर नहीं मुझ से तो जीता जावे।
दे विद्या जिससे अपने प्राण बचाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२५७ ॥
वे विद्याये तो मेरे पास नहीं है।
क्या होता मेरा भी विश्वास नहीं है।
वे गईं कहाँ ? तुमसे सुनना चाहूँ ॥ प्रद्युम्न-२५८ ॥
उस धूर्त कुवर ने ही वे विद्या लीनी।
बनकर मन भोली मैंने ही दे दीनी।
छिप सका न उसका दोष रोष भड़काऊँ ॥ प्रद्युम्न-२५६ ॥
राजा के मन को सीधा रास्ता सूझा।
कर रही प्रजा "प्रद्युम्न" पुत्र की पूजा।
की मैंने सारी भूल समझ मैं आऊँ ॥ प्रद्युम्न-२६० ॥

मिलन और हर्ष—

है रचा इसीने त्रिया-चरित्र यह भारी।
विश्वास किया वह भूल हो गई भारी।
क्या करूँ कुँवर को जीत नहीं मैं पाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२६१ ॥
संकल्प से ऐसे घिरा, लौट वह आता।
फिर अनायास ही समाधान हो जाता।
हो गये नष्ट अब भाव, विरोधी बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-२६२ ॥

उतनी ही लंबी एक शिला बनवावे।
ढंक, उससे पैर चिपा, औंधे लटकावे।
वे, दुःख के मारे, रोते हैं बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२४९॥
उनमें से अनुज इक किसी तरह बच जावे।
दुर्दशा देखि के पिता निकट वह आवे।
कहे भ्राताओं के प्राण बचाओ, सुनाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२५०॥
महाराजा कहते इतना क्यों घबराता।
जो बनी बात वह क्यों न साफ बतलाता।
कुँए मे डाल दिया सबको दिखलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२५१॥
सुन आग बबूला 'यमसवंर' बन जावे।
वे अपने सेनापति को वहाँ बुलावे।
तुम चलो, तुरत मैं आया, हुक्म सुनाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२५२॥

मूल सम्बन्ध गाथा—

नृप पहुँचा, बोला दुष्ट! कहाँ तू छिपता।
लड़ने को आजा जो तू हिम्मत रखता।
अब तेरी करनी के फल तुझे चखाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२५३॥
क्या शील बचाने से मैं भी अपराधी।
क्यों मेरे पीछे सेना बड़ी सजा दी।
क्या असलियत का पता इन्हें बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२५४॥
क्या हुवा पाप जो बाप स्वय चढ़ आये।
जो हुआ, क्या उसका पढ़कर आये।
कुछ बोलुं? मौन रहूँ? या सैन्य सजाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२५५॥

रण छिड़ा रक्त की नदियाँ, बहकर निकली।
नृप सेना की बस वहाँ हो गई ढ़िगली।
राजा को पकड़ने आया कुवर बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-२५६ ॥
रण छोड़ नृपति महिषी के, सम्मुख आवे।
कहे, कूँवर नहीं मुझ से तो जीता जावे।
दे विद्या जिससे अपने प्राण बचाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२५७ ॥
वे विद्याये तो मेरे पास नहीं है।
क्या होता मेरा भी विश्वास नहीं है।
वे गई कहाँ? तुमसे सुनना चाहूँ ॥ प्रद्युम्न-२५८ ॥
उस धूर्त कुवर ने ही वे विद्या लीनी।
बनकर मन भोली मैंने ही दे दीनी।
छिप सका न उसका दोप रोप भड़काऊँ ॥ प्रद्युम्न-२५९ ॥
राजा के मन को सीधा रास्ता सूझा।
कर रही प्रजा "प्रद्युम्न" पुत्र की पूजा।
की मैंने सारी भूल समझ में आऊँ ॥ प्रद्युम्न-२६० ॥

मिलन और हर्ष—

है रचा इसीने त्रिया-चरित्र यह भारी।
विश्वास किया वह भूल हो गई भारी।
क्या करूँ कुँवर को जीत नहीं मैं पाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२६१ ॥
संकल्प से ऐसे घिरा, लौट वह आता।
फिर अनायास ही समाधान हो जाता।
हो गये नष्ट अब भाव, विरोधी बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-२६२ ॥

'प्रद्युम्न' कूंवर यों सोचे मनके माहीं ।
यह किया अकारज, लड़ा पिता से ।
उपकार है कितना उसको नहीं भुलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२॥३॥
अब मुझे पराजित होना, हार नहीं है ।
जो जीतु तो भी जग व्यवहार नहीं है ।
जा उनके चरणों में निज, शीश झुकाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२॥४॥
आ रहा इधर नृप, कुंवर उधर से आया ॥
आते ही उसने, अपना शीश नवाया ।
मैं पूत कपूत बना हूं, माफी चाहुं ॥ प्रद्युम्न-२॥५॥
उनके बन्धुजनों के उसने, बंधन खोले ।
प्रद्युम्न से हम ना कभी लड़ेगें बोले ।
अब मिलकर सारे पुर में आते बताऊं॥ प्रद्युम्न-२॥६॥

आत्मग्लानि :—

मन मिलने पर है मिलना, कठिन हो जाता ।
कर प्रशंसा पाता ।
यह सुन परिजन का मन मुरझाया सुनाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२॥७॥
महलों में आदर किसी से नहीं पाता ।
वह अपने मन में दुःख पाता सकुचाता ।
नहीं खाना पीना रुचता, मैं बतलाऊं ॥ प्रद्युम्न-२
जा उपवन में मन सोचे, कोई न अपना ।
है सारी दुनिया एक घड़ी, का सपना ।
आये हैं नारद, इतने में सुनाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२॥९॥

चिन्तातुर उसको देख नारदजी बोले।
मैं चिन्ता जानूं जो तू मुखड़ा खोले।
नारद को देखकर मुदित हुआ बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-२७० ॥
करि नमन कहे जगमें ना, कोई मेरे।
बन्धु मात पितु सब ही, अरिजन मेरे।
रसहीन भारमय जीवन सत्य बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-२७१ ॥
इस जीने से है श्रेष्ठ न क्या मर जाना।
क्या अच्छा माँ को कामातुर कर पाना।
इस रूप-संपदा को मैं दोषी बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-२७२ ॥
सुन नारद का है हृदय बहुत भर आता।
ऐसा न बोल तू पुण्यवान कहलाता।
तव परिजन का मैं परिचय अल्प सुनाऊँ॥ प्रद्युम्न-२७३ ॥
फिर कृष्ण आदि का परिचय उसको दीना।
अब चलो द्वारिका कौल यही कर लीना।
मैं मात-पिता की अनुमति लेकर आऊँ॥ प्रद्युम्न-२७४ ॥
हो विनीत आज्ञा शीघ्र ही लेने जाना।
मत देर लगाना लौट तुरत ही आना।
कर पुरी द्वारिका मैं तुमको पहुचाऊँ॥ प्रद्युम्न-२७५ ॥

न्भरी बिदाई :—

द्युम्न कुंवर उठ पास पिता के आवे।
आखों मे आँसू छाय विकल हो जावे।
कर कर के बोला क्षमा आपसे चाऊँ॥ प्रद्युम्न-२७६ ॥

यह देख नृपति कुछ नहीं समझने पावे।
तब कुंवर शीघ्र ही गमन बात बतावे।
यह जान राय बहु दुःखी हुये दरसाऊँ॥ प्रद्युम्न-२
फिर मात 'कनकमाला' के पास आवे।
अविनय की माफी मांगी मन हरसावे।
नहीं भूलूँगा उपकार, सदा गुण गाऊँ॥ प्रद्युम्न-२
जाने में मेरा मन है, व्याकुल होता।
इस विरह काल में, कोन धैर्य नहीं खोता।
दो आज्ञा शुभ आशीष, यही मैं चाहूँ॥ प्रद्युम्न-२
सुन रानी की आंखों मे पानी आया।
साचा यह आखिर है तो पुत्र पराया।
जायेगा हमको छोड़ यही दिखलाऊं॥ प्रद्युम्न-२
अन्य माताओं को जाय प्रणाम है कीना।
फिर बन्धुओं का पुष्ट-प्रेम है ले लीना।
मिल कहा स्त्रियों से, साथ नहीं ले जाऊं॥ प्रद्युम्न-२
जब अवसर होगा मैं बुलवा लूंगा।
मैं कभी किसी रानी को नहीं भूलूगा।
जा पीहर सुख से रहना यही सुनाऊं॥ प्रद्युम्न
सुन अश्रुवार अभिषेक, कराती कहती।
हो मंगलमय पथ यही, कामना रहती।
प्रिय हमें भूलना नहीं, यही बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न

यों मिलजुल सव के साथ गमन कर जाता।
हो राजमार्ग से नारद मुनि पै आता।
पुरजन मन व्याकुल वना वहुत वतलाऊँ॥ प्रद्युम्न-२८४ ॥
जन जिज्ञासा को मुनि ने शांत वनाया।
घर जाने की विधि फिर कारण वतलाया।
था हृदय अनोखा विरह व्यथा उपजाऊँ॥ प्रद्युम्न-२८५ ॥
जनता के सम्मुख हाथ कुंवर ने जोड़े।
थे खड़े सभी वे रोये, थोड़े-थोड़े।
हो गया विदा, कर नमस्कार वतलाऊँ॥ प्रद्युम्न-२८६ ॥
कुंवर पाय संकेत विमान में आवे।
तव पक्षी वन वह यान गगन उड़ जावे।
उसके विन सवही शून्य हुआ दिखलाऊँ॥ प्रद्युम्न-२८७ ॥
नर पुन्यवान के सभी मित्र वन जावे।
नर पुन्यवान हो पग पग निधियाँ पावे।
मुनि नारद जैसे गुण गाते सुनाऊँ॥ प्रद्युम्न-२८८ ॥

धा विस्मात्त लो :—

जीर्ण विमान को देखि, कुंवरजी सोचे।
नव यान भेंट मैं करूँ, यही आलोचे।
कर पदाघात झट तोड़ा यान दिखाऊँ॥ प्रद्युम्न-२८९ ॥
मुनि ! आप राजगुरू के पद को शोभते।
क्यों यान पुराना लेकर, आते जाते।
हंस कर के नारद वोले सुनाऊँ॥ प्रद्युम्न-२९० ॥

सुनो वृद्ध पुरुष के भला, बुरा क्या होता।
मैं वृद्ध वृद्ध ही यान है, शोभित होता।
तू युवा युवा सा जोश बताता सुनाऊँ ॥ प्रद्युम्न
पर जैसा भी था कार्य, निष्फल ही जाते।
अब अटके कारज नहीं, पहुँचने पाते।
क्यों चिंतित होते नया यान बनवाऊँ ॥ प्रद्युम्न-
वह रत्न खचित रमणीक विमान बनावे।
यह भेंट देख मुनि नारद मन हरपावे।
अब चले बैठकर भानु समान दिखाऊँ ॥ प्रद्युम्न-
मुनि के कहने से तीव्र, वेग है करता।
अब लुढ़क कमंडल इधर-उधर से गिरता।
तब धीमि गति से यान चलाता दिखाऊँ ॥ प्रद्युम्न-

एक नया झंझट :—

लाघे है पर्वत अटवी, खदिरा आई।
सिल बतलाई जो सासो, से हिलवाई।
आ आगे सेना चलती देख बताऊँ ॥ प्रद्युम्न
कुंवर देखकर ऐसा, प्रश्न उठावे।
आ रही कहां से ? और कहां पर जावे।
सुन 'नारद' कहते सारी बात सुनाऊँ ॥ प्रद्युम्न-
'भामा' ने "रुक्मिणी" संग शर्त है कीनी।
इस तरह पूर्व की बात बतला दीनी।
ले 'सुता' उदधि, "दुर्योधन" जाता बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-

जाने से इसके "रुक्मिणी' दुःख पायेगी।
क्या बुद्धि तुम्हारी कुछ कर दिखलायेगी।
सुन के कुंवर को आया जोश दिखलाऊँ॥ प्रद्युम्न-२९८॥
अब मेरे रहते कौन, दुःख दे सकता।
मैं विद्या-बल से कौतुहल अब करता।
बस उस लड़की को अभी उड़ा ले आऊँ॥ प्रद्युम्न-२९९॥
सुन नारद मुनि का मन खुश खुश हो जावे।
तुम बिना मात को दुःख से कौन बचावे।
शीघ्र ही जाओ, देखूँ यहीं से बताऊँ॥ प्रद्युम्न ३००॥
जो करना था वह बाबा, को समझाया।
बन गया भील खुद, करली काली काया।
सेना को आड़ा खड़ा हुआ दिखलाऊँ॥ प्रद्युम्न-३०१॥
'कर चुका यहा से फिर तुम आगे बढ़ना।
समझाया सभी ने अच्छा नहीं अकड़ना।
आ गया दुर्योधन स्वयं, वहीं बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न-३०२॥
पूछा है उससे क्या है, बात बताओ।
दे चौकी का कर आनन्द से तुम जाओ।
सुन दुर्योधन मन कुपित बना दरसाऊँ॥ प्रद्युम्न-३०३॥
यह वणिक जनों का काम, नहीं है हमारा।
क्या लाये थैलियाँ भर, जा कर दू प्यारा।
तब अमगमन की आशा छोड़ो बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न-३०४॥

चुंगी।

तू नहीं जानता रोक, लिया अनजाने।
पथ छोड़ हमें तू दे अब आगे जाने।
सुन कहा भील ने सुन लो साफ सुनाऊँ॥ प्रद्युम्न-३०
है मुझे कृष्ण की आज्ञा कर लेने की।
जो मुझे लगे प्रिय वस्तु वही लेने की।
है ऐसी हुई क्या मैत्री, सुनना चाहूं॥ प्रद्युम्न-३०
क्या तुम न जानते? कृष्ण, पुत्र हूं प्यारे।
सुन हंसा, कहाँ है कितने तुमसम सारे।
हूँ चन्द्र सरीखा मैं ही एक बताऊँ॥ प्रद्युम्न-३०
हां धन्यवाद! जो सत्य, बात है कहता।
हूँ चिन्तामणि सम, पैर मेरे जो पड़ता।
होवे काम सभी संपूरण, उसके गाऊँ॥ प्रद्युम्न-३०
है योग्य बड़ा!! हो पूजा [1]पदत्राणों से।
वह पूजे, जिसको मोह न हो प्राणों से।
चुप रह रे भीलड़ा नहीं तो बाल उड़वाऊँ॥ प्रद्युम्न ३०
फिर कुपित होय के कहता है भीलराजा।
ले नशा उतारूँ आ जा तू भी आ जा।
सुन वचन दुर्योधन समझा, जो बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न-३०
यह भील नहीं है, बहुत बड़ा नर कोई।
क्या आप चाहते हमें, बता दो वोही।
जो मांगोगे वह अभी, तुम्हें दिलवाऊँ॥ प्रद्युम्न-३०
जो मुझे रुचेगी, वही, वस्तु मैं लूंगा।

---

१ जूतों से।

दो राजकुमारी, पीछे अभी हटूंगा।
सुन दुर्योधन खीजा है बहुत सुनाऊँ॥ प्रद्युम्न-३१२॥
ओ मूर्ख। कहींके! ये क्या तू है बकता।
मैं लूँगा इसे इन्कार कौन कर सकता।
निर्लज्ज! जरा तू स्वरूप देख बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न-३१३॥
हे राय दुर्योधन! रूप, जाति न देखो।
गुण ग्राही बनकर सब गुण मुझमें देखो।
गुणवान लगू तो दे दो सुता सुनाऊँ॥ प्रद्युम्न-३१४॥
सुन, छोटे मुंह जो बड़ी बात है करता।
वह खावे चपेटा, कीट तुल्य फिर मरता।
निज शक्ति देखकर मांग, तुझे मैं दिराऊँ॥ प्रद्युम्न-३१५॥
समझाया लेकिन माग वह नहीं छोड़े।
पा, आज्ञा सैनिक इसे मारने दौड़े।
वे हटा नहीं पाये हैं पैर अड़ाऊ॥ प्रद्युम्न-३१६॥
अब सेना शस्त्र चलाकर मार रही है।
पर भीलराज पर होता वार नहीं है।
उत्तर में धनुटंकार किया थर्राऊँ॥ प्रद्युम्न-१३७॥
फिर एक बाण से सहस बाण हो जाते।
मर जाते, जो भी इसके सम्मुख आते।
कुहराम मचा, भागे जन जान बचाऊँ॥ प्रद्युम्न-३१८॥

कुंवरी ले आया :—

इत शैल हिलाया, शिखर टूट कर गिरते।

पर दबकर नीचे नहीं है कोई मरते।
कुंवर वहां आतंक फैलाये बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-३
जब सभी भगे तो, कुंवरी निकट वह आवे।
वह देख भील का रूप, बहुत चिल्लावे।
नहीं आया कोई ले नभ उड़ता दिखाऊँ ॥ प्रद्युम्न-३
इत नारद भी यह दृश्य देख हरषाया।
उदधि को बिठाके, कहता लक्ष्मी लाया।
आशीर्वचन ऋषि देते, तुम्हें सुनाऊँ ॥ प्रद्युम्न-३२१
चला बिमान तो, उदधि बहुत अकुलावे।
नारद यह देखि धीरज उसे बंधवावे।
मुनि बोले बेटे। तज दे रूप डराऊ ॥ प्रद्युम्न-३२२
प्रद्युम्न कुंवर ने असली, रूप बनाया।
यह देख उदधि ने मन ही मन सुख पाया।
क्यों लाये ? मुझको पूछा प्रश्न सुहाऊ ॥ प्रद्युम्न-३२३
बाबा ने सारी बाते, खोल कही है।
यह कृष्ण पुत्र है कोइ, रोलें[1] नही है।
तव सोई किस्मत जागू यही बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-३२४

नगरी की ओर :—

यों सुन करके हर्षित होती कुंवरी।
किया मारग तय फिर देखे अनुपम नगरी।
उत्सुक हो उठने लगा कुंवर दिखलाऊँ ॥ प्रद्युम्न ३२५

---

१ आवारा

नारद ने पूछा, चित्र लहर क्या आई ?
यह पुरी देखने की इच्छा हो आई।
एक बार देख के लौट अभी मैं आऊँ ॥ प्रद्युम्न-३२६ ॥
जाने नहीं दूंगा, तुमको, नगरी मांही।
क्या बात बता दो तुरत मुझे मुनिराई।
बाबा ने सारी बात कही बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-३२७ ॥
सुन बात कहे एक बार देख मैं आता।
ना ना करते भी यान बांध वह जाता।
झट पहुँच गया नगरी में यही बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-३२८ ॥

भानु को लजा दिया :—

मारग में देखा कुंवर, अनोखा भारी।
थी उसकी शोभा तीन लोक से न्यारी।
वह देख उसे विद्या से पूछे बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-३२९ ॥
है सतभामा का पुत्र भानु मन भाता।
है व्याह इसी का अभी जीमने जाता।
क्या शौक इसे है बतला, सुनना चाहूँ ॥ प्रद्युम्न-३३० ॥
घोड़े का, सुनकर बना स्वयं व्यापारी।
इक सुंदर घोड़ा ले आया कर त्यारी।
यह देख भानु ने पूछा उसे बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-३३१ ॥

घोड़े के खेल :—

तू कौन ? कहाँ से आया ? सह क्या लाया ?
मैं परदेशी हूँ भानुहेतु हयं लाया ।

मिल जायेगा मुंहमांगा मोल सुनाऊँ ॥ प्रद्युम्न-३३२

क्या मूल्य है इसका मुझे शीघ्र बतलाओ।
है मूल्य क्रोड़ मुद्रा जो लेना चाहो।
लो करो परीक्षा है यह अश्व विकाऊँ ॥ प्रद्युम्न-३३३

सुन भानुकुंवर घोड़े से उतर चढ़ा है।
वह घोड़ा उसको लेकर गगन उड़ा है।
अब लगा दिखाने नृत्य नये चकराऊँ ॥ प्रद्युम्न-३३४

नहीं संभल सका वह अश्व कुंवर से भारी।
गिर गया स्वयं, हंस रहे खड़े नर-नारी।
परदेशी बोला है यह, बात लजाऊ ॥ प्रद्युम्न-३३

सुन कहा कुंवर ने तू क्या शेखी मारे।
तू चढ़, मैं देखूँ कैसे इसे संभारे।
घोड़े पे चढ़ाओ तो मैं इसे नचाऊँ ॥ प्रद्युम्न-३३

सुन भानु सेवकों से यों है फरमावे।
दो इसे चढ़ा, इससे न चढ़ा जब जावे।
सेवक जन आये आज्ञा, शीश चढ़ाऊँ ॥ प्रद्युम्न-३३

निज देह बनाली पारे, जैसी भारी।
गिर गया चढ़ाने वालों पर व्यापारी।
गिर पड़े सभी वे अंग भंग करवाऊँ ॥ प्रद्युम्न-३३

फिर भानु चढ़ाने को बढ़ करके आया।
उस पर भी गिर कर चमत्कार दिखलाया।
चढ़ गया (वह) स्वयं ही था वह हय खेलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-३३

जो कभी न देखे, ऐसे खेल दिखाने।
जन और भानु देख देख चकरावे।
अदृश्य बना, चला गया कहीं पर गाऊँ॥ प्रद्युम्न-३४०॥
घर लौट गया है भानु, लजाया भारी।
चर लूले लंगड़े बन, आये घर द्वारी।
प्रद्युम्न चला है आगे, बात बताऊँ॥ प्रद्युम्न-३४१॥

उद्यान उजाड़ डाला :—

है यह किसका उद्यान मनोहर भारी।
ये बातें जानी विद्या द्वारा सारी।
बन सूअर घोड़ा बना, बाग ऊजड़ाऊँ॥ प्रद्युम्न-३४२॥
इक ओर बाग की शोभा नष्ट करावे।
मिल माली-मालिक हाहाकार मचावे।
सब जलाशयों का पी गया, जल सुखाऊँ॥ प्रद्युम्न-३४३॥
रखवालों पर भी टूट पड़े हैं सारे।
वे रोते है क्या कर सकते बेचारे।
सुन खबर सुभट आये है बड़े लड़ाऊँ॥ प्रद्युम्न-३४४॥
है नहीं वहाँ पर कोई पशु या पक्षी।
हम जिसे बतायें फल पौधें के भक्षी।
वे पता नहीं कहाँ गये समझाऊँ॥ प्रद्युम्न-३४५॥
ये समाचार सब भामा को बतलाये।
क्या हुआ कौन था? किससे पता लगायें।
क्या करता है वह आगे आगे जाऊँ॥ प्रद्युम्न-३४६॥

एक ऊँट एक गधा :—

रथ सम्मुख आते देखा, सजा सजाया।
विद्या से पूछा भेद समझ में आया।
ये आयेंगी तब घर इनके फुड़वाऊँ॥ प्रद्युम्न-३४७॥
रथ आया, रथ को ऊँट गधे से जोड़ा।
बन स्वयं सारथी लेकर रथ को दौड़ा।
घट और दासियाँ भिड़े बने गुड़काऊ॥ प्रद्युम्न-३४८॥
कर रही मना वे इसने, कथन ना माना।
घट फूटे इसको शकुन बुरा है माना।
गिर गई दासियाँ नीचे भी बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न-३४९॥
फट गई ओढ़नी और घाघरा अटका।
निकला है लोही सह न सका तन झटका।
सिर फूटा, टूटे दांत, नाक चिपटाऊ॥ प्रद्युम्न-३५०॥
यह ऊँट गधे की जोड़ी किसने जोती।
यो हंसी सारथी की दुनिया में होती।
रथ पीछे दौड़ी भीड़ी लोग भड़काऊँ। प्रद्युम्न-३५१॥
रथ रोक, चौक में गिरी दासिया आई।
सुनने की फूर्सत नहीं तुझे क्यों आई।
छा गया हर्ष के स्थान विषाद बताऊँ॥ प्रद्युम्न-३५२॥
तू इन्द्र जालिया है या नर अवतारी ?।
जो नहीं किसी से डरता हिम्मत भारी।
इतने में वह अदृश्य बना दिखलाऊँ॥ प्रद्युम्न-३५३॥

ब्राह्मण आ गई :—

द्विज रूप बनाया गले जनेऊ पहनी।
कर लिये तिलक छापे क्या बात है कहनी।
ले लिया कमंडलु माला लोक-दिखाऊ॥ प्रद्युम्न-३५४॥
आ गया बावड़ी पर है पीने पानी।
थी वहाँ नियोजित दासी एक पुरानी।
वह बोली यहाँ से पानी नहीं भरवाऊँ॥ प्रद्युम्न-३५५॥
घर मेरा होता तो मैं भरवा देती।
कुछ दान-दक्षिणा पूजा करवा देती।
यहाँ है मेरी लाचारी यही बताऊँ॥ प्रद्युम्न-३५६॥
जो नियम बना है उसे मैं नहीं तोड़ूं।
जो तोड़े उसका सिल से माथा मैं फोड़ूं।
मैं सतभामाजी की ही रोटी खाऊँ॥ प्रद्युम्न-३५७॥
द्विज लालच दिखलाता है, लेने पानी।
दूं मंत्रित जल, बन जायेगी इन्द्राणी।
स्वामिनि बनेगी सुन्दर लोक-सजाऊँ॥ प्रद्युम्न-३५८॥
दासी पर तिलभर असर नहीं हो पाया।
द्विज बल से पानी भरने को ललचाया।
वह लगी रोकने था वह नहीं रुकाऊँ॥ प्रद्युम्न-३५९॥
द्विज ने दासी का सुन्दर रूप बनाया।
क्या हुआ पलक मे नहीं समझ में आया।
वह खड़ी किनारे, बालो मैं गुण गाऊँ॥ प्रद्युम्न-३६०॥

भर लिया कमंडलु बाव हो गई सूखी।
अब दासी पीछे दौड़ी रोई कूकी।
मत सारा जल ले जाओ, तुम्हें सुनाऊँ॥ प्रद्युम्न-३६१॥

जल जीवन है, कर दया, इसे फिर भरदो।
सुन नम्र प्रार्थना कुछ इसका उत्तर दो।
मैं दासी पीछे-पीछे कब तक आऊँ॥ प्रद्युम्न-३६२॥

कुछ लोग मिले वे बोले क्यो रोती हो।
क्या बात बनी जो बहुत दु खित होती हो।
दासी ने सारी बात बताई, बताऊँ॥ प्रद्युम्न-३६३॥

लोगों ने द्विज को पकड़ा, धूम मचाई।
द्विज खड़ा हो गया बोला सुनलो भाई।
लौ लै लो पानी, फोड़ कमंडलु जाऊँ॥ प्रद्युम्न-३६४॥

पानी ही पानी हुआ उसी पानी से।
आ गई बाढ़ जन घबराये हानि से।
पानी के आगे होता क्या न वहाऊँ॥ प्रद्युम्न-३६५॥

सब लोग जान लेकर के इत उत भागे।
द्विज कहां गया वह पता न किसीको लागे।
यह चमत्कार है कितना भय-उपजाऊँ॥ प्रद्युम्न-३६६॥

सुन खबर सत्यभामाजी अति घबराई।
किस कारण से यह दशा आज हो पाई।
अनुमान लगा न सकी है, यह बतलाऊँ।. प्रद्युम्न-३६७॥

मत्कार पर चमत्कार :—

बाजार भरा पूरा है, आगे आया।
विद्या से जाना, द्विज का रूप बनाया।
बन गया बावना पहने नये खड़ाऊँ॥ प्रद्युम्न-३६८॥
दो चार फूल दो बोला, यो माली से।
मैं हार बनाने को लाया, डाली से।
दूं नहीं तुझे भानु के घर बनाऊँ॥ प्रद्युम्न-३६९॥
हो गये फूल वे आक, धतूरे वाले।
क्या गूंथे माली क्या, गजरों में डाले।
द्विज चला गया चुपचाप, क्या पता पाऊँ॥ प्रद्युम्न-३७०॥
गांधी से मांगा तेल फुलेल सुहाना।
ये नहीं मिलेंगे, नहीं मागने आना।
ये लिये भानु के है सामान विवाहु॥ प्रद्युम्न-३७१॥
हंस पड़ा विप्र, दुर्गन्ध उन्हीं में भर दी।
दम घुटने की स्थिति आस पास में कर दी।
फिर धान्य मागने रुका दुकान दिखाऊँ॥ प्रद्युम्न-३७२॥
दूं सेर नहीं, दो सेर नहीं, दूं दाना।
क्यों सीखा है, यों माग माग कर खाना।
चावल का कोदो बना दिया बताऊँ॥ प्रद्युम्न-३७३[1]॥
जा पंसारी से केसर माग लिया है।
उसने न दिया तो, गेरूँ बना दिया है।

---

[1] कोदो—एक प्रकार का नीरस धन्य

फिर कस्तूरी को करदी, हींग बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-३

तन ढंकने कपड़ा मांगा व्यापारी से।
कर जोड़ दिये हैं उसने लाचारी से।
सब बदल दिये हैं रंग बिरंग बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-३७

जा कहा सराफ ! मुझे दो तोला सोना।
जो दिया नहीं तो इसका पीतल होना।
बन गये सभी भौंचक्के यही बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-२७

दो गोप[1] दान में ऊंचे रतनो वाली।
दी नहीं, उसे फिर पत्थर की कर डाली।
बन गये काच, हीरे जो लाख विकाऊँ ॥ प्रद्युम्न-३७

द्विज को न समय है पल भर रूकने का।
जो सोच लिया वह कौतुक कर चुकने का।
हो हल्ला भारी मचा, वहाँ बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-३७

रोता है, कोई द्विज की, खोज लगाता।
यह हुआ, सभी को अपना दुःख सुनाता।
बैठा है कोई नीची नाड झुकाऊँ ॥ प्रद्युम्न-३७

ग्राहक भी खाली लौट, रहे हैं घर को।
सब कोस रहे हैं भाग्य और ईश्वर को।
माया है द्विज की जनता को भरमाऊँ ॥ प्रद्युम्न-३८

अब राजमहल के द्वारों पर चल आया।
वहाँ दादाजी के शुभ दर्शन कर पाया।

---

१. गोप—गले में पहनने का एक आभूषण

विद्या से परिचय पूछ लिया है बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-३८१ ॥
मेढ़ो का युद्ध वहाँ पर, होता देखा।
बूढ़े मेढ़े ले लिया विजय का ठेका।
यह मेढ़ा किसका यही जानना चाहूँ ॥ प्रद्युम्न-३८२ ॥
यह दादाजी का मेंढ़ा, बड़ा लड़ाकू।
हर रोज (रोज) लड़ाते कभी, नहीं ये थाकू।
क्या दादाजी को हाथों हाय हराऊँ ॥ प्रद्युम्न-३८३ ॥
विद्या से मेढ़ा एक, बनाकर लाया।
खुद बना मदारी वहाँ सामने आया।
आ बोला मेरा मेंढ़ा बड़ा लड़ाऊँ ॥ प्रद्युम्न-३८४ ॥
क्या मेढ़ा तेरा पेट पालने वाला ?
क्या तूने इसको यहाँ लड़ाने पाला ?
क्यों मेढ़े को मरवाता, द्रव्य कमांऊँ ॥ प्रद्युम्न-३८५ ॥
जो जीते मेढ़ा देना तो शाबासी।
है मेरा मेढ़ा लड़ने का अभ्यासी।
हो जाय भिड़त मैं यही भावना भाऊँ ॥ प्रद्युम्न-३८६ ॥
मेढ़े से मेढ़ा टक्कर लेने आया।
वह बूढ़ा मेढ़ा नहीं जीतने पाया।
डर गया न आगे आता अब पिछड़ाऊँ ॥ प्रद्युम्न-३८७ ॥
सब बोले जीत गया है, आज मदारी।
नृप के मेढे ने हिम्मत, सारी हारी।
प्रद्युम्न कुवर खुश होता चला बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-३८८ ॥

भामा के महल में :—

सतमंजिल वाला महल मनोहर देखा।
था जिसका सुन्दरता में. एका ठेका।
सतभामा का है, ऐसा पता लगाऊँ॥ प्रद्युम्न-३८९
अभिमान टूट जाये सतभामाजी का।
ईर्ष्या का रंग भी पड़ जाये कुछ फीका।
कुछ चमत्कार ऐसा ही यहाँ बताऊँ॥ प्रद्युम्न-३९०
द्विज बालक वाला सुन्दर रूप बनाया।
कर स्नान तिलक चंदन का खड़ा लगाया।
सर पर थे खुल्ले बाल सघन लहराऊँ॥ प्रद्युम्न-३९१
थी आधी धोती पहनी ओढ़ी आधी।
वह बोल रहा था संस्कृत सीधी-सादी।
स्वर मधुर कर्णप्रिय शांति प्रेम उपजाऊँ॥ प्रद्युम्न-३९२
आ सतभामा को आशीर्वाद दिया है।
"'स्वस्त्यस्तु" बोल कर मधुरास्वाद लिया है।
कर दर्शन भामा खुश खुश हुई बताऊँ॥ प्रद्युम्न-३९३
सतभामा बोली द्विज से मीठे स्वर में।
जो मांगोगे वह पाओगे इस घर से।
दो आज्ञा, मैं अब सब कुछ यहीं मंगाऊँ॥ प्रद्युम्न-३९४
खुश खुश हूँ (मैं) पटरानी के दर्शन करके।
द्विज बोला, भोजन मिले उदर भरकर के।
कुछ पूर्वागत द्विज का संवाद सुनाऊँ॥ प्रद्युम्न ३९५

भोजन तो और कहीं भी मिल जायेगा।
हय हाथी मोती रत्न यहीं पायेगा।
ले आभूषण भी उत्तम रत्न जड़ाऊ ॥ प्रद्युम्न-३९६ ॥
तू भोला है बालक है भय से मति से।
ले मांग और कुछ मेरी शुभ सम्मति से।
वह बोला लोभी ब्राह्मण नहीं, ठगाऊ ॥ प्रद्युम्न-३९७ ॥
ब्राह्मण के उत्तम लक्षण, होते ऐसे।
वे कभी नहीं लेते है रुपये पैसे।
वे त्यागी ज्ञानी होते, ज्ञान सुनाऊँ ॥ प्रद्युम्न-३९८ ॥
क्या मिट सकती है भूख, हय गय से।
प्राणों की रक्षा होती अन्न अभय से।
द्विज असंतुष्ट[1] बन होते नष्ट बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-३९९ ॥
ऐसों से वार्तालाप उचित नहीं होता।
मैं समय स्वयं का व्यर्थ कभी नहीं खोता।
बन गया बहुत लज्जित वह विप्र बटाऊ ॥ प्रद्युम्न-४०० ॥

[र]ाम्ना का आदेश :—

ले विप्रबटुक को भोजनशाला जाओ।
भर पेट इसे तुम भोजन करवा लाओ।
बन रहे यहाँ पकवान विविध रसदाऊ ॥ प्रद्युम्न-४०१ ॥

---

(1) असंतुष्टा द्विजानष्टाः, संतुष्टाश्च महीभुजः। सलज्जा गणिकानष्टा, निर्लज्जाश्च कुलोद्भना ॥

मैं वहाँ बैठकर भोजन नहीं करूँगा।
जो यहाँ मिलेगा उससे पेट भरूँगा।
मैं इन सबसे हूँ भिन्नाचार निभाऊँ॥ प्रद्युम्न-५॥
लो करो तैयारी भोजन आ जायेगा।
घर आया द्विज क्यों भूखा उठ जायेगा।
करवाकर भोजन ऊँचा पुण्य कमाऊँ॥ प्रद्युम्न-४॥
दासी ने पानी दिया वहीं पर ला के।
जल फैलाया है द्विज ने पैर धुला के।
भीगी हैं चीजें आगन बना ढुलाऊ॥ प्रद्युम्न-४॥
द्विज बड़ों और बूढों को गुस्सा आया।
यह कैसा बालक यहाँ जीमने आया।
द्विज शांति बनाने वाले उठे अगाऊ॥ प्रद्युम्न-४
जा सब से ऊँचे आसन पर जम जाता।
यह कार्य किसी भी द्विज को नहीं सुहाता।
उठ गये (सभी) दूसरी जगह सभी बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न-४॥
यह भी उठ उनके साथ गया है चलके।
जा ऊँचा बैठा देख सभी वे भड़के।
सिर इसका कहता जूतों से खुजलाऊँ॥ प्रद्युम्न-५॥
सुन विप्र बटुक ने कहा क्रोध मत करिये।
परभव परमात्मा और पाप से डरिये।
जो पच न सका वह ज्ञान निरर्थक गाऊँ॥ प्रद्युम्न-५॥
किस बूते पर तुम सब इतना इतराते।

कुछ करामात हो तो क्यों नहीं दिखाते।
आ आकर लड़ने लगे सभी गरमाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४०९ ॥
ले लकड़ी पत्थर ईंट मारने दौड़े।
इस विप्र बटुक ने हाथ विनय से जोड़े।
जो बुरा लगा तो बारंबार खमाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४१० ॥
इतने पर भी वे शांत नहीं हो पाये।
तब विप्र बटुक सतभामा पै चल आये।
वह बोली मैं क्या करूँ और फुड़वाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४११ ॥
शिशु बोला सबसे निपट अकेला लूगा।
मैं इन भूतों से पीछे नहीं रहूँगा।
इन सब ही आपस में यहीं लड़ाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४१२ ॥
लड़ पड़े :—
सब पागल बनकर लगे बोलने गाली।
जो मिली चीज वह करने चोट उठाली।
आ बच्चू। आजा नीचे तुझे गिराऊँ ॥ प्रद्युम्न-४१३ ॥
टूटे है दांत किसी की टांगें टूटी।
सिर हाथ अंगुलियों से लहु-धारी छूटी।
खेले है कुश्ती, ऐसा दृश्य बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-४१४ ॥
रणक्षेत्र समान बनी है भोजनशाला।
लड़ विप्र बटुक से ऐसा सार निकाला।
कह रहे परस्पर आजा तूझे चबाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४१५ ॥

माया समेट लो :—

सुन सुन कर आये देखे लोग तमासा ।
थी नहीं ब्राह्मणों से लड़ने की आशा ।
ये ज्ञान सुनाऊँ हैं या खोपड़ी खाऊ ॥ प्रद्युम्न-४॥
मर जाय न कोई रानी मन घबराये ।
वह हाथ जोड़ती द्विज के सम्मुख आवे ।
लो हुआ वहुत, मत खेलो खेल मराऊ ॥ प्रद्युम्न-५॥
मैं बालक हूँ माताजी ! मैं क्या जानूं ? ।
ये बड़े बड़े द्विज इनको क्या पहचानूँ ।
जो किया नहीं कुछ कैसे उसे छुपाऊँ ॥ प्रद्युम्न-६॥
द्विज बालक ने फिर माया तुरत समेटी ।
आ गये शिखर से अपने आप तलेटी ।
पछताते हैं मन ही मनमें शरमाऊँ ॥ प्रद्युम्न-७॥
बन जाओ सच्चे ब्राह्मण ज्ञान पुजारी ।
है अहंकार सबसे बड़ी बीमारी ।
है ब्राह्मणत्व ही सुर-नर लोक-पुजाऊँ ॥ प्रद्युम्न-८॥

भोजन कराइये :—

माताजी ! मुझको भूख लगी है भारी ।
क्यों देरी करती ? करो शीघ्र तैयारी ।
देरी है तेरी, मैं तो अभी जिमाऊँ ॥ प्रद्युम्न-१॥
बिछवाया आसन थाल सजा सोने का ।
सब काम इशारों से ही होने का ।

गंगाजल वाली झारी भरो दिखाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४२२ ॥
पद धोने कुवड़ी गंगाजल ले आई ।
द्विजवर ने उस पर करुणा दृष्टि टिकाई ।
अप्सरा सा रूप बनाया अति शोभाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४२३ ॥
निज रूप अनूप निहारा हर्षी दासी ।
ये पंडितजी हैं मंत्र तंत्र अभ्यासी ।
अब इनके चरणों में क्या भेंट चढ़ाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४२४ ॥
सतभामाजी पर बहुत प्रभाव पड़ा है ।
यह ब्राह्मण छोटा है या बहुत बड़ा है ।
कर विनय भक्ति जीमाऊँ इसे रिझाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४२५ ॥
द्विज की शर्त :—
भर पेट जिमाना हो तो मुझे जिमाओ ।
जो जीमा न पावो तो पहले नट जाओ ।
मैं जाऊँ और कहीं तजवीज लगाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४२६ ॥
भरपेट कराऊँगी मैं भोजन प्यारा ।
घर वासुदेव का, नहीं गरीबों वारा ।
स्वीकारूं कहना, जरा नहीं सकुचाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४२७ ॥
पंडितजी धोकर हाथ बैठते खाने ।
भामा ने आज्ञा की है भोजन लाने ।
ले आई दासो मेवा-शक्ति बढ़ाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४२८ ॥
फिर फल ले आई, लाई सरस मिठाई ।
फिर चरकी-फरकी सारी चीजें आई ।

आ गया रायता खाया-पिया पचाऊं ॥ प्रद्युम्न-४२६ ॥
फिर दाल भात तरकारी पापड आये।
है पता नहीं सब इसने कैसे खाये।
वो नहीं बोलता ब्राह्मण माल उड़ाऊ ॥ प्रद्युम्न-४३० ॥

रानी हार गई :—

फिर आसपास से भोजन मंगवाया है।
उससे भी द्विज का उदर न भर पाया है।
ला धाणी सतू दिये गये सुखदाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४३१ ॥
जो पशुओं के हित गया, पकाया लाये।
कुछ समझ न पाते अब क्या इसे खिलायें।
अधकच्चा, पक्का बना दिया बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न ४३२ ॥
यह दानव है, मानव (है) भूत बड़ा है।
क्या आज यहां खाने को उतर पड़ा है।
बिठलाया खाने, कैसे इसे उठाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४३३ ॥
कुछ मंगवाओ, मैं अभी बहुत भूखा हूँ।
मैं बैठा खाने, यही चाल चूका हूँ।
लाओ तो लावो या भूखा उठ जाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४३४ ॥
तुम बन पटरानी कहाँ कृपणता सीखी।
इस भोजन से तो लगी न पूरी टीकी।
सच बोलूं ? या तेरी लाज बचाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४३५ ॥
द्विज बालक को भी नहीं जीमाने पाई ?
क्या वासुदेव की पटरानी कहलाई ?

सुन रही बोल, पाई न बोल अरथाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४३६ ॥
द्विज मुझे बना देगा अतिसुन्दर नारी।
यह जगा प्रलोभन मन ही मनमे भारी।
सतभामाजो बन गई बहुत नरमाऊ ॥ प्रद्युम्न-४३७ ॥
अब विनय भाव से बोली मैं तो हारी।
तुम जीत गये माया सारी।
कर लिया आचमन चमत्कार दिखलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४३८ ॥
प्रसन्न हो जायेगा :—
जो कृपा द्विजवर की, मैं पा जाऊँ।
तो सौत रुक्मिणी को मैं अभी हराऊँ।
फिर गिरधारी को अंगुलि नाच नचाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४३९ ॥
यों सोच विप्र से बोली महल पधारो।
जो कमी रही है उसको, आप सुधारो।
स्वीकारो जो मामूली भेंट चढ़ाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४४० ॥
सब दास दासियाँ चले गये है नीचे।
ये दोनों ही बस रहे वहाँ पर पीछे।
है दोनो ही हुशियार विशेष बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-४४१ ॥
है आप करामाती यह मैंने जाना।
ये चमत्कार मैं देख चुकी हूँ नाना।
मिट जाने मेरा कष्ट यही मैं चाहूँ ॥ प्रद्युम्न-४४२ ॥
है तुम्हे सौत का कष्ट, बड़ा ही भारी।
जो सह सह कर तुम आज तक नहीं हारी।

मैं चाहूँ तो पलभर में उसे मिटाऊँ ॥ प्रद्युम्न
बस, करो कृपा यह मेरा कष्ट मिटाओ।
जो गोली-गुटका हो वह मुझे गिटाओ।
मैं जपूं मंत्र कुछ औरों से जपवाऊँ ॥ प्रद्युम्न-
बन जाये मेरा काम, यही है इच्छा।
मुनि और द्विजों का कथन न जाता मिच्छा।
मैं मेरे मन का यह विश्वास दिलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-
द्विज बोला, साधन कठिन बहुत बतलाया।
जो दृढ़ रहता, फल उसी व्यक्ति ने पाया।
हाँ भरो अगर तो मंत्र तंत्र अजमाऊँ ॥ प्रद्युम्न-
सिर मुंडवाओ, कालिख मुख पर पुतवाओ।
यह मंत्र जपो स्थिर आसन ध्यान जमावो।
लो माला, विधियाँ खोल खोल समझाऊँ ॥ प्रद्युम्न
यह विधि तो दुष्कर है, कुछ और बताओ।
है यही, न चाहो तो यहाँ से हट जाओ।
तो अच्छा, इससे ही निज भला बनाऊँ ॥ प्रद्युम्न-
धो कालिख मुख को फिर से आप संवारे।
उग आयेंगे ये केश दुबारा सारे।
क्या कष्ट बिना भी सिद्धि हुई बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न
फिर मुरली वाले वश में हो जायेंगे।
वे बिन बुलाये महलों में आयेंगे।
वे हो जावेंगे आज्ञा शीश चढ़ाऊँ ॥ प्रद्युम्न-

बुलवाई नाइन को निज शिर मुंडवाया।
कालिख से सुन्दर मुखड़े को पुतवाया।
फिर सीख लिया है, मंत्र[1] अरड़-बरड़ाऊँ॥ प्रद्युम्न-४५१ ॥
ले माला जपने बैठ गई है रानी।
फँस गई लोभ में होकर बड़ी सयानी।
कर एक बहाना गया विप्र बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न-४५२ ॥

मॉ और स्तुति :

महलों में बैठी रूक्मिणी बाट निहारे।
देखूँ! कब मेरा लाल[2] प्यारा पधारे।
खुशियों पर खुशियाँ भारी आज मनाऊँ॥ प्रद्युम्न-४५३ ॥
निरखूंगी जी भर गोदी में भर लूंगी।
फिर उठाने जाने उसे कहीं नहीं मैं दूंगी।
चिर सेवित वांछित सुरतरु से फल पाऊँ॥ प्रद्युम्न-४५४ ॥
हो गये आज वे सोलह वत्सर पूरे।
रह सकते हैं क्यों मेरे काम अधूरे।
मिलने की मन उत्कंठा प्रबल बताऊँ॥ प्रद्युम्न-४५५ ॥
सुम अलि को कदली वन गयवर को प्यारा।
प्रिय चातक को है स्वाति-जन्य जलधारा।
मन गौ का अपने बछड़े हित तरसाऊँ॥ प्रद्युम्न-४५६ ॥
प्रिय अन्न क्षुधित को प्यासे नर को पानी।
विरहिणी प्रिया को, प्रिय दर्शन सुखदानी।

---

१ ओम् ह्रीं अरड़ बरड़ रुंड मुंड स्वाहा। २ पुष्प।

चकवी का रोदन बनता सूर्य उगाऊँ ।। प्रद्युम्न ४५७
आओ ए सखियाँ ! मंगल थाल सजाओ ।
ये फूल बिछावो मंगलगीत गुवावो ।
लो धूप जलाओ, दूर्वा दधि रखवाऊं ।। प्रद्युम्न ४५८
अथ पथ में कुछ अपशकुन न होने पाये ।
ये छींक उबासी खासो किसे न आवे ।
ये सभी कार्य हैं मंगल कार्य रूकाऊँ ।। प्रद्युम्न-४५९
आ रहा कहाँ पर जाओ पता लगाओ ।
शुभ समाचार ले आवो उसे बधाओ ।
फिर पावे वो श्रेष्ठ इनाम तुम्हें बतलाऊं ।। प्रद्युम्न-४
प्रद्युम्न कुंवर अब माँ से मिलने आता ।
दुःख विरह काल का मानो टलने जाता ।
मिलने की वेला उत्तम-उत्तम लाऊं ।। प्रद्युम्न-४६
लख इन्द्रभवन सा महल रुक्मिणीवाला ।
विद्या से पूछा इसका वर्णन आला ।
मन ही मन सोचा चमत्कार दिखलाऊं ।। प्रद्युम्न-४६
विद्या से छोटे मुनि का वेश बनाया ।
ले रजोहरण महलों में चलकर आया ।
रानी ने सोचा मुनिजी को बहराऊँ ।। ।। प्रद्युम्न-४६
है ! धन्यभाग जो मेरे द्वार पधारे ।
लगता है चलने से कुछ कुछ हो हारे ।
मैं लाऊँ छोटा पाट अभी बिछवाऊँ ।। प्रद्युम्न ४६

जा सिंहासन पर बैठ गये मुनिराया।
रानी ने इचरज पूर्वक प्रश्न उठाया।
यह देवाधिष्ठित आसन हरि का गाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४६५ ॥
इस आसन पर श्री हरि ही वैठा करते।
हरि अंगज कोई बैठ अमंगल हरते।
वस अन्य न कोई बैठे यही बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-४६६ ॥
संभव है संकट और अमंगल आये।
जो इस पर कोई अपने पॉव टिकाये।
हो स्वयं विज्ञ मुनि ! मैं फिर क्या समझाऊँ ॥ प्रद्युमन-४६७॥
मुनि बोले, मेरा अहित न होनेवाला।
यह स्थान, पवित्र बनेगा, फेरो माला।
मैं तप्सी मुनि हूँ लब्धिवान बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४६८ ॥
जो मंत्र जानता वही सॉप से खेले।
जो सके नहीं वह क्यों जाये उस गेले।
तप शक्ति हुआ करती है देव झुकाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४६९ ॥
अपराध क्षमा कर दो जो कुछ भी बोला।
इक प्रश्न पूछता है मेरा मन भोला।
तुम पूछो, तज सकोच, तुम्है बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४७० ॥
लघुवय मे ही यह मुनिव्रत कैसे धारा।
दी मॉ ने आज्ञा, सोचा कुछ न विचारा।
इतिहास आपका जानू तो सुख पाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४७१ ॥
है बड़े राज्य के स्वामी, पिता हमारे।

मैंने न आज तक पाये दर्शन प्यारे।
बचपन से ही वैरागी बना बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-४७२॥
तब षोडशवर्षी धार लिया था भारी।
है पारणा आज उसका अति हितकारी।
जो हाजिर हो, वही वहराओ, यहीं चुकाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४७३॥
तप वर्षीतप हो सुना और है माना।
यह षोडशवर्षी तप न नया न पुराना।
पर बोलूँ क्यों मैं केवल सुनती जाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४७४
बचपन में स्तन्य न पाया माताजी का।
ले दीक्षा तप-जप सेवा करना सीखा।
हूँ बहुत बुभुक्षित, क्या इतिहास सुनाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४७५
तुम बड़ी श्राविका मधुर भाषिणी प्यारी।
गुणवती अतिथी की सेवा करने वारी।
हो दृढ़धर्मी प्रियधर्मी ऐसा गाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४७६॥
दे दान हाथ से, भोजन करनेवाली।
हर पाप क्रियाओं से हो डरनेवाली।
जो सुना कान से, वैसा यहाँ न पाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४७७॥
सुख शान्ति न पूछी, सुख से नहीं बिठाया।
बहराने का भी भाव नहीं बतलाया।
है अंतराय का दोष, रोष क्यों लाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४७८॥
मुनि ! क्षमा करें मन स्वस्थ नहीं है मेरा।
यह देखो मेरा है मुरझाया चेहरा।

चिन्ता है गहरी, डुबकी उसमें खाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४७९ ॥
पति तीन खण्ड के स्वामी मुरली वाले।
पद पटरानो का वचन अमृत के प्याले।
कुल यादव का है जगत प्रतिष्ठित गाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४८० ॥
क्या चिन्ता है जो भूली पीना-खाना।
तुम भूल गई हो मुनियों को बहराना।
बतलाओ तो मैं उसे मिटाने पाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४८१ ॥

रुक्मणी का वचन :—

ये वेला है बिछुड़े सुत के आने की।
स्वर मधुर गीत मंगल सुनने आने की।
सब लक्षण प्रगटे जितने थे प्रगटाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४८२ ॥
जन्मांध मनुष्यों ने भी आँखें पाई।
गूंगो के मुँह से मीठी बोली आई।
फल सूखे तरू पर आये रस बरसाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४८३ ॥
ये मोर कोकिला और पपीहा बोले।
बिन ऋतु पुष्पों से ये बल्लरियाँ डोले।
अलि पुंजों का है गुंजन सुख उपजाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४८४ ॥
फिर भी सुत मेरा नहीं दृष्टिगत नहीं आता।
क्या तीर्थङ्करों का कथन निरर्थक जाता।
मैं भूलूं हूँ संसय में, तुम्हे झूठाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४८५ ॥
जिनवाणी में संशय मत करना रानी।
क्या वितथ हुआ करतो है श्री जिनवाणी।

सुत आया ही समझो, मैं क्या समझाऊँ ॥ प्रद्युम्न-३८
क्या माँ के मन में धीरज रह सकती है ! ।
सुत-विरह-वेदना कितनी सह सकती है ।
मिट्टी में मिलने वाली इज्जत गाऊँ ॥ प्रद्युम्न-३८
सुत आकर इज्जत बचा सकेगा कैसे ।
इज्जत को खतरा हो सकता क्या ऐसे ।
तू बड़ी अनोखी रानी है बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४८
सिर मुंडवाया जायेगा मेरा क्षण में ।
सब बता दिया जो कहा गया था प्रण में ।
मुनि ! त्यागी हो वैरागी क्या समझाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४८

पहले भेंट दो :—

जो आप जानते तो कृपया बतलाओ ?
कब पुत्र मिलेगा मुझसे नहीं छिपाओ ।
पल पल में आकुल व्याकुल जीव बनाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४९
कुछ भेंट धरो फिर पूछो प्रश्न सुहाना ।
है बहुत सरल यह मेरे लिये बताना ।
है सब कुछ हाजिर बोलो मैं क्या लाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४९
ले आओ कुछ आहार और कुछ पानी ।
लग रही भूख मुख से न निकली वानी ।
उठ रानी बोली, अभी अभी मैं लाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४९

मोदक पचा लिये :—

सब कुछ छुपा दिया है महलों वाला खाना ।

मिल नहीं रहा है कहीं भी एक दाना।
केशरिया मोदक केवल हैं दिखलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४६३ ॥
रानी ने देखे पात्र खोलकर सारे।
वह गढ़ती जाती बस लज्जा के मारे।
क्या पटरानी के हार पर कुछ न मिलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४६४ ॥
मुनि बोले जो भी मिले वही ले आवो।
जो नहीं मिले तो मन न अधिक घबड़ाओ।
ये मोदक है दुष्पाच्य अतः घवड़ाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४६५ ॥
ये तपसी के कोठे में पच जायेंगे।
ये अधिक तपस्या करने उकसायेंगे।
है नहीं और कुछ तो यही वहराऊँ ॥ प्रद्युम्न-४६६ ॥
ले आई मोदक एक उठाकर रानी।
मुनि बोले ऐसी कौतुक मिश्रित वानी।
क्यों करती हो कंजूसी मन-शरमाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४६७ ॥
क्या इसी एक मोदक से तन भरता है।
खा जाऊँ सारे ऐसा मन करता है।
तूं ले आ सारे, सारे साथ पचाऊँ॥ प्रद्युम्न-४६८ ॥
बहराये मोदक बड़े प्रेम से खाये।
मुनि दुबले थे पर सारे शीघ्र पचाये।
यह बात बनी है विस्मय मन उपजाऊँ ॥ प्रद्युम्न-४६९ ॥
मुनि बोले ऐसी तृप्ति आज ही पाई।
तू धन्य धन्य है रुकमण बाई।

जो सतभामा में बीती वही बताऊं ॥ प्रद्युम्न-५०१

माला दुबारा फेरूँ :—

सतभामा ने वह जाप किया है मन से।
होऊँगी सुन्दर आकृति परिवर्तन से।
उठ देखा मुख दर्पण में यही बताऊँ॥ प्रद्युम्न-५०१
था जैसा ही है रूप न पलट रहा है।
क्या माला जपने में कुछ फर्क रहा है।
लो जपूं दुबारा ध्यान बना थिरचाऊँ॥ प्रद्युम्न-५०२
जप लिया मंत्र पर फर्क न, पड़ने पाया।
बदली ना जरा भी मुख की काली छाया।
समझी है भामा आया धूर्त ठिगाऊँ॥ प्रद्युम्न-५०३
सिर पीट पीट कर रोई है चिल्लाई।
सुन सखी दासियाँ आई हैं घबराई।
वे पूछ रहीं पर मिला न उत्तर ठाऊँ॥ प्रद्युम्न ५०५
इतने में आया भानुकुंवर लंगड़ाता।
स्थिति देख अंचभित स्तंभित सा रह जाता।
क्यों सिर मूंडा, मुखश्याम बनाया माऊँ॥ प्रद्युम्न ५०५
क्या बोले क्या बतलाये माता रोती।
स्थिति अपराधी की ऐसी ही है होती।
आखिर में बोली जो कुछ हुआ सुनाऊँ॥ प्रद्युम्न ५०६
आया था कोई विप्र बटुक बलधारी।
उसने ही मेरी स्थिति ऐसी कर डारी।

है मेरा ही कुछ दोष, रोष क्यो लाऊँ॥ प्रद्युम्न-५०७ ॥
मुख कालिख धोई वसन, नये पहनाये।
पर बाल कहाँ से अभी अभी उग आये।
यह दर्दनाक है घटना, चित्त चुभाऊ॥ प्रद्युम्न-५०८ ॥
मन कहता साजिस क्या न रूक्मिणी की है।
उसने ही द्विज को करने की मति दी है।
मैं अभी अभी सिर रूक्मण का मुंडवाऊँ॥ प्रद्युम्न-५०९ ॥

दासियाँ मुंडी गई :—

हो रुष्ट, दासियों से बोली, तुम जाओ।
सिर बाल रुक्मिणी के कटवाकर लाओ।
वह हारी हैं, मैं मेरा सुत परणाऊँ॥ प्रद्युम्न-५१० ॥
सुन हुक्म दासियाँ थाल उस्तरा लाईं।
हो गई रवाना चल रूक्मण पै आईं।
कुछ मनोभावना उनकी मैं बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न-५११ ॥
आपस में बातें कहती अपने मन की।
यह गर्हित स्थिति है दासों के जीवन की।
क्या करें? कहें क्या? सुने कौन? बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न-५१२ ॥
सतभामाजी जी तो ईर्ष्या करती रहती।
है भली रूक्मिणी समतायुत सब सहती।
गुण और दोष किसका है वही बताऊँ॥ प्रद्युम्न-५१३ ॥
हम लिये पेट के केश कतरने आई।
कर रही पाप मन जरा न डरने पाई।

दुर्भाग्य यही है, अपना सच बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-५१४
रूक्मण ने इनको आते देखा जब से।
दिल लगा धड़कने धक्-धक् करता तब से।
क्या करूँ ? और क्या कहूँ ? कहाँ पर जाऊँ ? ॥प्रद्युम्न-५१५
अब गई प्रतिष्ठा और गई सुन्दरता।
सिर मुंडवाने से तन मन है थर थराता।
मुनि पूछ रहे क्या कारण मुख बदलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-५१६
आ गई दासियाँ मेरी इज्जत लेने।
ये बाल कटा कर मुझको होंगे देने।
सुत नहीं मिला तो क्या उसको परणाऊँ ॥ प्रद्युम्न-५१७
मुनि नारदजी की वाणी निकली झूठी।
या किस्मत मेरी भी मुझ से रूठी।
जो पुत्र नहीं आ पाया दुःख मिटाऊँ॥ प्रद्युम्न-५१८
यह आर्त्तध्यान मत करो श्राविके! प्यारी।
क्या आर्त्तध्यान से मिटती है बीमारी।
नव कर्मों का बंधन है दुःख उपजाऊँ ॥ प्रद्युम्न-५१९ ॥
मुनि! ऐसी वेला में क्या मन टिकता है।
सिर मुंडा मुंडा सा पहले ही दिखता है।
मुनि बोले—जाओ छिपो कहीं, बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न-५२० ॥
तुम मुझे मान लो पुत्र स्वयं का प्यारा।
मैं दुःख मिटा दूंगा जो आया सारा।
तब मुझे समझना सच्चा संत, सुहाऊँ॥ प्रद्युम्न-५२१ ॥

वयं रूक्मिणी बना :—

छिप गई रूक्मिणी महलों में जाकर के।
मुनि बने रूक्मिणी अब अवसर पा करके।
आ गई दासियाँ, नत्यादेश बजाऊँ ॥ प्रद्युम्न-५२२ ॥

रानी ने स्वागत किया कुशल फिर पूछा।
क्यों आई? उत्तर पाया भेद समूचा।
सतभामा की हो इच्छा, पूरी चाहूँ ॥ प्रद्युम्न-५२३ ॥

सिर पर से पल्ला दूर किया है अपना।
लो केश उतारो सत्य करो निज सपना।
मैं हार गई हूँ अपना सिर मुंडवाऊँ ॥ प्रद्युम्न-५२४ ॥

सुन सभी दासियाँ मन ही मन सकुचाई।
है कितनी सीधी भोली रूक्मण बाई।
कुछ किया विरोध न क्रोध न लोक दिखाऊँ ॥ प्रद्युम्न-५२५ ॥

जल गंगाजी का स्वर्ण पात्र में डाला।
फिर तेज उस्तरा बाहर तुरत निकाला।
खोले में मखमल जरीदार बिछवाऊँ ॥ प्रद्युम्न-५२६ ॥

ले केसर कुंकुम पूजा की मस्तक की।
नाइन ने थाली एक ओर अब रख दी।
कर दिया काम आरंभ प्रेम उपजाऊँ ॥ प्रद्युम्न-५२७ ॥

:टा हो गया :—

प्रद्युम्न कुंवर ने विद्या ऐसी डाली।
उन सभी दासियों की चोटी मुंडवा ली।

उनको न पता चल पाया यही बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-१॥

कट गये कान कट गये नाक भी उनके।
क्यों इन्हें सामने आना लिये शकुन के।
दुर्दशा स्वयं को देती नहीं दिखाऊँ ॥ प्रद्युम्न-१॥

ले केश खुशी से चली वहाँ से सारी।
हँस रही प्रशंसा करती मन से भारी।
संवाद गुणों पर करती मन हरषाऊँ ॥ प्रद्युम्न-१॥

क्या गजब क्षमा है बाल सहर्ष कटाये।
मन ग्लानि क्रोध के भाव मुख पर न आये।
क्या मीठी बोली कोयल-जात लजाऊँ ॥ प्रद्युम्न-१॥

जो होती कोई क्या न कोसती रोती।
ढ़लकाती नयनों से कितने ही मोती।
क्या करती वह व्यवहार न लोक हसाऊँ ॥ प्रद्युम्न-१॥

गुणवती सती पर मुग्ध हमारा मन है।
यदि धन्य धन्य है तो ऐसा जीवन है।
सतभामाजी का मुखड़ा विष बरसाऊँ ॥ प्रद्युम्न-१॥

वे हम पर भी तो कभी नहीं खुश रहती।
वो गुण न किसी का देख तथा सह सकती।
है जैसी बात बताऊँ, क्यों सकुचाऊँ ॥ प्रद्युम्न-१॥

यों तरह तरह की बातें करती।
दुर्दशा स्वयं को नजर नहीं है आती।
हँस रहे लोग जो पथ में मिले बटाऊँ ॥ प्रद्युम्न-१॥

क्या विधवायें बन गई साथ में सारी।
क्यों मुंडे हुये सिर क्यों है सारी कारी।
क्यों हँसती हैं ये रूदनन लोक दिखाऊँ॥ प्रद्युम्न-५३६ ॥
हो रही आज क्यों ऐसे लोक हँसाई।
कारण भी इसका समझ नहीं वे पाई।
आ पहुँची है महलों में बात सुनाऊँ॥ प्रद्युम्न-५३७ ॥

रिश्वत ली है :—

क्यों ले आई हो केश रूक्मिणी वाले।
जो कभी शर्त में थे उसने दे डाले।
रख दिया सामने थाल, बाल दिखाऊँ॥ प्रद्युम्न-५३८ ॥
दे दिये झिझक के बिना केश रानी ने।
संतोष परम उपजाया मुखबानी ने।
सुन भामा ने सोचा, मैं वस्त्र हटाऊँ॥ प्रद्युम्न-५३६ ॥
था खाली थाल न, केश एक भी पाया।
सतभामाजी को भारी गुस्सा आया।
क्या सूझी मेरे से भी हँसी सुनाऊँ॥ प्रद्युम्न-५४० ॥
क्या तुमने रिश्वत खाई ? केश न लाई।
क्या की है मिलकर मेरे साथ ठगाई।
है कहीं दाल में काला पता लगाऊँ॥ प्रद्युम्न-५४१ ॥
तुम सबने अपने मस्तक क्यों मुंडवाये ?
ये नाक कान भी किसके लिये कटाये ?
जो कुछ भी बीता कहो, यही मैं चाहूं॥ प्रद्युम्न-५४२ ॥

उनको न पता चल पाया यही बतऊँ ॥ प्रद्युम्न-१२

कट गये कान कट गये नाक भी उनके।
क्यों इन्हें सामने आना लिये शकुन के।
दुर्दशा स्वयं को देती नहीं दिखाऊँ ॥ प्रद्युम्न-१२

ले केश खुशी से चली वहाँ से सारी।
हँस रही प्रशंसा करती मन से भारी।
संवाद गुणों पर करती मन हरषाऊँ ॥ प्रद्युम्न-१३

क्या गजब क्षमा है वाल सहर्ष कटाये।
मन ग्लानि क्रोध के भाव मुख पर न आये।
क्या मीठी बोली कोयल-जात लजाऊँ ॥ प्रद्युम्न-१३

जो होती कोई क्या न कोसती रोती।
ढ़लकाती नयनों से कितने ही मोती।
क्या करती वह व्यवहार न लोक हसाऊँ ॥ प्रद्युम्न-१३

गुणवती सती पर मुग्ध हमारा मन है।
यदि धन्य धन्य है तो ऐसा जीवन है।
सतभामाजी का मुखड़ा विष वरसाऊँ ॥ प्रद्युम्न-१३

वे हम पर भी तो कभी नहीं खुश रहती।
वो गुण न किसी का देख तथा सह सकती।
है जैसी बात बताऊँ, क्यों सकुचाऊँ॥ प्रद्युम्न-१३

यों तरह तरह की बातें करती।
दुर्दशा स्वयं की नजर नहीं है आती।
हँस रहे लोग जो पथ में मिले बटाऊँ॥ प्रद्युम्न-१३

क्या विधवायें बन गई साथ में सारी।
क्यों मुंडे हुये सिर क्यों है सारी कारी।
क्यों हँसती हैं ये रुदनन लोक दिखाऊँ॥ प्रद्युम्न-५३६ ॥
हो रही आज क्यों ऐसे लोक हँसाई।
कारण भी इसका समझ नहीं वे पाई।
आ पहुँची है महलों में बात सुनाऊँ॥ प्रद्युम्न-५३७ ॥

रिश्वत ली है :—

क्यों ले आई हो केश रुक्मिणी वाले।
जो कभी शर्त में थे उसने दे डाले।
रख दिया सामने थाल, बाल दिखाऊँ॥ प्रद्युम्न-५३८ ॥
दे दिये झिझक के बिना केश रानी ने।
संतोष परम उपजाया मुखबानी ने।
सुन भामा ने सोचा, मैं वस्त्र हटाऊँ॥ प्रद्युम्न-५३९ ॥
था खाली थाल न, केश एक भी पाया।
सतभामाजी को भारी गुस्सा आया।
क्या सूझी मेरे से भी हँसी सुनाऊँ॥ प्रद्युम्न-५४० ॥
क्या तुमने रिश्वत खाई? केश न लाई।
क्या की है मिलकर मेरे साथ ठगाई।
है कहीं दाल में काला पता लगाऊँ॥ प्रद्युम्न-५४१ ॥
तुम सबने अपने मस्तक क्यों मुंडवाये?
ये नाक कान भी किसके लिये कटाये?
जो कुछ भी बीता कहो, यही मैं चाहूं॥ प्रद्युम्न-५४२ ॥

अब पता चला :—

सुन वृत्त दासियाँ चकित बहुत हो जावें।
वे अपने अपने सिर पर हाथ फिरावें।
उड़ गये कहाँ पर केश विशेष सजाऊँ।। प्रद्युम्न-५४३ ॥
फिर नाक कान का पता नहीं है पाया।
यह गजब हो गया! कुछ न समझ में आया।
हो रही वेदना, क्या अनुमान लगाऊँ ॥ प्रद्युम्न-५४४ ॥
वे रोती हैं चिल्लाती हैं जोरों से।
खुद ठगी गई तब क्या बोले औरों से।
सतभामा बोली—धीरज मैं बधाऊँ ॥ प्रद्युम्न-५४५ ॥
जो किया रूक्मिणी ने तो नाम बताओ।
तुम नाम छुपा, अपराध अधिक न बढ़ाओ।
है काम उसी का, अपने आप बताऊँ।। प्रद्युम्न-५४६ ॥
मत नाम रूक्मिणी का लो सतभामाजी।
वे बड़ी भली हैं हम सब पर है राजी।
क्यों काजी को मुल्ला को यहाँ लड़ाऊँ ॥ प्रद्युम्न-५४७ ॥
वह चमत्कार ही, है हमसे अनजाना।
क्या कर्मों का फल पड़ता क्या न चुकाना।
क्यों झूठा आल चढ़ायें, आल दिराऊँ ॥ प्रद्युम्न-५४८ ॥
अपमान (का) स्वयं का माना यह भामा ने।
वे भोली हैं, रूक्मण को क्या पहचाने।
वह धूर्त्त और चालाक निशान लजाऊँ।। प्रद्युम्न-५४९ ॥

याय दिलवाइये :—

अब निजी सचिव को महलों में बुलवाया।
दुर्दशाग्रस्त तब उन सबको दिखलाया।
यदुवंश नाश की ओर जा रहा गाऊँ॥ प्रद्युम्न-५५० ॥

ले जावो राजसभा में न्याय दिलाओ।
हरि हलधर को दिखलाओ कांड बताओ।
ले सचिव सभा में आया, न्याय-दिलाऊँ॥ प्रद्युम्न-५५१ ॥

ये सभी दासियाँ किसकी हैं ? क्यों आई ?
क्यो इनने अपनी-अपनी नाक कटाई।
सिर नीचा करके खड़ी बड़ी शरमाऊँ॥ प्रद्युम्न-५५२ ॥

सुन नम्र निवेदन किया सचिव ने सारा।
यह काड हुआ है सती रूक्मिणी द्वारा।
मैं आया ले फरियाद, सुनो यदुराऊ॥ प्रद्युम्न-५५३ ॥

श्रीकृष्ण विनोदी भाषा में यो बोले !
हो स्वामी जैसा दास न्याय यह तोले।
इतने में आई भामा वहीं बताऊँ॥ प्रद्युम्न-५५४ ॥

सुन अंग अंग में आग लगी भामा के।
क्या पाँच प्रहर भी होते है थामा के।
वह भरी सभा मे बोली बच धमकाऊ॥ प्रद्युम्न-५५५ ॥

रूक्मिणी का साहस नहीं, काय यह कर दे।
है हाथ इसी मे तेरा, सच उत्तर दे।
मैं न्याय मागने आई, नहीं डराऊ॥ प्रद्युम्न-५५६ ॥

जो न्याय न होगा, सोचो फिर क्या होगा।
फिर राज्य करेगा कोई यहाँ दारोगा।
मत करो सभा में आकर बात उड़ाऊ॥ प्रद्युम्न-॥
जब शर्त लगाई साक्षी तब डलवाई।
फिर भी क्यों बोलो ऐसी नौबत आई।
हलधर भी सुनते, सुन लो साफ सुनाऊँ॥ प्रद्युम्न-॥

आश्वासन :—

हलधरजी बोले सुन ले कृष्ण कन्हैया।
भामा को नहीं चिढ़ावो मेरे भैय्या।
यह बात बनी है जग अपयश फैलाऊँ॥ प्रद्युम्न-॥
क्यों किसी एक ही स्त्री को मिले बढ़ावा।
क्या सब देवों को चढ़ता नहीं चढ़ावा।
तू समझदार है सबका साथ निभाऊ॥ प्रद्युम्न-॥
सुन बोले, दादा! बात सुनो यह मेरी।
मैं कहता हूँ सौगन्ध खाकर के तेरी।
कुछ पता नहीं है मुझको, सत्य बताऊँ॥ प्रद्युम्न-॥
अभियोग सिद्ध होने पर सजा सुनावें।
या उससे पहले फाँसी उसे चढ़ावें।
लकड़ी के दोनों पलड़े तुलफ उठाऊँ॥ प्रद्युम्न-॥
हम सुनकर न्याय करेंगे अब तुम जाओ।
मत घबराओ मन अपना शान्त बनाओ।
दे दिया न्याय-आश्वासन सुख उपजाऊ॥ प्रद्युम्न-॥

[म]ुनि से वेटा :

कर विदा दासियों को निज रूप पलटता।
मुनि बनकर के फिर धर्म्म शखा रटता।
अटपटा न जो कुछ घटता वही घटाऊँ॥ प्रद्युम्न-५६४ ॥
रूक्मण ने देखे खेले संत के सारे।
ये कौन संत हैं ? कैसे यहाँ पधारे।
वास्तव में संत नहीं हैं, पाव पुजाऊ॥ प्रद्युम्न-५६५ ॥
सुत यही नहीं क्या ? साधुवेष में प्यारा।
मैं जानू तो जानू अब किसके द्वारा।
क्यों पयोधरों में उमड़ापय टपकाऊँ॥ प्रद्युम्न-५६६ ॥
क्यों सुहावनी लगती है सूरत (प्यारी) प्यारी।
क्यों देख देखकर आँखें थकी न हारी।
निश्चय है मेरा लाल यहीं पर मैं पाऊँ॥ प्रद्युम्न-५६७ ॥
टकटकी लगा कर देख रही है मुखड़ा।
सब भूल गई है जो भी देखा दुखड़ा।
मुनि सोच रहे क्या सही रूप मैं आऊँ॥ प्रद्युम्न-५६८ ॥
अब अधिक खिजाना उचित नहीं हो सकता।
दिल माँ का इससे अधिक नहीं रो सकता।
माँ, मां ही है, क्या माँ की ममता गाऊँ॥ प्रद्युम्न-५६९ ॥
प्रद्युम्न कुवर ने रूप स्वयं का धारा।
पलटा है वातावरण वहाँ का सारा।
उस रूप सम्पदा का क्या वर्णन गाऊँ॥ प्रद्युम्न-५७० ॥

हर्ष पर हर्ष :—

वह भव्य विशाल ललाट बड़ा चमकीला।
नव अंगों में से नहीं एक भी ढ़ीला।
था सहज आकर्षण अधिक लुभाऊ॥ प्रद्युम्न-१०
उठ माँ के पावन चरणों में झुकता है।
क्या विनय भाव भी हाथों से रूकता है।
अविनीत और ठूंठों को मैं न झुकाऊँ॥ प्रद्युम्न-१०
माँ वत्सलता से छाती उसे लगाती।
कर पुत्रालिगन मन ही मन हरषाती।
आँखों से निकले आँसू हर्ष बहाऊँ॥ प्रद्युम्न-१०
रूक गये बोल मुख में ही निकल न पाते।
रूक गये अंग सब एक नहीं हिल पाते।
स्थिर बने हुये को कैसे कहो सुनाऊँ॥ प्रद्युम्न-१०
हो गये मनोरथ सिद्ध आज इस मन के।
गुण गाऊँ स्वर्णिम उगे आज इस दिन के।
कह सकूं नहीं तब कहने क्यों ललचाऊँ॥ प्रद्युम्न-१०
तुम जहाँ कही से आओ प्यारी सखियाँ।
लो पुत्र आ गया खोलों प्यारी अखियाँ।
है कैसा सुन्दर त्रिभुवन मन मोहाऊ॥ प्रद्युम्न-१०
सुन सखियाँ आई सुत के दर्शन पाये।
क्या बोले—क्या गाये—कैसे इसे वधाये।
रूक करके बोली वचन प्रेम-बरसाऊ॥ प्रद्युम्न-१०

सुत कामदेव है ? अथवा प्यारा चन्दा ? ।
सुत शीतल मलयज अथवा प्यारा इंदा ? ।
वे श्रवण आ गया सुत का ले मिष गाऊँ ॥ प्रद्युम्न-५७८ ॥
तू धन्य-धन्य है ऐसे सुत की माता ।
सुत माँ के गुन क्या गाता नहीं विधाता ? ।
सुतवाली माँ के दर्शन शुभ बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-५७९ ॥
सुन पुत्र प्रशंसा माँ का मन हरषा ।
मानों मेघ पुष्करावर्त्त अचानक बरषा ।
उस मनोदशा को ज्ञानी गम्य बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-५८० ॥

बालक बन गया :—

मन खिन्न बना कुछ स्मृतियाँ आ जाने से ।
माँ ! मत सकुचाओ सुत को बतलाने से ।
जो नहीं कहो तो कैसे उसे मिटाऊँ ॥ प्रद्युम्न-५८१ ॥
नवमास उदर में पाला जन्म दिया था ।
पर शैशव का सुख मैंने नहीं लिया था ।
अपहरण हो गया अंतरचित्त दुखाऊँ ॥ प्रद्युम्न-५८२ ॥
वह धन्य-धन्य माँ जिसने तुझे खिलाया ।
वह स्तन्य धन्य जो तुझको गया पिलाया ।
मैं रोऊँ कर कर याद बड़ा दुख पऊँ ॥ प्रद्युम्न-५८३ ॥
मैं समझ गया माँ ! दुखड़ा तेरे मन का ।
सुख-स्पर्श और हो होता है बचपन का ।
ले छोटा बच्चा अभी स्वयं बन जाऊँ ॥ प्रद्युम्न-५८४ ॥

कह करके ऐसा, अपनी विद्या द्वारा।
बन गया एक बालक छोटा-सा प्यारा।
चेष्टायें करने लगा दिल हरषाऊ ॥ प्रद्युम्न-५८५ ॥

बाल लीला :—

वे छोटे-छोटे हाथ पाँव हैं प्यारे।
वह टुकुर-टुकुर कर माँ की ओर निहारे।
क्षण-क्षण में रोता हँसता बालक साऊ ॥ प्रद्युम्न-५८६ ॥
माँ लगी आंजने अंजन उन नैनों में।
माँ समझाती है अंगुलि से सैनों से।
मैं लाऊँ पय-मिश्री अब तुझे पिलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-५८७ ॥
ले पीले चोटी मोटी हो जायेगी।
फिर ध्वजा सरीखी उड़कर फर्रायेगी।
ले कण उड़ाऊँ बेटे! नहीं ठगाऊँ ॥ प्रद्युम्न-५८८ ॥
तू बड़ा सुपातर होना सेवा करना।
तू यदुवंशी है नहीं किसी से डरना।
तू मत कहलाना माँ का दूध लजाऊ ॥ प्रद्युम्न-५८९ ॥
शिशु ठुमुक ठुमुक कर आंगन में है चलता।
चलने रावता कितनी बड़ी चपलता।
गिर जाता गिर कर उठता यही बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-५९० ॥
नहलाने पर भी गंदा हो ही जाता।
जब देखो तब ही पीछे - पीछे आता।
माँ कहती आजा छोड़ तुझे कहां जाऊँ ॥ प्रद्युम्न-५९१ ॥

कुछ खाता पीता नहीं रूठ जब जाता।
क्या सखा बोलता स्नेह जब टूट जाता।
माँ कहती खा ले पीले तुझे मनाऊँ॥ प्रद्यम्न-५६२॥

तू खायेगा तो खाना मैं खाऊँगी।
मैं नहीं मनाने को वापिस आऊँगी।
है समय न तेरे लिये इतना लगाऊँ॥ प्रद्युम्न-५६३॥

सुख देते-देते क्यों दुख देता ऐसे।
क्या अच्छे बच्चे होते तुझ जैसे।
तू बड़ा लाडला आजा गोद बिठाऊँ॥ प्रद्युम्न-५६४॥

ले लिया गोद में कंधे पर बिठलाया।
फिर पकड़ अंगुलि अपने संग चलाया।
थक गया बीच मे कहा यहीं रूक जाऊँ॥ प्रद्युम्न-५६५॥

वह ला दे यह तो मुझे नही है भाती।
उठ माता अच्छी चीजें है ले आती।
ले यह तो ले ले बढ़िया बहुत बताऊँ॥ प्रद्युम्न-५६६॥

ले स्वाद बड़ा मीठा है थोड़ा चख ले।
ले थोड़ा खा ले पास स्वयं के रख ले।
मैं बार-बार लाकर दूं तो थक जाऊँ। प्रद्युम्न-५६७॥

कर दिया स्थान अपवित्र मूत्र के द्वारा।
मल उत्सर्जन कर भरा अंगना प्यारा।
माँ करती है सब साफ़, सफाई बताऊँ॥ प्रद्युम्न-५६८॥

पल भर भी मां का नहीं छोड़ता पल्ला॥

सूना न छोड़ता ज्यों व्यापारी गल्ला।
माँ भी न छोड़ती सुत को कहीं बताऊँ॥ प्रद्युम्न-१११
माँ भूल गई सब, स्नेह पुत्र का पाया।
ज्यों जीव भूलता देख जगत की माया।
सुत भूल गया पाकर के माँ ममताऊँ॥ प्रद्युम्न ११२
क्या बालक बन कर जीऊँ? खेलूँ? खाऊँ?।
या पूज्य पिताजी से भी मिलने जाऊँ।
माँ थकी नहीं है अब तो इसे थकाऊँ॥ प्रद्युम्न-११३
ला दूध और मिश्री तू मुझे पिला दे।
वह लाई, फीका मिश्री और मिला दे।
मैं मिश्री ज्यादा, पीऊँ जो कम पाऊँ॥ प्रद्युम्न ११४
इसमें से ही तू मीठा कम कर लादे।
हो नहीं कहीं तू इसमें दूध मिला दे।
हठ लेकर बैठा बालक बड़ा सुहाऊँ॥ प्रद्युम्न-११५
क्यों करता तू हैरान बता दे बेटा!।
बन बड़े रूप में सभी मिटा दे लेठा।
जो लिखा नहीं सुख बता कहाँ से पाऊँ॥ प्रद्युम्न-११६
निज रूप बदल कर सारी कथा सुनाई।
जो याद आ गई अब तक बीती भाई।
अब जो कुछ होता, श्रोता सुनो सुनाऊँ॥ प्रद्युम्न-११७

बलदेवजी से भिड़न्त :—

कुछ सुभट शस्त्र सज्जित होकर के आते।

सुत पूछे माँ से कहो कहाँ ये जाते।
रुक्मिणी तमक कर बोली—क्या बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न-६०६ ॥
जो काम किया था तू ने उसका फल है।
सतभामाजी को हलधरजी का बल है।
उनके ही ये भिजवायें है बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न-६०७ ॥
सुत चमत्कार दिखलाने द्विज बन जाता।
वय छोटी अपना पेट फुला दिखलाता।
डट गया द्वार पर लाठी लिये रुकाऊ॥ प्रद्युम्न-६०८ ॥
घुसने न दे रहा द्विज अब किसी सुभट को।
वह घुमा रहा है, अपने मोटे लठ को।
है हमें बड़े मालिक का हुक्म बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-६०६ ॥
है हुक्म अगर तो उनके ही घर जावो।
इस घर में अपना पाव न रखने पावो।
कुछ सुभट बढ़े हैं अपना जोर जचाऊ॥ प्रद्युम्न-६१० ॥
द्विज उलझ पड़ा है धक्का-मुक्की करके।
फिर कीला सबको विद्या का बल स्मर के।
गिर गये शस्त्र, कर पॉव बने चिपकाऊ॥ प्रद्युम्न-६११ ॥
उनमें से एक सुभट को खाली छोड़ा।
वह गया सूचना देने दौड़ा-दौड़ा।
सुन कर के हलधर कुपित बने अधिकाऊ॥ प्रद्युम्न-६१२ ॥
रुक्मिणी जानती कितने टोने टसके।
कर कामण-टूमण रखा कृष्ण को कसके।

सुभटों को कील दिया है क्या बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-११३
बन क्रोधाकुल बलदेव महल में आये।
द्विजवर को देखा पड़ा पैर फैलाये।
हट जाओ, भीतर जाने दो, फरमाऊँ ॥ प्रद्युम्न-११४
द्विज बोला मेरा पेट फटा जाता है।
हो रहा दर्द जो नहीं सहा जाता है।
जो कारण है इसका वह भी बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-११५
सतभामाजी ने कच्चा अन्न खिलाया।
जी भर के ठंडा पानी नहीं पिलाया।
दो औषधि मैं तो पड़ा-पड़ा घबड़ाऊँ ॥ प्रद्युम्न-११६
ओ भोजन भट्ट! तू हटता है न कैसे!।
तू भीतर जाने क्यों न दे रहा ऐसे।
तू हट जा, वरना टांग पकड़ घिसवाऊँ ॥ प्रद्युम्न-११७
ले पैर घसीटा बना वही अति लम्बा।
हलधर के मन में ऊपजा अति अचम्भा।
क्या किया जाय? यों सोच रहे ताऊ ॥ प्रद्युम्न-११८
सुत लगा पूछने बोलो ओ माताजी!
क्या आने दूं आये हैं अब बाबाजी।
नम जाना ही है उचित, यही बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न ११९
तू क्या कहती है? नमना मुझे न आता।
मैं वासुदेव का बड़ा पुत्र कहलाता।
मैं करामात बाबा को कुछ दिखलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-१२०

ये किससे लड़कर नाम कमाया करते।
ये किस पर अपना रोब जमाया करते।
ये बड़े केसरी सिंह से लड़ते, बताऊँ॥ प्रद्युम्न-६२१॥
सुन बना केसरी-सिंह चलकर के आया।
अति लम्बी पूंछ बना ली सुन्दर काया।
केशर का सर पर मुकुट अति सोभाऊ॥ प्रद्युम्न-२२॥
नख लम्बे और नुकीले दाढ़े तीखी।
डरने की बातें नहीं आजतक सीखी।
मस्ती से चलता आया, है, बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न-६२३॥
बलदेव सिंह को देख बड़े चकराये।
इस जादूगरनी ने ये रूप बनाये।
आते ही सिंह ने मारी झपट बताऊँ॥ प्रद्युम्न-६२४॥
गिर गया मुकुट सर पर से, चोट न आई।
(फिर) भिड़ गये परस्पर होने लगी लड़ाई।
गिर गये, सिंह से हार गये बलदाऊ॥ प्रद्युम्न-६२५॥
सिंह गया महल में, हलधर अपने घर को।
बच गये गनीमत, धन्य-धन्य ईश्वर को।
रुक्मिणी ठगोरी धूर्त बड़ी बतलाऊँ॥ प्रद्युमन-६२६॥
वे सुभट सभी ही छूटे घर को आये।
इस सुत ने ऐसे चमत्कार दिखाये।
माँ फूली मन से, तन से नहीं फूलाऊँ॥ प्रद्युम्न-६२७॥
पा योग्य पुत्र को फूला करती माता।

सत्पुत्रों से कुल बढ़ता शोभा पाता।
"हो एक नेक" कि उक्ति विशिष्ट बताऊँ॥ प्र
कुल लज्जित करने वाले, सुत क्या सुत हैं?।
जो धर्म-कर्म च्युत व्यसनों से संयुत हैं।
उससे तो अच्छा सुत[1] हो नहीं बताऊँ॥ प्रद्युम्न

मिलने की रीति :—

मिल लिये पुत्र मेरे से मिलो पिता से।
वे भी तो रहते सुत दर्शन के प्यासे।
मैं मिलूं कहाँ पर कैसे बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न-६३०
मैं पुत्र आपका आया बोलो मुख से।
वे प्रसन्नता से झूमेंगे सुत सुख से।
यह मार्ग उचित है यही तुझे बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न-६३
माँ ऐसे मिलना मुझे नहीं सुहाता है।
मन ऐसा कहने से ही शरमाता है।
मैं मिलूं शक्ति दिखलाकर ध्वज फहराऊँ॥ प्रद्युम्न-६३२
बल यादव कुल का देखूँ रण में पहले।
है कौन-कौन जो चोट गजब की सह ले।
तुम आओ मेरे साथ बात समझाऊँ॥ प्रद्युम्न-६३३
मैं हरि को आज्ञा बिना नहीं जा सकती।
कुल-पतिव्रता की नीति-रीति मैं रखती।

1—एकेन शुष्क वृक्षेण, दह्य मानेन वह्निना।
दह्यते तद्वनं सर्वं दुष्पुत्रेण कुलं तथा॥१॥

ा कहूँ साथ में तेरे कैसे आऊँ ॥ प्रद्युम्न-६३४ ॥
हानि नहीं है सुत के संग जाने में।
ा नहीं करेंगे लौट यहीं आने में।
चलो, खेल देखो जो मैं दिखलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-६३५ ॥

मणी का अपहरण :—

पकड़ रुक्मिणी का उड़ चला गगन में
राजसभा में बोला रोष वचन में
ा जावो, कर अपहरण इसे ले जाऊँ ॥ प्रद्युम्न-६३६ ॥
चोर नहीं हूँ, लुच्चा नहीं लफंगा।
विद्याधर हूँ, बड़ा कुलीन सुरंगा।
ा महासुन्दरी को कहकर ले जाऊँ ॥ प्रद्युम्न-६३७ ॥
नाक चाहिये तो उठकर के आओ।
ा समर भूमि में अपना शौर्य बताओ।
लड़ने को तैयार नहीं भगजाऊँ ॥ प्रद्युम्न-६३८ ॥
कहकर नारद बाबा पै आया।
किया बताया सविनय शीश नवाया।
ठलाया माँ को, बोला लड़ने जाऊँ ॥ प्रद्युम्न-६३९ ॥
ारी करने लगा आप लड़ने की।
आदत दीवारो से लड़ पड़ने की।
ार्ष पिता सुत मे अब होगा गाऊँ ॥ प्रद्युम्न-६४० ॥

ा-पुत्र संघर्ष :—

ाते ही यादव चमके मन ही मन मे।

यह कौन बोलता कुवचन खड़ा गगन में।
मच गया तहलका सभा मध्य बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न॰
ध्वनि "पकड़ो मारो" की है आई मुख से।
अपहर्ता भी क्या जी सकता है सुख से।
वे वीर पाँच सौ निकल पड़े जुझाऊँ ॥ प्रद्युम्न॰
थे मत्त मतंगज अंजन गिरि सम काले।
चल पड़े युद्ध के लिये बने मतवाले।
चिंघाड़े उनकी कायर - प्राण - लिवाऊ ॥ प्रद्युम्न॰
गति अश्वों की भूतल में कंपन करती।
रणभूमि देखने को उत्सुकता भरती।
ये सेना के दो अंग सुरंग बताऊँ ॥ प्रद्युम्न॰
रथ रूनझुन रूनझुन करते सत्वर चलते।
लड़वेये योद्धा इन पर बैठ निकलते।
जो शस्त्र सामयिक उनसे लैस बताऊँ ॥ प्रद्युम्न॰
ये सैनिक ले बंदूकें ले तलवारें।
चल रहे बोलते हम दुश्मन को मारें।
हम नहीं कहीं भी हारे, विजय-दिराऊ ॥ प्रद्युम्न॰
मातायें बोली दूध लजा मत आना।
दुश्मन को अपनी पीठ न कभी दिखाना।
कर विजय लौटना यह आशीष सुनाऊँ ॥ प्रद्युम्न॰
कर प्राप्त विजयश्री मेरी सौत बनाना।
कुछ यश में प्रियवर चारचाँद, लगवाना।

पत्नी से लेते पति यों विदा बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-६४८ ॥
हरि हलधर की थी जोड़ी सबसे आगे।
ठहरे न सूर्य शशि जाते निशि-दिन भागे।
जग रहा वीर रस नेत्रों से बरसाऊँ ॥ प्रद्युम्न-६४६ ॥
आ युद्ध क्षेत्र में अरि से बोले-आओ।
नव-जन्म हमारे शस्त्रों द्वारा पावो।
हम आये अरि-लोहू से प्यास बुझाऊँ ॥ प्रद्युम्न-६५० ॥
प्रद्युम्न सामने सज्जित होकर आया।
आते ही उसने अपना धनुष चढ़ाया।
टंकार हुई है सेना को थर्राऊ ॥ प्रद्युम्न-६५१ ॥
हरि हलधर ! आओ अपनी शक्ति दिखाओ।
राज जीत फतह कर नारी को ले आवो।
मैं शक्ति-परीक्षा लेना देना चाहूँ ॥ प्रद्युम्न-६५२ ॥

प्रद्युम्न की जीत :—

रणभंभायें वजवाई हुई लड़ाई।
लगता है वाणों की ही वर्षा आई।
प्रद्युम्न फेंकता वाण सहस्र वणाऊ ॥ प्रद्युम्न-६५३ ॥
गिर रहे धड़ाधड़ सैनिक घायल होते।
जो होश उन्हें रहता तो वे कुछ रोते।
दुर्दशा हुई सेना की गजब बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-६५४ ॥
हरि हलधर को आश्चर्य हो रहा भारी।
गुस्सा न आ रहा है क्या यह वीमारी।

क्यों इसे देखकर शांति हृदय में पाऊँ॥ प्रद्युम्न-३५५
क्यों अंग फड़क रहे हैं सारे।
मन क्रोध न आता, अरि मारे तो मारे।
क्या कारण है मैं अब किससे पूछवाऊँ॥ प्रद्युम्न-३५६
हरि बोले वत्स न क्रोध आ रहा मन में।
हम खड़े हुये हैं केवल सम्मुख रन में।
सुत लगा सोचने, इनको और चिढ़ाऊँ॥ प्रद्युम्न-३५७
मैं कुछ न चाहता मात्र रूक्मिणी चाऊँ।
यह दे दो तो मैं पांवों में गिर जाऊं।
सुन हलधर बोले-परभव में पहुँचाऊँ॥ प्रद्युम्न-३५८
कर बाण प्रहार गिराया हलधरजी को।
फिर देख अकेले कहता गिरधरजी को।
क्यों परेशान होते हो व्यर्थ, बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न-३५९
अब आशा छोड़ो नहीं मिलेगी रानी।
यह लगी वासुदेव को तीर सी बानी।
ले हाथ सुदर्शन चक्र चलाया बताऊँ॥ प्रद्युम्न-३६०
वह चला नहीं उद्विग्न बने हैं भारी।
सुत बोला सुनिये क्या न जिंदगी प्यारी।
लो धारो मन में संतोष शांति उपजाऊ॥ प्रद्युम्न-३६१
है अन्य हजारों स्त्रियाँ आपके भारी।
यह एक रूक्मिणी क्यों है इतनी प्यारी।
मत मरो इसी के पीछे, मैं समझाऊँ॥ प्रद्युम्न ३६२

सुन वासुदेव ने मल्ल युद्ध है छेड़ा।
हो जाये तेरा मेरा आज निवेड़ा।
जो चले नहीं (चक्र) तो चक्र न अभी चलाऊँ॥ प्रद्युम्न-६६३॥
सुत और पिता भिड़ पड़े परस्पर रण में।
जय और पराजय बदली जाती क्षण में।
वह दृश्य भयानक दर्शक मन चकराऊ॥ प्रद्युम्न-६६४॥
यह दृश्य देखकर रूक्मण मन घबराई।
वह दौड़ी दौड़ी बाबाजी पै आई।
तुम जाओ, युद्ध छुड़ाओ, मैं घबड़ाऊँ॥ प्रद्युम्न-६६५॥
पति-पुत्र मुझे है प्राणों से भी प्यारे।
है मुझे न चिन्ता कोई जीते हारे।
तुम जाओ, दया दिखाओ, या मैं जाऊँ॥ प्रद्युम्न-६६६॥

पितृ-सुत मिलन :—

सुन नारदजी उठ आये, खड़े हुये हैं।
आ बोले माधवा, किससे अड़े हुये हैं।
क्या बालक से भी लड़ना उचित, बताऊ॥ प्रद्युम्न-६६७॥
जब चक्र आपका चला नहीं था प्यारा।
क्या समझ नहीं पाये कुछ इसके द्वारा।
गोत्रीय व्यक्ति पर चक्र न चलता गाऊँ॥ प्रद्युम्न-६६८॥
यह पुत्र आपका ही है साफ सुनाया।
इत सुत ने आकर अपना शीश झुकाया।
दो क्षमा, आपसे बारम्बार रखमाऊँ॥ प्रद्युम्न-६६९॥

उत्पात किया यह शक्ति परीक्षा करने।
मैं यहाँ न आया सुनो मारने मरने।
बलशाली हूँ मैं सीधा क्यों झुक जाऊँ॥ प्रद्युम्न-[illegible]
सुत-दर्शन से हरि तृप्त हुये हैं मन से।
वह हर्ष बरसने पाता नहीं वचन से।
मैं गौरवशाली तेरे से कहलाऊँ॥ प्रद्युम्न-[illegible]
सुन। तू है यादव कुल का दीपक प्यारा।
[1]तू जीता हम सब हारे तेरे द्वारा।
कर रहे प्रशंसा बारम्बार गाऊँ॥ प्रद्युम्न-[illegible]
हरि खिन्न बने हैं मूर्च्छित देखे भाई।
प्रद्युम्न कुंवर के बात समझ में आई।
सब स्वस्थ हो गये तुरता-फुरत उठाऊँ॥ प्रद्युम्न-[illegible]
सब सैनिक मारो मारो कहते जाये।
वे मारे जो हो दुश्मन कोई आगे।
सेना ने कारण जाना सुख उपजाऊ॥ प्रद्युम्न-[illegible]
कर रहा प्रणाम बड़ों के सम्मुख जाके।
बलदेव बड़े खुश हैं अब गले लगा के।
आ पांडव कौरव मिले सकल यश-गाऊ॥ प्रद्युम्न [illegible]
क्या[2] बाल सूर्य भी पूज्य न माना जाता।
क्या तेज जन्म के समय न जाना जाता।
उत्तमता होती है अपने आप पुजाऊ॥ प्रद्युम्न-[illegible]
मिल लिया सभी से स्नेह बहुत ही पाया।

अब नभ स्थित यान उतर कर नीचे आया।
थी उसमें उदधि कुमारी यही बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-६७७ ॥
अवलोक उदधि को दंग हुये हैं सारे।
मिल गई जिसे हम खोज-खोज कर हारे।
है भाग्य हमारा तेज हेज उपाजाऊँ ॥ प्रद्युम्न-६७८ ॥
प्रवेशोत्सव :—
अथ पुरी द्वारका को है गया सजाया।
जल राजपथों पर गंधयुक्त छिड़काया।
नव द्वार बनाये तोरण बड़े सजाऊ ॥ प्रद्युम्न-६७६ ॥
हरि हलधर सुत को बैठे ले गयवर पर।
फूलो की वर्षा बरस रही है उपर।
सिर स्वर्णछत्र दो चामर भी ढुलवाऊँ ॥ प्रद्युम्न-६८० ॥
हो रहे नृत्य हो रहे गान भी भारी।
आ रही शहर में सजधज कर असवारी।
चतुरंग सैन्य सज चलता साथ सुहाऊ ॥ प्रद्युम्न-६८१ ॥
भर गई छते छज्जे भी भरे हुये है।
पथ भरे हुये है जनजन खड़े हुये हैं।
हो रही भीड़ सुत दर्शन की ललचाऊ ॥ प्रद्युम्न-६८२ ॥
कह रही स्त्रियाँ हम ऐसा ही सुत पावें।

---

(१) सर्व तो विजयमिच्छेत्, पुत्रादिच्छेत् पराजयम्।
(२) बालस्थापि खे पादाः, पतन्त्युपरि भूभृताम्।
तेजसा सह जातानां, वयः कुत्रोपयुज्यते ॥१॥

जो मिले न ऐसा तो वंध्या रह जावें।
है जिसका जाया उसका भाग्य सराहूँ॥ प्रद्युम्न-१८३
आ गया रूक्मिणी का अब महल मनोहर।
गज पर से उतरे चले गये हैं भीतर।
मिल गया सकल परिवार हर्ष बरसाऊ॥ प्रद्युम्न-१८४
श्री कृष्ण, रूक्मिणी और पुत्र है प्यारा।
तीनों के मन में बहती अमृत धारा।
है अलग अलग अनुभव पर एक बताऊँ॥ प्रद्युम्न-१८५
मैंने भी कौतुक बहुत बहुत दिखलाये।
पर कौतुक इसके नये सामने आये।
माँ बेटे दोनों बड़े योग्य बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न-१८६
जो कहा सुना वह कहा नहीं जाता है।
मन मन में रखता हमें न बतलाता है।
जो लिखा मिला, उस पर ही कलम उठाऊँ॥ प्रद्युम्न-१८७
आ भानु कुंवर सतभामाजी से बोला।
क्या सुना नहीं प्रद्युम्न कुंवर का रोला।
हो रही प्रशंसा केवल उसकी गाऊँ॥ प्रद्युम्न-१८८
जल-भुन कर राख बने हैं भामा-भानू।
प्रद्युम्न भानु सम, भानु चन्द्र सम मानू।
रवि सम्मुख शोभा कहाँ चाँद की गाऊँ॥ प्रद्युम्न १८९
ईर्ष्या का कीड़ा काट काट कर खाता।
ईर्ष्यालु ईर्ष्या कर करके मर जाता।

ईर्ष्या में कुछ भी लाभ नहीं बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-६६० ॥

उदारता का उदाहरण :—

आ दुर्योधन ने कहा कृष्ण से ऐसे।
मैं रहूँ यहाँ कितने दिन? लौटूँ कैसे।
जब तक न उदधि का निर्णय कुछ सुन पाऊँ॥ प्रद्युम्न-६६१ ॥
प्रद्युम्न कुंवर ने बल से उसको पाया।
ले उससे कैसे नहीं समझ में आया।
दुर्योधन बोला—उसको ही परणाऊँ॥ प्रद्युम्न-६६२ ॥
प्रद्युम्न आ गया समझ गया स्थिति सारी।
ला खड़ी कर दी सामने उदधि कुमारी।
लो, करो जचे सो, मैं ना टांग अड़ाऊँ॥ प्रद्युम्न-६६३ ॥
तुम ही हो इसको पाने के अधिकारी।
इसमें ही सहमति मानी जाय हमारी।
है जिसकी लाठी भैंस उसी की गाऊँ॥ प्रद्युम्न-६६४ ॥
वह बोला है यह पत्नी लघु भाई की।
यह उसे व्याहिये बात गई आई की।
इस उदारता पर लाखों बलि बलि जाऊँ॥ प्रद्युम्न-६६५ ॥

विवाह की तैयारी :—

अब उदधि आदि कन्याओं को ले आये।
श्री भानुकुंवर को बड़े ठाठ से व्याहे।
टल गया विघ्न आया जो व्याह टलाऊ॥ प्रद्युम्न-६६६ ॥
रुक्मिणी एक दिन वासुदेव से बोली।

मैं देखूँ मेरे बेटे की बंदोली।
हो गया युवा यह क्यों न इसे परणाऊँ ॥ प्रद्युम्न-६९७
सुन कृष्ण प्रधान सचिव को बुलवाते हैं।
जो करना उसकी आज्ञा फरमाते हैं।
सब बांटा जाये काम तुरत निपटाऊ ॥ प्रद्युम्न-६९८
यमसंवर को परिवार सहित बुलवाया।
आ गया प्रेम से समाचार जब पाया।
मिलने की थी उत्कंठा अधिक बताऊँ ॥ प्रद्युमन-६९९
सब पहले वाले श्वसुरपक्ष भी आये।
वे प्रत्न पत्नियों को भी लेते आये।
सम्मान सहित ठहराया सब को गाऊँ ॥ प्रद्युम्न-७००[1]
रूक्मिणी कनकमाला से गले मिली है।
दोनों के मन की तन की कली खिली है।
है तेरा अति उपकार कहाँ तक गाऊँ ॥ प्रद्युम्न-७०१
तू ने ही मेरे सुत को पोसा-पाला।
दिन आज मिला यह इसे चाहनेवाला।
तू ही है इसकी माता योग्य बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-७०२
मैने तो मेरे सुख के लिये किया था।
युवराजा का पद भी तो इसे दिया था।
जनमा[2] है जिसने बेटा उसका गाऊँ ॥ प्रद्युम्न-७०३

---

(१) पुरानी (पहले वाली पत्नियाँ)
(२) कांत्यां ज्यांरा सूत, जनम्यां ज्यांरा पूत।

प्रद्युम्न कुंवर को दुल्हा गया बनाया।
वस कल्प वृक्ष सम इसको गया सजाया।
चढ़ घोड़े, ले बारात चला सुखदाऊ ॥ प्रद्युम्न-७०४ ॥
दुल्हन बन वैठी जहाँ पचास कुंवरियाँ।
थी वहाँ बनाई अलग न चँवरियाँ।
थी बड़ी एक ही चँवरी सब विठलाऊ ॥ प्रद्युम्न-७०५ ॥
वज रहे वाद्य मंगलमय बड़े सुहाने।
स्वर मधुर मांगलिक गाये जाते गाने।
हो गया व्याह अब ठाठ से घर लौटाऊँ ॥ प्रद्युम्न-७०६ ॥
मिल रही आज खेचरियाँ से भूचरियाँ।
लगती है सुन्दर ज्यों स्ववासी परियाँ।
मन-वसन-रूप-गुण मंगलमय वतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-७०७ ॥
नव वधुओं को उल्लास सहित ले आया।
माँ रूक्मण ने महलों में इन्हें बधाया।
भर थाल मोतियों से ले आई बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-७०८ ॥
जो आये थे मेहमान सभी खुश खुश है।
हो नाखुश ऐसे कोई स्त्री न पुरुप है।
क्या कमी कृष्ण के घर मे है वतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-७०९ ॥
आतिथ्य और सत्कार सवाया पाया।
अन्न जिसका खाया क्यो जाये विसराया।
है खेल पुण्य का सारा यही वतलाऊँ ।'

पुण्य की देन :—

नर-जन्म-जाति-कुल तन धनधान्य सवाया।
स्त्री सुत विद्या धन रूप निरोगी काया।
ये पुण्य वृक्ष के शुभ फल हैं बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-७११
क्या पुण्यहीन ने जीवन में सुख पाया।
दुःख दरिद्रता ने उसका साथ निभाया।
मुख उसका लगता राक्षस तुल्य डराऊ ॥ प्रद्युम्न ७१२
सुख जिसे चाहिये वो नर पुण्य कमाये।
सुख देख जगत का क्यों मनको तरसाये।
सुख पाने का शुभ रास्ता मैं बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-७१३
प्रद्युम्न कुंवर का धर्म पुण्य है तीखा।
सुख दुःख का उसको नहीं कहीं भी दीखा।
सुख मित्र प्राप्ति का मिलने वाला गाऊँ ॥ प्रद्युम्न-७१४

हार किसे दूं :—

मधुराजा का लघुभ्राता कैटभ प्यारा।
सुरगति था पाया-तपश्चरण के द्वारा।
मधु बना वही प्रद्युम्न कुमार बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-७१५
वह स्वर्ग बारवें में ही अबतक रहता।
आ सीमधर प्रभुवर से ऐसे कहता।
मैं पूर्वजन्म वृत्तान्त जानना चाहूं ॥ प्रद्युम्न-७१६
प्रभुवर ने प्यारा हाल सुनाया सारा।
मधुभाई का भी सारा मिला इशारा।

वह मुझे मिलेगा? ऐसा प्रश्न उठाऊँ॥ प्रद्युम्न-७१७ ॥
तू स्वयं कृष्ण का पुत्र बनेगा प्यारा।
सौतेला भाई होगा वही तुम्हारा।
वह मित्र बनेगा तुझको सुख उपजाऊ॥ प्रद्युम्न-७१८ ॥
सुन वंदना करके पुरी द्वारिका आया।
निज जन्मभूमि के दर्शन को ललचाया।
आ कहा कृष्ण से, जो कुछ सुना, सुनाऊँ॥ प्रद्युम्न-७१९ ॥
मैं जनमूंगा सुत यहाँ आपके आई।
प्रद्युम्न कुंवर से होगी प्रीत सवाई।
यह दिव्य हार लो, गुण इसके गाऊँ॥ प्रद्युम्न-७२० ॥
जो पहनेगी, वह होगी मेरी माता।
कर सूचना देव है चला जाता।
श्री कृष्ण सोचते हार किसे पहनाऊँ॥ प्रद्युम्न-७२१ ॥
सतभामा को दूं हार प्यार हो जाये।
मनवाली ईर्ष्या और खार खो जाये।
प्रद्युम्न मित्र जो हो सतभामा-जाऊँ॥ प्रद्युम्न-७२२ ॥
कर निश्चय सतभामा को पास बुलाया।
आ रही अभी मैं उत्तर यों दिलवाया।
प्रद्युम्न पक्ष को मैं मजबूत, बनाऊँ॥ प्रद्युम्न-७२३ ॥

दोहा—

विद्या से प्रद्युम्न ने, जाना सारा हाल।
खड़ा कर रहा बीच में, एक बड़ा जंजाल।

तर्ज—सूल की :—

आ माँ से बोला पुत्र और क्या चाहिये।
जो इच्छा हो तो मेरे से अब कहिये।
दे गया देवता हार-सार समझाऊँ ॥ प्रद्युम्न-७२४

सौ पुत्रो जितना एक पुत्र तू प्यारा।
क्यों करूँ फौज मैं खडी हार के द्वारा।
दे राय स्वयं की, जो मैं प्रश्न उठाऊँ ॥ प्रद्युम्न-७२५

तू खुश है? वह जो भामा को मिल जाये।
है हानि न मेरी, किन्तु न्याय पर आये।
है उनके सुत, संतोष उन्हें हो, गाऊँ ॥ प्रद्युम्न-७२६

फिर हार किसे दिलवाया जाये माजी।
क्यों हरी जाये हाथ चढो यह वाजी।
मैं जांबवती को देना उचित, बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-७२७

सुत नहीं उसी के और मुझे वह प्यारी।
वह भोली-भाली बहुत भली बेचारी।
जब पूछ लिया तो मेरी राय बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-७२८

उठ जांबवती के पास चला अब आया।
क्या हार दिलावूं? किस्सा खोल सुनाया।
हाँ जो मैं पांऊ तेरा गुण न भुलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-७२९

यह कोशिश होगी हार तुम्हें मिल जाये।
क्यों नहीं कमल की कली कली खिल जाये।
विद्या से भामा इसे बनाया बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-७३०

अब जांववती भामा बन करके आई।
तब कहा कृष्ण ने मौसम बड़ी सुहाई।
लो चलो बाग में तुम्हें घुमा कर लाऊँ॥ प्रद्युम्न-७३१ ॥
आ गये बाग में माधव-भामा चल के।
की क्रीड़ा उनने विविध भांति रत्य मिल के।
फिर बोले-ले यह हार तुझे पहनाऊँ॥ प्रद्युम्न-७३२ ॥
यो जांववती ने हार प्रेम से भाया।
श्री कृष्ण समझने सके नहीं जो पाया।
सुन जांववती पायेगी-यही बताऊँ॥ प्रद्युम्न-७३३ ॥

ाह नहीं दूसरा :—

सतभामा आई, बोली, हार दिलावो।
कुछ देर हो गई मुझे माफ फरमावो।
सुन कृष्ण सोचते बड़ा अचम्भा पाऊँ ॥ प्रद्युम्न-७३४ ॥
वह अभी दिया था अभी मांगती फिर से।
क्या बोझ नहीं उतरा है मेरे सिर से।
मैं हार दुवारा कहो कहां से लाऊँ॥ प्रद्युम्न-७३५ ॥
जो हार नहीं है तो क्यों मुझे बुलाया।
सतभामा ने ही ऐसा प्रश्न उठाया।
मैं हार दे चुका अभी तुम्हें बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-७३६ ॥
क्या पागल हो जो मांग रही हो दुवारा।
मैं कब आई? कब पाया? घर तुम्हारा।
मैं नहीं ले गई हार सही बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न-७३७ ॥

सुन सोच रहे श्री कृष्ण हुआ धोखा।
जीवन में ऐसा है यह पहला मौका।
जो हुआ हो गया उसको यहाँ छिपाऊँ।। प्रद्युम्न-॥
लो दिया नहीं तो अभी दिया जायेगा।
जो कहा-बुलाया, व्यर्थ नहीं जायेगा।
ला हार दूसरा दिया बहुत चमकाऊ।। प्रद्युम्न-॥
भामा ने जाना दैवी हार यही है।
है मूल्यवान पर बिल्कुल भार नहीं है।
ले चली गई वह हार विशेष बताऊ।। प्रद्युम्न-॥
नवनीत ले गई जाम्बवती महारानी।
भामा को छाछ मिली है आधा पानी।
सब खेल पुण्य का ही है ऐसा गाऊँ।। प्रद्युम्न-॥

पाँच बधाइयाँ :—

ये साथ-साथ हो गर्भवती हो जाती।
सुत रत्नों को दे जन्म शांति सुख पाती।
सुत जांबवती का पुण्यवान बतलाऊँ।। प्रद्युम्न-॥
सुरभव से लाया रूप-राशि गुण भारी।
लगता है मानों हो कोई अवतारी।
सहयोग परिस्थितियों का भी बतलाऊँ।। प्रद्युम्न-॥
भामा का सुत भी पुण्यवान था प्यारा।
पहचाना सबने लक्षण व्यंजन द्वारा।
समवायों[1] का भी वर्णन यहाँ दुहराऊँ।। प्रद्युम्न-॥

---

(१) समवाय पांच है :—काल, स्वभाव, नियति, कर्म, पुरु

सुत हुये सचिव के सारथि सेनापति के।
ये पांच बधाई आई है यदुपति के।
खुशियों में खुशियाँ होती यही बताऊँ॥ प्रद्युम्न-७४५ ॥
सुत जांबवती का 'शांबकुमार' कहलाया।
भानु का आया "सुभानुकुमार" सुहाया।
अब मंत्री-सुत को "बुद्धिसेन" बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न-७४६ ॥
सुत सेनापति का "श्री जयसेन" सुहाया।
सुत सारथि वाला पद्मनाभि कहलाया।
सुत पांचो प्यारे सारे यश-फैलाऊ ॥ प्रद्युम्न-७४७ ॥

शाब और शिक्षा :—

सुत शाब सुभानु सभी के मन को भाते।
ये दूज-चांद ज्यों प्रतिदिन बढ़ते जाते।
बालक का जीवन दोष रहित बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न-७४८ ॥
वे पुण्य-पाप या साच-झूठ क्या जानें।
वे अपने को या अपनी माँ को जानें।
जो कुछ है सो सम्मुख है यही बताऊँ॥ प्रद्युम्न-७४९ ॥
बालक का रूप निहारो या ईश्वर का।
यह रखा नमूना मानो उसके घर का।
शिशु मूल जगत का बीज स्वच्छ बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न-७५० ॥
ये शिक्षा पाने लायक बन जाते हैं।
प्रद्युम्न भानु अब इनको सिखलाते है।
की प्राप्त निपुणता विद्याओं में गाऊँ॥ प्रद्युम्न-७५१ ॥

मित्रता का माप :—

प्रद्युम्न शांब का प्यारा मित्र बना है।
मित्रों के द्वारा मित्र पवित्र बना है।
सन्मित्र मिले तो किस्मत अच्छी गाऊँ ॥ प्रद्युम्न-॥
जो पाप नहीं करने दे, डट के रोके।
हित मार्ग बताये बेखटके बेमौके।
होने दे प्रगटन जो भी बात-छिपाऊ ॥ प्रद्युम्न
विपदा में उसको छोड़े नहीं अकेला।
गुरु को न छोड़ता जैसे विनयी चेला।
दे सहायता तन-धन से पार-पुगाऊ ॥ प्रद्युम्न-॥
स्त्री-मित्र-सहोदर जीवन के सुख साथी।
किस्मत हो ये सब ढूंढ-ढूंढ दिलपाती।
प्रद्युम्न-शांब की मैत्री श्रेष्ठ-बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-॥

शांब की जीत :—

ये चारों भाई साथ रहा करते हैं।
रत क्रीड़ाओं में, नहीं कभी डरते हैं।
चारों की प्रकृति अलग-अलग बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-॥
अथ राज सभा में चारों आयें।
कर पूज्यजनों को प्रणमन मन हरषाये।
चारों से शोभित हुई सभा बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-॥
बलदेव में पाडवों ने है चाहा ऐसा।
हम करें परीक्षा इनमें मतिबल कैसे।

दो दो की जोड़ी बैठो बड़ो खिलाऊ॥ प्रद्युम्न-७५८ ॥
रख एक कोटि मुद्रायें ऐसे बोले।
जो जीते जूवा यह साराधन बोले।
क्रीडा में जीता शांव, प्रभाव जमाऊ॥ प्रद्युम्न-७५६ ॥
फिर कुक्कट रण में शाब विजय को पाया।
दो क्रोड़ मोहरें जीत उठाकर लाया।
हो रहा पराजित कुंवर सुभानु बताऊँ॥ प्रद्युम्न-७६० ॥
प्रद्युम्न कुंवर ने स्थिति को है पहचाना।
धन जीत अकेले हम को क्यों ले जाना।
सब बांट दिया है आधा आधा गाऊँ॥ प्रद्युम्न-७६१ ॥
फिर कन्दुक-क्रीड़ा में भी सुभानु हारा।
धन चार कोटि का गया हाथ से सारा।
फिर वास्तुकला में आठ क्रोड़ जितवाऊँ॥ प्रद्युम्न-७६२ ॥
फिर हार परीक्षण में भी सोलह कोटि।
बत्तीस कोटि की रकम नहीं है छोटी।
जा मुष्टि-प्रसारण द्वारा गई बताऊँ।॥प्रद्युम्न-७६३ ॥
फिर ऊठक-बैठक में धन चौसठ कोटि।
ले गया शाब,, जिसकी है किस्मत मोटी।
जय और पराजय भाग्याधीन बताऊँ॥ प्रद्युम्न-७६४ ॥
हय क्रीडा में शत अष्टाधिक धन माया।
है किसने प्यारो विजय और धन पाया।
फिर मल्लयुद्ध भी गया रचाया गाऊँ॥ प्रद्युम्न-७६५ ॥

झुरु रहा सुभरनू वहां लाज के मारे।
वह बना पराजित बुरी तरह से गाऊँ ॥ प्रद्युम्न-७७३ ॥
चिढ़ करके भामा उसे उठाले भागी।
था वहां न उसका भानु सिवा अनुरागी।
उस धन का क्या कुछ हुआ वही बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-७७४ ॥

शांब सत्तू शाला :—

ले नहीं गया जो धन वह कुंवर सुभानू।
हो "शाबदानशाला" स्थापित में भानू।
प्रद्युम्नकुंवर को राय उचित ठहराऊँ ॥ प्रद्युम्न-७७५ ॥
याचक गण आते दान यहा से पाते।
श्री शाबकुंवर का यशोगान वे गाते।
हो गया इसी का नाम-सुयश बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-७७६ ॥
धन कभी न घटता दान दिये जाने से।
कर[1] शोभित होते दान दिये जाने से।
दो[2] थोड़े में से थोडा यही बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-७७७ ॥
नर दानी ही तो दान दिया करते हैं।
धन लोभी मानव धन-धन कर मरते हैं।
दो दान, आखिरी फल है मोक्ष बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-७७८ ॥

---

(१) "दानेन पाणिर्नतु कङ्कणेन"
(२) ग्रासादर्धमपि ग्रास—मर्थिभ्यः किं न यच्छसि।
इच्छानुरूपो विभवः, कदा कस्य भविष्यति।

आखिर मैं घर-घर फैली बात बताऊँ ।। प्रद्युम्न-७८५ ।।
जब सुनी कृष्ण ने बातें मन दुःख पाया ।
क्या ऐसा निकला जांबवती का जाया ।
मैं जाऊँ उससे पूछूं पता लगाऊँ ।। प्रद्युम्न-७८६ ।।
आ जाबवती से सारी बात कही है ।
वह बोली ऐसी बाते सत्य नहीं है ।
फैलाई हैं अफवाहें, झूठी गाऊँ ।। प्रद्युम्न-७८७ ।।
माँ सुत को भोला-भाला मानती आई ।
सुत सीधा-सादा रहता नही सदाई ।
जो हों न तुझे विश्वास खास दिखलाऊँ ।। प्रद्युम्न-७८८ ।।
हरि स्वयं ग्वाल बूढ़े से बन जाते हैं ।
झुक गई कमर सटकर भी कंपाते हैं ।
हो गये श्वेत सिर बाल विशेष बताऊँ ।। प्रद्युम्न-७८९ ।।
तन अस्थि पंजरे जैसा चलता खाली ।
मुख लाल टपकती गड़ी नेत्र की प्याली ।
ले रहा धौंकनी जैसा सांस बताऊँ ।। प्रद्युम्न-७९० ।।
फिर जाबवती को गोपी सरस बनाई ।
जो उसकी शोभा जाये नहीं बताई ।
फिर भी मैं थोड़ी-थोड़ी यहाँ बताऊँ ।। प्रद्युम्न-७९१ ।।
मुख चाद सरीखा केश नाग से काले ।
दो नयन बाण हैं मार गिराने वाले ।
होठों की लाली चिरमी तुल्य बताऊँ प्रद्युम्न-७९२ ।।

पर शांव कुंवर सा इन सबको क्या धारे।
है उसकी आखे नशाबाज बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-८०० ॥
उन चेष्टाओं का गलत अर्थ है लेता।
दुख इन दोनों को खड़ा व्यर्थ है देता।
कहे ग्वाला—जाने दो मैं लाज बचाऊँ ॥ प्रद्युम्न-८०१ ॥
वह हटा नहीं, तब वृद्ध कहे हट जाओ।
मत मेरी अपनी नाक यहाँ कटवाओ।
दोनों की इज्जत है इसमें बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-८०२ ॥
सुन शांव कुंवर ने लात जोर से मारी।
गिर गया वृद्ध वह गोपी खड़ी बेचारी।
कर पकड़ घसीटा गोपी को बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-८०३ ॥
इतने में ग्वाला-गोपी नजर न आये।
थे जाबवती के साथ कृष्ण मन भाये।
हुई शांवकुंवर की हालत क्या बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-८०४ ॥
निर्लज्ज! न अपनी मां से भी तू नहीं चूका।
उत्पन्न हुआ तू किसके मांस लहू का।
क्यों आया मेरे कुल को दाग लगाऊँ ॥ प्रद्युम्न-८०५ ॥
सुन शाव कुंवर घर भीतर भाग गया है।
सह जांबवतो का भ्रम भी भाग गया है।
श्री कृष्ण कहे क्या और तुझे दिखलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-८०६ ॥

ःरा निर्वासन का दंड :—

अब शावकुंवर को क्रोध पिता पर आया।

क्यों समझाने को रची गई यह माया।
कह देते मुझको पास बुला, बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न०॥
क्यों मैंने मेरी माँ पर हाथ उठाया।
क्यों लात लगा ग्वाले को वहाँ गिराया।
इस घटना से मैं मन ही मन शरमाऊँ ॥ प्रद्युम्न०॥
जो बात प्रगट हो जाये, तो है मरना।
हो प्रगट न इसके लिये कहो क्या करना।
जो कहे उसी के मुख में कोल ठुकाऊँ ॥ प्रद्युम्न०॥
अब कील छोलता लेकर हाथ कटारी।
आ गये वहाँ पर इतने में गिरधारी।
पूछा, क्या करता है रे! शाव सुहाऊ॥ प्रद्युम्न०॥
जो कुछ की बात कहेगा उसके मुख मे।
यह कोल लगाने की सोची है दुःख मे।
सुन कृष्ण सोचते योग्य न इसे बताऊँ॥ प्रद्युम्न०॥
मैं तुझे देश निर्वासन का दंड देता।
है कौन जनक जो अनरथ यह सह लेता।
सुन शावकुंवर की आंखें खुली बताऊँ॥ प्रद्युम्न०॥

प्रद्युम्न को शरण :—

मैं तोन खंड से बाहर कहाँ पर जाऊँ।
अवशिष्ट समय सुख-दुःख के साथ बिताऊँ।
इस कोप-वन्हि को कैसे शांत कराऊँ॥ प्रद्युम्न०॥
आ माँ से हाल सुनाया सारा।

आदेश मिला जो वासुदेव के द्वारा।
माँ बोली बेटे ! कैसे तुझे बचाऊँ ॥ प्रद्युम्न-८१४ ॥
है मेरे पास उपाय न इसका कोई।
यदि रक्षक है तो, हो सकते हैं वोही।
फिर माँ बोली मैं रास्ता एक बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-८१५ ॥
प्रद्युम्न शरण में जाकर बच सकता है।
नींबू के रस में जीरा पच सकता है।
सुन शाब कुंवर ने सोचा, यह अजमाऊँ ॥ प्रद्युम्न-८१६ ॥
जा कही ज्येष्ठ भ्राता से अपनी गाथा।
अपराध बड़ा यह क्या न कहा है जाता।
क्या चाह रहे हो, मुक्ति तुम्हें दिलवाऊँ ॥ प्रद्युम्न-८१७ ॥
दे दंड पिताजी ने तो न्याय किया है।
तू ने हो उनका अविनय बड़ा किया है।
क्या समझ गया तू बातें जा समझाऊँ ॥ प्रद्युम्न-८१८ ॥
उद्देश्य दंड का उसे सुधारा जाये।
है उचित न अपराधी को मारा जाये।
वह पूर्ण-प्रयोजन हुआ सही मैं गाऊँ ॥ प्रद्युम्न ८१९ ॥
अपराधी समझे अपने को अपराधी।
हो सजा भले फिर पूरी चाहे आधी।
वर्त्तन में परिवर्त्तन हो, यही बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-८२० ॥
तुम करो न चिंता कोशिश मैं करता हूँ।
मैं सफल बनूंगा, आशा यह धरता हूँ।

प्रद्युम्न कृष्ण के पास गया बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न-८१
अत्यन्त नम्रता से वह ऐसे बोला।
हे तात! शाब है, अभी बहुत ही भोला।
जो किया, उसी के लिये क्षमा मैं चाहता हूँ॥ प्रद्युम्न-८२
दो उसे सुधरने के हित कोई मौका।
वह नहीं दुबारा खायेगा अब धोखा।
दो समय, अभी मैं उसे यहाँ पर लाऊं॥ प्रद्युम्न-८३
जो होता केवल मेरा ही अपराधी।
तो सजा छोड़ता कर भी देता आधी।
वह जनता का अपराधी बड़ा बताऊँ॥ प्रद्युम्न-८४
क्या ऐसो को भी माफ किया जाता है।
स्थल उच्छृंखल को नहीं दिया जाता है।
विश्वास प्रजा का किसके लिये गवाऊं॥ प्रद्युम्न-८५
क्या बता खातिरी, सुधर गया दिल उसका।
ले लिया वचन है मैंने भद्र पुरुष का।
ये बातें कहने क्या मैं घर-घर जाऊं॥ प्रद्युम्न-८६
क्या कोई रास्ता नहीं निकल सकता है।
हाँ, एक बात से हल भी मिल सकता है।
वह क्याा है बोलो, वही मार्ग अपनाऊं॥ प्रद्युम्न-८७
सतभामा पीछे बैठे शांबु आगे।
ले हाथी होदे लाये पुर में सागे।
तो उसे माफ कर सकता हूँ बतलाऊं॥ प्रद्युम्न-८८

सुन कुंवर सोचता, भामा यह न करेगी।
वह पहले ही जलती है, हाँ न भरेगी।
की बात पिताजीने यह बात टलाऊँ ॥ प्रद्युम्न ८२६ ॥
आ कथ शांब से करो न चिन्ता भाई।
तत्काल योजना उसने एक न बनाई।
लो चलो, शहर से बाहर मैं फरमाऊँ ॥ प्रद्युम्न-८३० ॥
हो जो भी आज्ञा वही मुझे करना है।
आज्ञा पर जीना आज्ञा पर मरना है।
मैं आप्त वचन सम भ्रातृ-वचन अपनाऊँ ॥ प्रद्युम्न-८३१ ॥

पुरुष से कन्या :—

सतभामा का था सुन्दर एक बगीचा।
वे वहाँ आ गये कोई न ऊँचा नीचा।
क्या कहते हैं अब वहीं यहाँ बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-८३२ ॥
अब शाब कुवर को उसने युवती बनाया।
नवयौवन जिसके अंग अंग पर छाया।
सब श्रृंगारो से सज्जित है बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-८३३ ॥
सब पाठ पढ़ाया जो कुछ इसको करना।
मैं यहीं बैठता नहीं अकेले डरना।
मति मेरी क़िस्मत तेरी यहाँ लड़ाऊँ ॥ प्रद्युम्न-८३४ ॥
आई है भामा सदा घूमने आती।
इस कन्या पर आ नजर स्वतः पड़ जाती।
है कौन, इसे मैं पूछूं, क्यो शरमाऊँ ॥ प्रद्युम्न-८३५ ॥

तू कौन कहाँ से आज यहाँ पर आयी।
क्यों दुमनी-रोनी सूरत भली बनाई।
जो सच है कह दे तेरा कष्ट मिटाऊँ॥ प्रद्युम्न-८॥
सुनते ही बाला फूट-फूट कर रोई।
जग मे न हितैषी प्यारा मेरा कोई।
मैं तेरी हूँ तू क्यों घबराये, गाऊँ॥ प्रद्युम्न-८॥
भामा ने उसको गोद बिठा पुचकारा।
वह लगीं सुनाने अपना जीवन सारा।
मैं राजकुमारी बहुत बड़ी कहलाऊँ॥ प्रद्युम्न-८॥
मैं मामाजी के पास रही बचपन से।
अलगाव नही वे रखते अपने मन से।
अब समझ वयस्क पिता ले आये, बताऊँ॥ प्रद्युम्न-८॥
सोये आ बन में नींद न मुझको आई।
उन स्मृतियों ने ही बेसुध मुझे बनाई।
जग कर या रोकर बीती रात-बताऊँ॥ प्रद्युम्न-८॥
तज शिविका बाहर आकर भूपर सोई।
पीछे जो होवा हुआ वही का वोही।
वे चले गये मैं पीछे ही रह जाऊँ॥ प्रद्युम्न-८॥
उनने तो सोचा शिविका में है बाला।
कर पर्दा ऊँचा उनने नहीं संभाला।
मैं पीछे रहकर रोकर मन पछताऊँ॥ प्रद्युम्न-८॥
रह गई अकेली सुबक-सुबक कर रोती।

आश्वस्त आपके दर्शन पार होती।
हो गई सयानी कहो कहाँ मैं जाऊँ॥ प्रद्युम्न-८४३ ॥
भामा कंस गाई :—
सुन भामा भोली चक्कर में है आई।
यह नहीं लुगाई कोई बड़ी ठगाई।
मन सोच न पाई कैसे आज ठगाऊँ॥ प्रद्युम्न-८४४ ॥
तू कुंवर सुभानू से जो व्याह रचाये।
मैं महलों में ले जाऊँ, तू सुख पाये।
मैं साफ बताऊँ, जरा नहीं सकुचाऊँ॥ प्रद्युम्न-८४५ ॥
जो मुझे आपकी प्यारी बहू बनाओ।
मैं राजी हूँ तुम महलों में ले जावो।
इसमें मैं अपनी क़िस्मत तेज बताऊँ॥ प्रद्युम्न-८४६ ॥
गज हौदे पर बिठलाया इसको आगे।
बैठी है भामा पीछे क़िस्मत जागे।
बाजार बीच हो आती-यही बताऊँ॥ प्रद्युम्न-८४७ ॥
जो असलियत है उसका पता न पाया।
ला अंतेउर में अब उसको बिठलाया।
जो खाये बतला वही तूझे खिलाऊँ॥ प्रद्युम्न-८४८ ॥
करती है इसकी चिन्ता भामा रानी।
हो रही इसी पर मन से बड़ी दिवानी।
मैं श्रेष्ठ पतोहू ऐसी और न पाऊँ॥ प्रद्युम्न-८४९ ॥
प्रद्युम्नकुमार हुआ है हर्षित मन मे।

हो गया काम अब क्या है निवासन में।
जा जांबवती को समाचार दे आऊं॥ प्रद्युम्न
जा कहा कृष्ण से काम हुआ है वैसा।
निर्वासन वापिस लेने के हित जैसा।
मैं सफल हो गया खुशियाँ बहुत मनाऊं॥ प्रद्युम्न

वसंत और सुभानु :—

ऋतुराजा का आगमन सुहाया मन को।
चल मंद सुगंधित कहता यही पवन को।
मैं जग का वातावरण पलटता जाऊं॥ प्रद्युम्न
पुष्पों का सौरभ फैला गगनाङ्गण में।
शुचि गंध फूटती अवनी के कण-कण मे।
अलिगण का गुंजारव है बड़ा लुभाऊ॥ प्रद्युम्न
कोयलिया मीठी मीठी कूक सुनाती।
ऋतुराजा का यश ढोल बजाकर गाती।
विरहिणियो का दुश्मन है बड़ा बताऊं॥ प्रद्युम्न
उल्लास नया उत्साह उमंग जगी है।
सखियों में क्रीड़ाओं की होड़ लगी है।
आ गई कुमारी झूला उसे झुलाऊं॥ प्रद्युम्न
आया है वहाँ सुभानु देख चकराया।
यह रूप स्वर्ग से उतर यहाँ पर आया।
अब किसी तरह से इसको मैं पाजाऊं॥ प्रद्युम्न
रुक गया वहीं पर पैर नहीं खिसकता।

काया से जीवित मनसे मृत कहलाता।
होकर के मूर्छित गिरा वहीं बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न-८५७ ॥
कर सावचेत मंत्री अब घर पर लाया।
पूछा तो मन का सच्चा हाल बताया।
है दवा वैद्य सब हाजिर अभी कराऊँ॥ प्रद्युम्न-८५८ ॥

नाचु का विवाह :—

जा भामाजी से किस्सा सकल सुनाया।
क्यों नही अभी तक बेटे को परणाया।
क्या देरी है मैं अभी अभी परणाऊँ॥ प्रद्युम्न-८५९ ॥
सो कन्यायें एकत्रित की थी भारी।
वह परख चुकी थी उनको प्रकृति सारी।
सुत वधू इन्हें मैं अपने लिये बनाऊँ॥ प्रद्युम्न-८६० ॥
सतभामा से तब बोली शांबकुमारी।
कर इनके कर पर रखूं स्वयं का भारी।
मैं मेरा बॉया हाथ उन्हें पकड़ाऊँ॥ प्रद्युम्न-८६१ ॥
सतभामा ने यह एक कुतूहल माना।
जो रहस्य छिपा है उसे नही पहचाना।
मैं तुझे नहीं नाराज बनानी चाहूँ॥ प्रद्युम्न-८६२ ॥
आ गया पुरोहित व्याह रचाने वाला।
कर बाया उसने आगे है कर डाला।
दो हाथ दाहिना तब मैं विधि करवाऊँ॥ प्रद्युम्न-८६३ ॥
सतभामा बोली कर हो चाहे जैसा।

है दांये वांये में भी अंतर कैसा।
तुम मंत्र बोलकर जावो मैं वतलाऊं॥ प्रद्युम्न.
कर पकड़ सुभानुकुंवर का वायें कर से।
कर कन्याओं के पकड़े दायें कर से।
सम्पन्न हुई वेदोक्त, विधि वतलाऊँ॥ प्रद्युम्न..

कन्या से पुरुष :—

उठ महलों में आ रूप वदलता अपना।
सब कन्यायों ने देखा काई सपना।
वे पूछ न पाइ, समझ न पाई, वताऊँ॥ प्रद्युम्न..
आ गया सुभानु महल में विस्मय पाया।
शय्या पर वैठा शाव नगर में आया।
यह क्या माया है, माँ से जा वतलाऊं॥ प्रद्युम्न..
वह उल्टे पावों दौड़ा माँ पै आया।
जो आंखों देखा हाल वही वतलाया।
माँ वोली तू डरपोक वड़ा वतलाऊं॥ प्रद्युम्न
इन महलों में वह शाव कहां से आवे।
वह कहीं भटकता अपना समय वितावे।
तुम चलो महल में वैठा अभी दिखलाऊं॥ प्रद्युम्न
इन महलों में वह शांव कहाँ से आवे।
वह कहीं भटकता अपना समय वितावे।
तुम चलो महल में वेठा अभी दिखलाऊं॥ प्रद्युम्न..
सतभामा ओर सुभानु साथ मे आवे।

है शाबकुंवर ही निश्चय यह कर पाये।
जो हुक्म करे तो हल्ला अभी मचाऊँ॥ प्रद्युम्न-८७० ॥
इतने में उठकर शाब स्वयं ही आया।
माता के सम्मुख अपना शीश झुकाया।
कर चरणस्पर्श हो गया खड़ा बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न-८७१ ॥
सतभामा क्रोध भरे स्वर से यों बोली।
क्या समझ लिया है तूने मुझको भोली।
क्यों आया मेरे पर धूर्त्त ठगाऊ॥ प्रद्युम्न-८७२ ॥
मैं आया हूं या आप मुझे ले आई।
छिप सकती कैसे जो कुछ रही सचाई।
सौ कन्याओं से ब्याया मैं बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न-८७३ ॥
आ गई याद घटनाये जो भी बीती।
हो गई आज भामा की बड़ी फजीती।
क्यो मैं ही मैं हरबार ठगाती जगाऊँ॥ प्रद्युम्न-८७४ ॥
ठग पिता और है ठगती तेरी माई।
ठग स्वयं बड़ा तू ठग है तेरा भाई।
ओ धूर्त्त! लाज क्यों आई नहीं बताऊँ॥ प्रद्युम्न-८७५ ॥

वहुये ले आया :—

कुछ दिया जबाव न सुनी गालिया सारी।
ले आया है सौ वधुयें अपनी प्यारी।
खुश जावंवती हो रही बहुत बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न-८७६ ॥
सुख दुःख की लीला अजब-गजब की भाई।

परिभाषा इनकी जाये नहीं बताई।
जो मन माने वह सुख दु'ख है बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न...
सुख दुःख में ज्ञानी जन हैं रखते समता।
समता में आत्मा राम रमैया रमता।
मैं अपने मन को समता बीच रमाऊँ॥ प्रद्युम्न...
ये चली गई तो अन्य लड़कियां लाऊँ।
ला मेरे सुत को हर्ष सहित परणाऊँ।
जो बीत चुकी उसको मैं क्यों दुहराऊँ॥ प्रद्युम्न...
शत कन्याओं के साथ विवाह रचाया।
श्रीमान सुभानु कुंवर ने अति सुख पाया।
सुख पाते नर पुण्यवान यही ठहराऊँ॥ प्रद्युम्न...

'वैदर्भी की मांग :—

रुक्मिणी एक दिन सोच रही है मनमें।
आ गई मेरी भतीजी अब यौवन में।
मैं उसको मेरे बेटे से परणाऊँ॥ प्रद्युम्न...
अब कुंदनपुर में दूत भेजती अपना।
क्या बिना बताये, अर्थ बतायें सपना।
जा वैदर्भी की मांग करो बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न...
आ दूत रुक्मणा राजा को प्रणाम करता।
बतलाता अपने भावों की तत्परता।
भेजा है जिसने नाम उसी का गाऊँ॥ प्रद्युम्न...
प्रद्युम्न कुंवर का दुनिया में यश छाया।

मैं उसके हित कन्या को मंगनी लाया।
सुन रुक्म नृपति को गुस्सा चढ़ा बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-८८४ ॥
जा कह दे कन्या मेरी नहीं मिलेगी।
यह अटल प्रतिज्ञा मेरी नहीं हिलेगी।
क्या कारण इसका यही जानना चाहूँ ॥ प्रद्युम्न-८८५ ॥
क्यों करूं सफाई पेश जरूरत क्या है।
क्यों अभी बताऊँ श्रेष्ठ मुहूरत क्या है।
कुछ और सोच लो बात वही दुहराऊँ ॥ प्रद्युम्न-८८६ ॥
कर तू न धृष्टता चुप रह दूत सयाने।
क्यों जिद तानता अपनी बात मनाने।
कहता न कुछ[2] अधिक[1] इतने मे समझाऊँ ॥ प्रद्युम्न-८८७ ॥
वह वासुदेव सुत रूप कला-गुणधारी।
वैदर्भी को पाने का है अधिकारी।
वर ऐसा योग्य न अन्य मिलेगा गाऊँ ॥ प्रद्युम्न-८८८ ॥
सुन कृष्ण प्रशंसा क्रोध जगा है मनमें।
वह लगा निकलने उसके-बुरे बचन में।
मुख जो न शोभती गाली देता बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-८८९ ॥
वह मेरा दुश्मन काला कपटी ग्वाला।
रुक्मिणी बहन का वही भगाने वाला।
क्यों जाई उसके जाये को परणाऊँ ॥ प्रद्युम्न-८९० ॥
रह जाये मेरी बेटी भले कुंवारी।

१—सहज-भाई।

हूं यादव कुल में क्या मेरी मति मारी।
इससे तो अच्छा भंगी को परणाऊँ॥ प्रद्युम्न॰
क्या हुआ जो[2] आप[1] इतने नीचे उतरे।
क्यों नृप के मुखसे नीची वाणी निकरे।
हो आप रुक्मिणी के सहेज हां बताऊं॥ प्रद्युम्न॰
मैं जाता हूँ, जो कहो वही कह दूंगा।
कहने में मैं भी पीछे नहीं रहूंगा।
आ गया द्वारिका समाचार बतलाऊं॥ प्रद्युम्न॰
प्रद्युम्न सामने सारी बात कही है।
कह उठी रुक्मिणी रूक्म कुराज्ञ नहीं है।
सुत बोला-मां! मैं उसे ब्याह कर लाऊँ॥ प्रद्युम्न॰

की कारास्तान :—

ले शांबकुमार को कुंदनपुर चल आया।
दोनों ने चांडालों का वेश बनाया।
प्रद्युम्न गा रहा गीत रसीले बताऊँ॥ प्रद्युम्न॰
गाने से तान मिलाता शांब बजाता।
सुन कर के कुंदनपुर मोहित हो जाता।
है गायन वादन श्रेष्ठ कला बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न॰
स्वर सप्त, राग षष्ट, छत्तीसों रागिनियां।
इक्कीस मूर्च्छना, संगीतों की दुनियां।
है तानें भी उनचास खास बतलाऊं॥ प्रद्युम्न॰
गुण और प्रभाव समय भी है गाने का।

जो जाने समझे उसको बतलाने का।
संगीत शास्त्र की रचना सरस बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-८९८ ॥

गीत का प्रभाव :—

स्वर मादकता से श्रोता खींचे आते।
सुन गगनाङ्गण में पक्षी भी मंडराते।
था हाल स्त्रियों का अजब गजब बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-८९९ ॥
संगीत श्रवण के लिये देव भी अटके।
वे कहते नंदन वन में क्यों हम भटके।
संगीत-प्रीत से सुने यही बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-९०० ॥
इन दोनों के प्रति द्वेष लेश नहीं आया।
मत छूओ ऐसा कहकर नहीं हटाया।
सब जाति-पाँति के भेद काल्पनिक गाऊँ ॥ प्रद्युम्न-९०१ ॥
बज रहे बांसुरी–तबला मीठी वीणा।
है झांझ सितारो वाला स्वर भी झीणा।
गीतों की शोभा में अभिवृद्धि कराऊँ ॥ प्रद्युम्न-९०२ ॥
नर नारी इनको घेरे-घेरे रहते।
हाँ गावो और सुनावो मिलकर कहते।
ये कहते सुनलो, गायें आज छुपाऊँ ॥ प्रद्युम्न-९०३ ॥

राजसभा के कार्यक्रम :—

अब पहुँची बातें राजघराने में भी।
है शक्ति बजाने तान मिलाने में भी।
हम सुने न क्यो वे गाने चित्त-रिझाऊ ॥ प्रद्युम्न-९०४ ॥

अब राजसभा का मिला निमंत्रण प्यारा।
आ गया साथ में कुन्दनपुर भी सारा।
जनता भी होती भारी-रंग जमाऊ॥ प्रद्युम्न:
सुन गीत रसीले राजसभा मन हरषो।
वैदर्भी पर तो सुधा प्रेम की बरषी।
मन उत्सुक होकर कहता, परिचय पाऊँ॥ प्रद्युम्न:
है कौन ? कहाँ से आप यहा पर आये।
वैदर्भी ने ये उनसे प्रश्न उठाये।
वे बोले सुन लो सारी बात बताऊँ॥ प्रद्युम्न:
हम स्वर्गलोक से मृत्युलोक में आये।
कुछ लिये बिना ही गाने मधुर सुनाये।
हम घूमे सारे शहरों में-बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न:

द्वारिका की क्या बात :—

पुर लगा कौन सा अच्छा, यह बतलाओ।
है सारे अच्छे, आपस में न तुलाओ।
पर पुरी द्वारिका सबसे श्रेष्ठ बताऊँ॥ प्र॰
है वहाँ प्रकृति की छटा निराली प्यारी।
हैं चतुर और गुण-ग्राहक सब नर नारी।
है सभी कलाप्रिय मधुर स्वभाव बताऊँ॥ प्र॰
है सुखी बहुत समृद्ध शांति गुणधारी।
शक्रेन्द्र तुल्य है शासक कृष्ण मुरारी।
उनसा न प्रतापी पुरुष कहीं बतलाऊँ॥ प्र॰

कुछ उनके घर का हाल चाल बतलावो।
यदि आप जानते हमसे नहीं छुपावो।
वे बोले हमसे कुछ भी नहीं गुमाऊँ॥ प्रद्युम्न-६१२ ॥

प्र म्न का यशोगान :—

सुन शांबकुंवर अब खुलके बोल रहा है।
वैदर्भी के मन अमृत घोल रहा है।
लो सुनो अधिक क्या एक रत्न परखाऊँ॥ प्रद्युम्न-६१३ ॥

प्रद्युम्न कुंवर है वासुदेव सुत प्यारा।
है उसके पीछे यादव का कुल सारा।
गुण एक नहीं है बहुत अनेक बताऊँ॥ प्रद्युम्न-६१४ ॥

है शूर वीर तेजस्वी बड़ा प्रभावी।
गुण कला सहित मितभापी मधुर स्वभावी।
है सुन्दरता भी एक नमूना गाऊँ॥ प्रद्युम्न-६१५ ॥

तिराज भी है उसके सम्मुख फीका।
बड़ा लाड़ला प्यारा निज जननी का।
ामिनियाँ रहती उस पर नित्य लुभाऊँ॥ प्रद्युम्न-६१६ ॥

स जैसा पुरुष न हमने कहीं निहारा।
म हुये पुरस्कृत विज्ञ पुरुष के द्वारा।
ो पाया उतना कही नहीं फिर पाऊँ॥ प्रद्युम्न-६१७ ॥

न वैदर्भी ने लंबी सासा ली है।
तु अपने मन की इस मिष स्वीकृति दी है।
वहाँ से होते मनोभाव प्रगटाऊँ॥ प्रद्युम्न-६१८ ॥

सुन वैदर्भी ने निश्चय यह कर डारा।
प्रद्युम्न कुंवर को वरूँ हृदय के द्वारा।
जो मिले न वह, मैं क्वारी हो मर जाऊं ॥ प्रद्युम्न
हैं अन्य पुरुष सब मेरे प्यारे भ्राता।
है एक उसी से पति-पत्नी का नाता।
इतने में घटना घटी एक बतलाऊं ॥ प्रद्युम्न

इच्छित इनाम :—

पर हस्ती मस्ती में आ छूट गया है।
जलबांध कहीं का मानो टूट गया है।
मच गया शहर में हाहाकार बताऊं ॥ प्रद्युम्न
कर लिये प्रयत्न न काबू में गज आया।
सुन समाचार नृप रुक्म बड़ा अकुलाया।
जो गज वश कर ले इनाम दिलाऊं ॥ प्रद्यु
प्रद्युम्न कुंवर ने बीड़ा झेल लिया है।
हस्ती के सम्मुख आकर खेल किया है।
मद गज का दिया उतार यही बतलाऊं ॥ प्र
छेड़ी है उसके आगे तान सुरीली।
सुन गजराज की नसे हो गई ढ़ीली।
बांधा है गजशाला में लाय बताऊं ॥ प्र
जन धन्य-धन्य की ध्वनियां करते आये।
राजा को सारे समाचार संभलाये।
चांडाल पुत्र है बड़ा साहसी गाऊं ॥ प्र

बोला मागो जो मन चाह रहा है।
दूंगा वो ही जैसा वचन कहा है।
बोला मेरे कमी न कुछ भी गाऊँ॥ प्रद्युम्न-९२६
घर में नहीं रोटी पकानेवाली।
घरवाली के बिना हमेशा खाली।
घरवाली मिल जाये-यही बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-९२७ ॥
देना वैदर्भी राजकुमारी।
अंतर मन की इच्छा यही हमारी।
मैं हूँ इसके योग्य सही बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-९२८ ॥
न स्वाम्य अवस्थान :—
रुक्म नृपति को आया गुस्सा भारी।
पूर्ति न करता ऐसी माग तुम्हारी।
ा डाढाली को राजसुता परणाऊँ॥ प्रद्युम्न-९२९ ॥
कहा दुबारा सहा नहीं जायेगा।
: जाये जिसने मार वही खायेगा।
कडा समर है इसीलिये समझाऊँ॥ प्रद्युम्न-९३० ॥
: बोला-पहले मुख से ही क्यों बोला।
मारा जाऊँ ऐसा मद न भोला।
ा पुरुष कभी होते है वच-पलटाऊ॥ प्रद्युम्न-९३१ ॥
कार नहीं क्या क्षत्रिय कहलाते हो।
ों हमें धमकियाँ दिखलाते जाते हो।
खोज उठा नृप रुक्मी बड़ा दिखाऊँ॥ प्रद्युम्न-९३२ ॥

मैं वही जिसे तुम चाह रहो हो मन से।
मत पूछो मुझसे पूछो अपने मन से।
मन मन का साक्षी होता यही बताऊँ ॥ प्रद्युम्न-६४० ॥
सुन मुखमंडल पर बड़ी लालिमा छाई।
वेदर्भी अपने मन में कुछ शरमाई।
नयनों से टपक पड़ा अनुरण दिखाऊँ ॥ प्रद्युम्न-६४१ ॥
प्रद्युम्न मनोभावो को पढ़कर कहता।
सुख दुःख जीवन का इस पर निर्भर करता।
पछो ही सोचो समझो क्यों समझाऊँ ॥ प्रद्युम्न-६४२ ॥
इस प्रणय सूत्र का वंधन दृढ़-वंधन है।
जो इसे निभाये उसका अभिनन्दन है।
यह यावजीवन का व्रत प्रेम निभाऊ ॥ प्रद्युम्न-६४३ ॥
सहमति न मिलेगी पूज्य पिता के द्वारा।
यह अभिप्राय है मेरा और तुम्हारा।
मैं प्रस्तुत हूँ. पर तुम्हे और अखराऊँ ॥ प्रद्युम्न-६४४ ॥
मैं मन से तो वर चुकी आपको पहले।
मन धीर नहीं जो अधिक विरह अब सहले।
मैं सोच समझकर अपना कदम वढ़ाऊँ
कर लिया विवाह परस्पर मिलकर
दो निशोयिनो ने साक्षो नहो दी
विश्राम कुवर ने किया निशा ॥
वह सूर्योदय से पहले ही

(

आ लघुभाई को वीतक हाल बताया।
खुश-खुश हैं दोनों-कितने नहीं बताऊं॥ प्रभुतः।

पुत्री पर प्रकोप :—

महलों में आई धाय लिये जलझारी।
अब तक न जगी क्यों सोई राजकुमारी।
मन सोच रही है जगाऊँ या न जगाऊ॥ प्रभुतः।

कर कंकण-डोरा देख चकित बन जावे।
ला राजा रानी को भी हाल दिखावे।
कर लिया काम कुंवरी ने गजब बताऊँ॥ प्रभुतः।

है कौन पुरुष वह जिससे ब्याह रचाया।
वह किस पथ से महलों में आने पाया।
जो पता लगे तो प्रथम उसे मरवाऊँ॥ प्रभुतः।

क्रोधाभिभूत बन नरपति लात लगाते।
प्रिय पुत्री को भी ऐसे आज जगाते।
क्या किया कुकर्म बता, मैं सुनना चाहूं॥ प्रभुतः।

वह चुप थी शब्द न बोली है उत्तर में।
बढ़ गया कोप राजा-रानी के स्वर में।
अपने घर के योग्य नहीं ठहराऊँ॥ प्रभुतः।

कल मांग रहा चंडाल उसे पकड़ा दूं।
तू नहीं रोकना पहले ही जतला दूं।
बुलवाया है चांडाल, आ गया गाऊँ॥ प्रभुतः।

लें जाओ :—

तुम मागो, मैं दूं, करू प्रतिज्ञा पूरी।
क्यों रहे किसी के मन की साध अधूरी।
दो राजकुमारी कल से ही कलगाऊँ॥ प्रद्युम्न-६५४॥
ले, लेजा राजकुमारी, सुन वह बोला।
मैने तो केवल नरपति का सत तोला।
ले जाऊँ, पर मैं इसे कहाँ बिठलाऊँ॥ प्रद्युम्न-६५५॥
कुछ और दीजिये, रखिये इसको घर में।
है फर्क नहीं राजा में परमेश्वर में।
हो कलाकार ले जाओ इसे बताऊँ॥ प्रद्युम्न-६५६॥
क्या कला पेट की ज्वाला शात करेगी।
ये मेरे पीछे भूखों क्या न मरेगी।
मैं पेट स्वयं का मुश्किल से भर पाऊँ॥ प्रद्युम्न-६५७॥
श्रम नहीं कोमलागी से हो पायेगा।
सेवा का बोझा मेरे सर आयेगा।
दे चुका तुझे मैं अब क्यों मगज पचाऊँ॥ प्रद्युमन-६५८॥
वैदर्भी ने सुन सोचा अपने मनसे।
क्या पिता निर्दयी मनसे और वचन से।
वर पा जाने से अन्तर तुष्ट बताऊँ॥ प्रद्युम्न-६५६॥
अब राजदुलारी लगी जार से रोने।
घर घर में निन्दा लगी जोर से होने।
ले आया है चाडाल साथ में चाऊँ॥ प्रद्युम्न-६६०॥

भाभी का स्वगत किया शांबने भारी।
हो गयी सफल निर्धारित इच्छा सारी।
क्यों नहीं वास्तविकता को अब प्रगटाऊँ ॥ प्रद्युम्न

नया कर्ण :—

हम सब के हित में होगा, ऐसा करना।
साहस से है जीना साहस से है मरना।
विद्या के बल से नूतन ठाठ जमाऊँ ॥ प्रद्युम्न
नौखंडी महल बनाया विद्याबल से।
सब रचनायें लग जाती पुण्य प्रबल से।
हो गये राजसी ठाठ बड़े बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न
हो रहे नृत्य गायन अति मीठे स्वरसे।
गणिकायें आई धरती पर ऊपर से।
बाहर में खोली दानशाल दिखलाऊँ ॥ प्रद्युम्न
याचकगण आते इच्छित धन ले जाते।
वे जाते जाते सुख पाते यश गाते।
है कोई आया कर्ण नया बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न

रुक्मी का पश्चाताप :—

नृप रुक्मी के मन पश्चाताप बड़ा है।
नहीं मुझे क्रोध में कुछ भी पता पड़ा है।
क्यों बेटी चांडालों को दी बताऊँ ॥ प्रद्युम्न
गिरने की कुछ भी सीमा नहीं रही है।
गुस्से में जो कुछ होता, वही हुआ है।

क्या गई बात को फिर से मैं पा जाऊँ ॥ प्रद्युम्न-९६७ ॥
वस पूत कपूत कदाचित हो भी जावे।
क्या माता पिता भी उन जैसे हो जावे।
हो कुपित बना कुपिता मैं यही बताऊँ॥ प्रद्युम्न-९६८ ॥

स्कार और शोभा :—

इक नर ने आकर बात बताई सारी।
जो रचना देखी देवलोक सी प्यारी।
श्री कृष्ण पुत्र है दानी गुणो बताऊँ॥ प्रद्युम्न-९६९ ॥
ये समाचार सुन नृप ने पता लगाया।
जब सही मिला तो खुद पैदल चल आया।
मामा को आते देख वे उठे भाऊ॥ प्रद्युम्न-९७० ॥
वे हाथ जोड़ कर मामा को नमते हैं।
भानेज भलेरे मामा को गमते हैं।
हर्षाभिभूत हो गया हृदय बताऊँ॥ प्रद्युम्न-९७१ ॥
मुख बोल न पाया आशीर्वाद दिया है।
ले आया पुर में स्वागत बड़ा किया है।
घर घर में हुई प्रशंसा यही बताऊँ॥ प्रद्युम्न-९७२ ॥
है धन्य धन्य प्रद्युम्न शांब यदुवंशी।
रुक्मो ने करवाई है अपनो हंसी।
बल विद्या और कला का श्रेष्ठ बताऊँ॥ प्रद्युम्न-९७३ ॥
वैदर्भी की खुशियों का पार नहीं है।
अब मात पिता के मन में खार नहीं है।

है प्यार भरा नया[2] संसार[1] बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न

सखियों ने इसको बांटी बड़ी बधाई।
प्रद्युम्न कुंवर सा उत्तम वर जो पाई।
ससुराल जानकर कुछ दिन तक रुकवाऊँ। प्रद्युम्न

रुक्मिणी के अंगना :—

नववधू साथ ले हेज दहेज लिया है।
शुभ घड़ी मुहूरत मे प्रस्थान किया है।
आये हैं घर पर माँ के पास दिखाऊँ ॥ प्रद्युम्न
माँ पुत्रवधू को पाकर हरप रही है।
आँखो के द्वारा खुशियाँ बरस रही है।
है पुण्यवान सौभागी सुत बतलाऊं ॥ प्रद्युम्न

सुकृतानुमोदना :—

है पुण्योपार्जन के नव कारण भारी।
कृत पुण्यो से सुख पा सकते संसारी।
पुण्य के बिना सुख मिलते नहीं बताऊं ॥ प्रद्युम्न
नर जन्म पुण्य के द्वारा पाया जाता।
कुल, जाति, स्वास्थ्य, धन, धर्म, प्रेम, सुख, दाता।
मन तन की निर्मलता भी श्रेष्ठ बताऊँ ॥ प्रद्युम्न
क्या बिना पुण्य के दान दिया जाता है।
क्या बिना पुण्य के धर्म किया जाता है।
है पुण्य बीज, फल सारे हो बतलाऊँ॥ प्रद्युम्न
करते न पुण्य सुख सदा चाहते मन से।

करते न पुण्य सुख सदा चाहते तन से।
यह आशा उनकी लगती लोग हसांऊ ।। प्रद्युम्न-६८१ ।।
जो आत्म साधना में रत हो जाते हैं।
वे पुण्यवान नर उत्तम कहलाते है।
ठाणांग सूत्र गत भांगे चार सुनाऊँ।। प्रद्युम्न-६८२ ।।

नेमिनाथ की देशना :—

श्री नेमिनाथ भगवान पधार रहे हैं।
खुद तिरे भव जीवों को तार रहे हैं।
द्वाविंशतितम तीर्थंकर इन्हें बतलाऊँ ।। प्रद्युम्न-६८३ ।।
बन नन्दनवन में प्रभु का समवसरण है।
धन्य भूमि वहीं जहाँ टिकते पुज्यचरण है।
आ रही परषदा बारह जाति बताऊँ ।। प्रद्युम्न-६८४ ।।
बनमाली आया समाचार शुभ लाया।
तज मुकुट कृष्ण ने सबकुछ उसे दिलाया।
जिन वंदन करने चलो, सभी मैं जाऊँ ।। प्रद्युम्न-६८५ ।।
परिवार सहित श्री कृष्ण वहाँ पर आये।
कर विधि युत् वंदन रोम-रोम हरषाये।
है धन्य भाग्य मैं जिनवर दर्शन पाऊँ ।। प्रद्युम्न-६८६ ।।
प्रद्युम्न शांब आये है भानु सुभानू।
ये भगवान हैं चारो ऐसा मानूं।
ये दीक्षा लेगें सुन उपदेश वताऊँ।। प्रद्युम्न-६८७ ।।

धर्म देशना :—

सब यथा स्थान बैठे हैं सुनने वाणी।
समझेगें अपनी भाषाओं में प्राणी।
प्रभु वाणी केवल अर्द्धमागधी गाऊँ ॥ प्रद्युम्न

अब धर्म देशना तीर्थंकर फरमाते।
ये जीव जगत में कैसे चक्कर खाते।
क्या हेतु रहा है पीछे यही बताऊँ ॥ प्रद्युम्न :

सम्यक्त्वरत्न की प्राप्ति नहीं हो पाई।
मिथ्यात्वभाव में अपनी दशा बताई।
भवभ्रमण हेतु यह पहला तुम्हें दिखाऊँ ॥ प्रद्युम्न :

सांसारिक विषयों में मन को न फंसाओ।
निर्लिप्त कमल सम जीवन-शुद्ध बनाओ।
दूँ उदाहरण माया का श्रेष्ठ बताऊँ ॥ प्रद्युम्न ..

जो सम दृष्टि जीवड़ा करे कुटम्ब प्रतिपाल,
अंतरगत न्यारा रहे, ज्यों धाय खिलावे बाल,
धन अस्थिर मानों जैसे घन की छाया।
क्षण-भगुंर मानो अपनी सुन्दर काया।
है इनकी ममता बड़ा दुःख उपजाऊँ ॥ प्रद्युम्न :

जो रत्नत्रयी का अराधना कर पाता।
वह जीव एक दिन निश्चय मुक्ति पाता।
मैं मुमुक्षाओं के लिये राह दिखलाऊँ ॥ प्रद्युम्न

सुख साथी है परिवार मोह है झूठा।
है पता न कब छूटेगा छाती कूटा।
दुःख में सुख दिखलाते न यहो बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-६६४ ॥
है ओस बूंद सम अस्थिर जीवन अपना।
कह सकते है हम इसको जागृत सपना।
संयोग अनित्य न नित्य इन्हें बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-६६५ ॥
मोहित है जिस पर भोले ये संसारी।
वह सभी पुद्गलों वाली रचना प्यारी।
गुण आत्मा का आनन्द मयी बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-६६६ ॥
है एकमात्र ही धर्म मुक्ति का दाता।
इसके न सिवा है कोई भ्राता-त्राता।
दो भेद धर्म के है विश्रुत है बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-६६७ ॥
आगार और अणगार मार्ग है प्यारा।
तर जाता भव से इन्हें धारने वारा।
उपदेश बहुत संक्षिप्ततया बतलाऊँ ॥ प्रद्युम्न-६६८ ॥
ार दीक्षाये :—
सुन धर्म देशना गये सभी नर-नारी।
उन चारो पर ही असर पड़ा है भारी।
आ आज्ञा माग रहे विनय बढ़ाऊँ ॥ प्रद्युम्न-६६६ ॥
अब मात-पिता दिक इनक समझाते है।
है कठिन मार्ग मुनियो का बतलाते है।
लो लेना हो तो हम क्यो बने रूकाऊँ ॥ प्रद्युम्न-१००० ॥

सुन सकल पत्नियाँ आँसू बड़े गिराती।
जीयेगीं कैसे नहीं समझ कुछ पाती।
सुखपूर्वक संयम ले लो—यही बताऊँ॥ प्रद्युम्न-१.

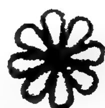
ले आज्ञा प्रभु के चरणों में सब आये।
श्री नेमिनाथ ने पचक्खान करवाये।
वे पाँच महाव्रत समिति गुप्ति-युत्गाऊँ॥ प्रद्युम्न-१..

ये चारों भाई संत बने हैं सच्चे।
क्या संत बनेंगे जोन-कायर कच्चे।
संयम को खांडे धार समान बताऊँ॥ प्रद्युम्न-१.

कर श्रुता आराधना, सेवा कर्म खपाये।
वे तीनो भाई सिद्ध बुद्ध कहलाये।
फल धर्मोद्यम का पाया सही बताऊँ॥ प्रद्युम्न-१.

सुरगति में गये सुभानु संत सुखकारी।
कुछ भव करके जायेंगे मोक्ष मझारी।
अब कथा भाग को पूर्ण यहाँ करपाऊँ॥ प्रद्युम्न-१

सब आत्माओं में केवल ज्ञान पड़ा है।
कर लिया करो इसका ही ध्यान बड़ा है।
कुछ कथासार लिख इसको और बढ़ाऊँ॥ प्रद्युम्न-१



थासार :—

दोहे

किये कर्म हैं भुगतने, करो न संशय लेश।
लो प्रद्युम्न कुमार से, यह पहला उपदेश ॥ १ ॥

सत्ता पा कर शांब सम, करिये नहीं अनीति।
नीति रीति से प्रीति रख, जीव जियो अमीति ॥ २ ॥

सतभामा सम मत करो, इर्ष्या से अनुराग।
प्रेम-शाति-सुखधर्म का, उड़ने दो न पराग ॥ ३ ॥

नारद मुनि सम कीजिये, अवसर पर उपकार।
जाना सबको एक दिन, जीना है दिन चार ॥ ४ ॥

क्रीड़ा-कौतूहल बहुत-फल जिसका निस्सार।
सार और निस्सार का, बहिष्कार सत्कार ॥ ५ ॥

नहीं भूलना फूलना, पाकर रंग-सुरंग।
कथा भाग में बहुत से, मिलते अन्य प्रसंग ॥ ६ ॥

लो दीक्षा शिक्षा यही, देते चारों भ्रात।
जीवन जीना कौन सा, है यह अपने हाथ ॥ ७ ॥



प्रशस्ति पत्र :—

दोहे

जिनशासन में दीपते, गुरुवर हुक्मीचंद।
संप्रदाय में वरतता, सहज संयमानन्द॥१॥

क्रमशः पटधर शिव, उदय, चौथमल्ल श्रीलाल।
पूज्य जवाहरलाल की, रचना बड़ी कमाल॥२॥

पूज्य गणेशीलालजी—गुरुवर नानालाल।
भाल चमकता भानु सम, जन-जन बने निहाल॥३॥

किया इन्द्रभगवान ने, मेरे पर उपकार।
संयति पार्श्वकुमार ने, की रचना शृंगार॥४॥

दो हजार बत्तीस का, ब्यावर चातुर्मास।
साथ इन्द्र भगवान के, चार संत सोल्लास॥५॥

आई कार्तिक पूर्णिमा, पूर्ण हुआ आख्यान।
रखा गया लिखते समय, पूर्ण रूप से ध्यान॥६॥

रही अगर त्रुटियाँ कहीं, हैं वे सारी क्षम्य।
सत्य तथ्य होता न क्या, केवल ज्ञानी-गम्य॥७॥

देते मुनि वीरेन्द्रजी, और ज्ञान मुनि साथ।
भूली जाये क्या कभी, भले साथ की बात॥८॥

पद्य प्रेमियों के लिये, रचना गीत प्रधान।
वक्ता श्रोता प्रेम से, करें प्रेम रस पान॥९॥



समर्पण

उन

अनुभव

पुरस्सर

प्रज्ञा पुरूष

श्री इन्द्र भगवान्

के

निर्विकार पद

सरोजो मे

सादर समर्पण

जिनकी

अपूर्व

शिल्प कारिता

ने

इस

धूलि-धुसरित

पाषाण को

अप्रतिम

प्रतिमा का रूप

प्रदान कर

अनुग्रहीत किया

—मुनि पार्श्व

काव्यकार : एक परिचय

भारत की सभ्यता एव सस्कृति विश्व मे सर्वाधिक प्राचीन ही नहीं पितु चिरन्तन एव शाश्वत भी है। शत-सहस्त्र वर्षों के घात-प्रतिघात, वल झंझावात एवं विपुल वात्याचक्र भी इसके रूप को प्रतिहत रने मे असमर्थ रहे हैं। कष्ट-काठिन्य के निकषोपल पर कसकर यह धिक तेजस्वी और भास्वर हुई है। ऐसे महनीय भारत के मध्यभाग स्थित मध्य प्रदेश उसका हृदय प्रदेश है। यदि इसके इतिहास पर क दृष्टि निक्षेप किया जाय तो ज्ञात होगा कि मध्य प्रदेश की यह रा गौरव गरिमा से युक्त अपूर्व तेजोमय है। अनेक विशेषताओं से ंकित इतिहास प्रसिद्ध दशपुर (मन्दसौर) जिले के अन्तर्गत प्राकृतिक पुमा से मडित शास्यश्यामल दलौदा ग्राम अपनी महत्ता के कारण ख्यात है।

दलौदा ग्राम की इसी पावन भूमि पर ३७ वर्ष पूर्व विद्वद्वरेण्य ी पार्श्व मुनि ने जन्म ग्रहण किया। अपनी माता श्रीमती मोहन बाई ण्डारी के धार्मिक भावो से अनुप्राणित आठ वर्ष की लघुवय में ही रम श्रद्धेय चारित्र चूड़ामणि आचार्य श्री नानेश एव कर्मठ सेवाभावी ी इन्द्र भगवान् का पुनीत सान्निध्य प्राप्त कर तथा इनके दिव्य वचनो से प्रेरित होकर संसार से विरक्त हो गये। आचार्य प्रवर के तीसगढ (मध्य प्रदेश) प्रवास प्रसग पर सात 'मुमुक्षु आत्माओं' के ाथ दीक्षित होकर अपने जीवन को आत्मोन्नयन के प्रति भावित करते ए विचरण करने लगे।

बाल्याकाल से ही आप मे अप्रतिम प्रतिभा थी। परम श्रद्धेय ाचार्यदेव तथा कर्मठ सेवा भावी जेसे कुशल शिल्पकार के **सान्निध्य**

से जीवन में अद्वितीय निखार आया। बीकानेर में [illegible]

सानिध्य में अनेक वर्षों तक संस्कृत, व्याकरण, न्याय [illegible]

संस्कृति एवं साहित्य आदि गहन विषयों का गंभीर अ[illegible]

आपकी वक्तृत्व कला प्रभावशालिनी है। प्रवचन में [illegible] विषयों को सहज सरल रूप से निरूपित करना, आपकी [illegible] है, जिससे आबालवृद्ध लाभान्वित हुए बिना नहीं रहता।

प्रस्तुत जिनसेन गेय काव्य के प्रणेता आप ही हैं। [illegible] सुमनों में गुम्फित कर आपने अपनी प्रतिभा का परिचय दिया है।

प्रस्तुत काव्य मे मंगलाचरण के अनन्तर उद्देश का [illegible] रूप से किया गया है। कथारम्भ को भी सजधज पूर्वक [illegible] है। शासक और शासन भी यथास्थान वर्णित हैं। [illegible] मौलिक है। महलों की शोभा का वर्णन अत्यन्त [illegible] है। दरबार से सम्बन्ध रखने के कारण प्रतारणपरत भी [illegible] यथास्थान पुत्रों का वर्णन भी समाहित है। शिक्षा [illegible] वर्णित है। स्थान-स्थान पर विश्वास और औदार्य [illegible] है। प्रसंगोपात दुख देशाटन भी दिखाया गया है। [illegible] शौर्य स्वस्थान पर सशक्त तस्वीर खींचते हैं। [illegible]

समीचीन बन पड़ा है। जिनसेन के विवाह का [illegible]

त होता है। जिनसेन की विजय वैजयन्ती चतुर्दिक [illegible]

प मोदक का प्रयोग और उसका निवारण [illegible] मे अपूर्व है। यथा प्रसंग कर्म परीक्षा भी होती है। [illegible] वीरो के दीन दुखियों के प्रति दुखकातरता जैसे प्रसंग [illegible] हैं। राक्षस के सान्निध्य को कौतूहल प्रिय दिखाया गया है [illegible] वालों को जलाने को भूमिका का निर्वाह भी [illegible] ऋद्धि सिद्धि का वर्णन अपने में अनुपम है। [illegible] मन को छूता है। जिनसेन के शासन काल को आदर्श [illegible] रखा गया है। मुनि दर्शन और देशना प्रभावपूर्ण [illegible] यह काव्य का वस्तु विवेचन है जो संक्षेप में होते हुए भी [illegible]

ंठ सेवाभावी श्री इन्द्रचन्दजी म. सा.

एक प्रेरक व्यक्तित्व

रतीय सस्कृति मे राजस्थान का गौरव रण-क्षेत्र मे ही नहीं अपितु
। क्षेत्र में भी अपनी अपूर्व विशेषता लिए हुए है। अनेक युगीन
ओं ने जन्म लेकर इसके विकास मे अभूतपूर्व योगदान दिया है
यह तेजोमय धरा और महिमामंडित हुई है।

गौर जिले के अन्तर्गत माड़पुरा अपनी सिकतामय सुरभि से
त है। इसी ग्राम्य आंचल के चोरड़िया परिवार में कर्मठ
वी महनीय व्यक्तित्व के धनी, आभ्यन्तर तपोमूर्ति, विरक्तों के
र्य, सचिवकल्प श्री इन्द्र भगवान ने जन्म ग्रहण किया है। आज
। पूर्व ज्येष्ठ शुक्ला ११ वि० सम्वत् १९७६ मे आपका जन्म हुआ।
ावस्था मे ही युगपुरुष, प्रवचन प्रवीण जवाहराचार्य के प्रेरक प्रवचनों
र से आपको विरक्ति की ओर उत्प्रेरित किया तब अध्यात्मिक क्षेत्र
। रहते हुए शान्त क्रान्त द्रष्टा आचार्य श्री गणेशीलालजी म० सा०
ानिध्य मे दीक्षित होकर अपने जीवन को ज्ञान दर्शन चरित्र की
द् से निरन्तर शोभायमान कर रहे हैं। स्व० आचार्य श्री ने अपने
शिल्प से मुनिश्री के जीवन को अप्रतिम रूप प्रदान किया है।
ररायणता, उदाराशयता, दूरदर्शिता, कर्तव्यनिष्ठा जैसी महानीय
से मुनिश्री का जीवन विभूषित है।

सम्प्रति आप समता दर्शन प्रणेता, धर्मपाल प्रतिबोधक, समीक्षण-
योगी आचार्य श्री नानेश की दक्षिण हस्त प्रतिमूर्ति हैं। कितने ही
साध्वी को प्रेरणा देकर उनके सद्निर्माण में आपका अभूतपूर्व

योगदान रहा है। ब्यावर, बीकानेर, अहमदाबाद, रतलाम ... में क्रमशः ६, १५, १२, २५, दीक्षाओं का जो ... हुआ इसमें आपकी अप्रतिम प्रतिभा ही मुख्य कारण रहा है ... में बहु आयामी प्रतिभा के धनी, महासाधक हैं। ... सुलझाने में आपकी पैनी दृष्टि अत्यन्त सफल रही है। ... अपना वर्चस्व है। इन विशेषताओं के अलावा भी ... नैसर्गिक रूप से विद्यमान हैं। फलतः आपकी गरिमा में ... लग गये हैं।

संघ के नवनिर्माण में जिस भूमिका का आपने ... संघ के किसी भी सदस्य द्वारा कभी भी विस्मृत नहीं की ...

प्रस्तुत पुस्तक के रचनाकार विद्वद्वर्य मधुर ... मुनिजी म० सा० के जीवन उन्नयन में जो सक्रिय ... है, उसके कारण आप श्री में अनेकानेक विशेषताएँ उद्भूत ... फलतः अल्पवयस्कता में विद्वद्वरेण्य बनकर समाज में ... आपके घनीभूत सहयोग के परिणाम को स्थानाभाव ... दिखलाना संभव नहीं है।

महामना कर्मठ सेवाभावी, श्री इन्द्र भगवान ... निर्माण का रथ प्रगति पर आरूढ़ हुआ था वह ... में अवश्य सफल होगा। इनका हम सब पग पग पर ... करते हैं और साथ ही "बहुजन सुखाय, बहुजन हिताय" ... शतम्" की हार्दिक कामना करते हैं।

❀ ॐ भगवत्यै नमः ❀

रानी जिनसेना की कथा

गलचरण तथा उद्देश्य :—

दोहे

शांति जिनेश्वर से बहा, अतुल शांति का स्रोत।
भ्रान्ति निवारक क्रान्तिस्वर, दे पाया उद्योत॥ १ ॥
त्रिशलानन्दन वीर का, अभिनन्दन शतवार।
धर्म अहिंसा का दिया, सर्वमान्य संस्कार॥ २ ॥
धर्म निभाते जो यहाँ, ठुकराकर सुखसात।
जीवित रहती जगत में, उसी व्यक्ति की बात॥ ३ ॥
प्राणों से भी प्रिय नहीं, जिसको अपना धर्म।
उसको आनी चाहिये, मुख दिखलाते शर्म॥ ४ ॥
एक ओर सुख जगत के, एक ओर है धर्म।
प्रथम स्थान है धर्म का, समझ लीजिये मर्म॥ ५ ॥
धर्म बिना सुख है नहीं, यही रहस्य।
सुख हो चाहे हो नहीं, होगा धर्म अवश्य॥ ६ ॥
धर्म गंवाकर सुख लिया, तो क्या सुख मे सार।
हीरे बदले कौड़िया, लेते मूर्ख गिंवार॥ ७ ॥
जागृति आत्म विवेक का, कारण सच्चा ज्ञान।
श्रवण-पठन-चिन्तन मनन, साधन सुगम महान॥ ८ ॥

डिगे नहीं जिन धर्म से, जिनसेना-जिनसेन।
उचित सभी को है न क्या, चलना तेन पथेन॥ ९॥
गुरुवर श्री नानेश का, पाऊँ आशीर्वाद।
जिससे संयम में मिले, नित्य अपूर्वाह्लाद॥ १०॥
संत इन्द्र भगवान को, बरसे करुणाधार।
जिससे रचना सिंधु से, उतरूँ सुख से पार॥ ११॥
संत पार्श्ववर्ती स्वत, देते शुभ सहयोग।
"पार्श्व संत" का सफल हो, अभिनव रचनोद्योग॥ १२॥
गुणग्राही क्या देखते, कभी किसी का दोष।
उन्हें नई रचना न क्यों, उपजायेगी तोष॥ १३॥
भाव नये भाषा नई, नई मधुरतम राग।
कथा पुरानी दे रही, नया-नया अनुराग॥ १४॥

कथारंभ :—

तर्ज

घर-घर में छाया जिसका सुयश सवाया।
जिनसेना रानी ने जिनधर्म निभाया॥ ध्रुव पद॥
था शोभाशाली नगर "कनकपुर" भारी।
छवि इन्द्रलोक की मानो गई उतारी।
विधिवेत्ताओं ने विधि से इसे बसाया॥ जिनसेना॰
सुखपूर्वक धरती उगला करती सोना।
सोने से पैदा होता आया सोना।
सोना न किसी भूखे से जाता खाया॥ जिनसेना॰

वसते थे पुर में बहुत बड़े व्यापारी।
वाहर से आते रहते नित व्यापारी।
व्यापार बिना कब वढ़ने पाती माया॥ जिनसेना-३ ॥

ईमानदार व्यापारी नर सुखकारी।
विश्वासी होते है क्या चोर जुआरी?
सचवादी लोगों ने व्यापार जमाया॥ जिनसेना-४ ॥

सव लोग सुखी थे हिलमिल रहने वाले।
सुख-दुःख अपना आपस में कहने वाले।
सुख-दुःख में व्यवहारी ने हाथ वटाया॥ जिनसेना-५ ॥

ऋण, रोग, द्वेष, दुःख दूर निकल कर भागे।
जव फैल न पाये फैशन-व्यसन अभागे।
जीवन पथ का सात्विक पथ अपनाया॥ जिनसेना-६ ॥

कम हो तो कम हो खाकर सो जाना।
पर उचित नहीं है ऋणी यहाँ हो जाना।
क्या कभी सभी ने एक समान कमाया॥ जिनसेना-७ ॥

क्यो ईर्ष्या करके मन में जलते रहना।
है भला धर्म के पथ पर चलते रहना।
वह नहीं मिलेगा जो न लिखाकर लाया॥ जिनसेना-८ ॥

दुःख देख किसी का, सुख न मनाना भाई।
वन सकते हो तो वनना परम सहाई।
है सुखी वही, हो जिसने सुख पहुँचाया॥ जिनसेना-९ ॥

शासक और शासन :—

"जयमंगल" राजा का शासन सुखकारी।
था जैनी श्रावक के बारह व्रतधारी।
वह कहता पाई मुश्किल से नर काया॥ जिनसेना॰
था न्याय परायण निर्मल नीतिवाला।
मन तन से उजला नहीं कहीं से काला।
था परम दयालु माँ सी ममता पाया॥ जिनसेना॰
जिनदास सचिव था श्रमणोपासक सच्चा।
नितिज्ञ चतुर मतिवान बड़ा ही अच्छा।
बल दुर्बल पर जिसने न कभी अजमाया॥ जिनसेना॰
हित राजा और प्रजा का चाहा करता।
अन्याय नहीं हो जाये रहता डरता।
था रोम-रोम में केवल धर्म समाया॥ जिनसेना॰
"जिनसेना" रानी रूप कला गुन वाली।
भर रखी गई हो शुद्ध धर्म की प्याली।
पतिव्रत से जिसने अपना रूप सजाया॥ जिनसेना॰
वह दान, स्थान, सम्मान दिया करती थी।
किसी का नहीं किया करती थी।
जो आया खाली उसे नहीं लौटाया॥ जिनसेना॰
सच और मधुर, प्रिय हितकर बोला करती।
घर भेद किसी का कभी न खोला करती।
गर नजर आ गया दोष तुरंत ढ़कवाया॥ जिनसेना॰

थी जीव दया की पुजारिन मन से।
उपकार किया करती थी तन से धन से।
चूका न कभी सेवा का अवसर पाया॥ जिनसेना-१७॥
गिनती थी नित नवकार मंत्र की माला।
व्रत सामायक का सदा निभाती आला।
पडिक्कमणा करती दोनों समय सुहाया॥ जिनसेना-१८॥
उपवास आदि तप जप न छोडती कोई।
जो लिये नियम वे नहीं तोड़ती कोई।
जीवन को सीधा साधा उच्च बनाया॥ जिनसेना-१९॥
पशुओं पर वजन न ज्यादा लादा जाता।
पशुओं पर क्रूर प्रहार नहीं कोई लगाता।
थी पूर्ण निषेधाज्ञा यह शासन छाया॥ जिनसेना-२०॥
मछलियां न मारी जाती जलाशयो पर।
आखेट खेलना वर्जित सीमा भीतर।
अनछाना पानी जाता नहीं पिलाया॥ जिनसेना-२१॥
देवी को कोई बलि न चढ़ाई जाती।
दो बली अहं की बात पढ़ाई जाती।
यज्ञों से हिंसा ने निजस्थान हटाया॥ जिनसेना-२२॥
था जीवदया का प्रचार वहाँ पर।
थी जीवदया लोगो के मन के भीतर।
आत्माओ में दर्शन आत्माओं का पाया॥ जिनसेना-२३॥
थी सभी तरह से शांति राज्य में फैली।

पर धन न उठाते पड़ी क्यों न हो थैली।
पर दाराओं पर मन न कभी ललचाया॥ जिनसेन॰
घर घर पूजा माताओं की होती।
वे जनमा करती पुत्र सलौने मोती।
रोती न कभी चाहे दुःख हो आया॥ जिनसेन॰
वे समझा करती कर्म दोष है अपना।
जग की माया को जाना करती सपना।
वे कहती काया माया—बादल छाया॥ जिनसेन॰

'एक निमंत्रण :—

पुर पोतनपुर का राज्य था एक भारी।
वसुधापति मंगलसेन जहाँ हितकारी।
थी रानी कमलावती पति की छाया॥ जिनसेन॰
थी रत्नवती इक राजकुमारी प्यारी।
यौवन ने जिसकी काया को सिणगारी।
था रूप मनोहारी त्रिभुवन मन भाया॥ जिनसेन॰
सीखी है उसने कला स्त्रियोजित सारी।
प्रतिस्पर्द्धा में वह नहीं कहीं भी हारी।
विद्या से गौरव अपना बहुत बढ़ाया॥ जिनसेन॰
थी धर्मज्ञान से बिल्कुल कोरी पोथी।
वह बात बनाती रहती बिल्कुल थोथी।
अभिमान ज्ञान का करती सदा सवाया॥ जिनसेन॰
नित भौतिकता में मस्त रहा करती थी।

है धर्म कर्म सब ढोंग कहा करती थी।
समझाने पर भी कुछ न समझ में आया॥ जिनसेना-३१॥
वह कहती खाओ पीओ मौज उड़ाओ।
इस पुण्य पाप के चक्कर में न आओ।
है स्वर्ग नर्क नहीं कौन देखकर आया॥ जिनसेना-३२॥
जो विद्या आत्मविवेक जगाने पाये।
वह विद्या ही तो सद्विद्या कहलाये।
मिथ्यात्वदशा में जीव भटकता आया॥ जिनसेना-३३॥
हो रहा स्वयंवर रत्नवती का भारी।
की गई शहर में इसकी सब तैयारी।
जय मंगल नृप के पास निमंत्रण आया॥ जिनसेना-३४॥
आ कहा दूत ने नरपयि! आप पधारो।
यह भावभरा आमंश्रण लो स्वीकारो।
कल दूंगा उत्तर नरपति ने फरमाया॥ जिनसेना-३५॥

ति-पत्नी का चिन्तन :—

ठहराया उसको एक अतिथी भवन में।
व्यवहार कुशलता होती हर शासन में।
नृप जिनसेना के पास पूछने आया॥ जिनसेना-३६॥
मैं जाऊँ या नहीं जाऊँ तुम्ही बताओ।
जिनसेना बोली—आप अवश्य सिधाओ।
ले आओ रानी! अगर निमंत्रण आया॥ जिनसेना-३७॥
क्या सोच समझकर ऐसा बोल रही हो?

क्यों निज जीवन में विष यह घोल रही हो?
क्या सौत कभी भी हो सकती सुखदाया॥ जिनसे॰
क्यों माने नारी सौत बड़ी बीमारी?
पति सुख में सुख माना करती है नारी।
क्या नहीं सौत ने प्रेमामृत बरसाया?॥ जिनसे॰
मैं इन महलों में रहती अभी अकेली।
गुरुणी को मिली नहीं हो चेली।
मिल जाये तो मैं मानूँ भग्य सवाया॥ जिनसे॰
जिनसेना का सुन कथन नृपति हरपाता।
तुम महान नारी कहकर हृदय लगाता।
मन उदारता का थाह न मन ने पाया॥ जिनसे॰

महलों की शोभा :—

मैं जाऊँ उसको अभी व्याह कर लाऊँ।
इन महलों की कुछ शोभा नई बढ़ाऊँ।
आ कहा, दूत से जाओ तुम, मैं आया॥ जिनसे॰
ले सैनिक साथ चला जयमंगल राजा।
आ पहुँचा पोतनपुर में बज रहे बाजा।
मंडप में आकर सिंहासन शोभाया॥ जिनसे॰
जो राजा राजकुमार वहाँ थे आये।
वे सभी उपस्थित हैं मन आशा लगाये।
आ रत्नवती ने मंडप को चमकाया॥ जिनसे॰
गुण रूप-शौर्य का परिचय देती सखियाँ।

पर टिकी नहीं हैं कहीं परख-रत अँखिया।
का परिचय उसने आगे कदम बढ़ाया ॥ जिनसेना-४५ ॥
"जयमंगल" नृप के पास रुकी वह आके।
मन पुलकित होता वरमाला पहना के।
विधिपूर्वक राजा ने इसको परणाया ॥ जिनसेना-४६ ॥
गज अश्व और रथ दास दासियाँ भारी।
के रत्नवती सी सुन्दर राजकुमारी।
के विदा कनकपुर जयमंगल नृप आया ॥ जिनसेना-४७ ॥

नवती छा गई :—

आ रत्नवती ने जाल मोह का डाला।
बन गया रूप पर भूप स्वयं मतवाला।
सब धर्म-कर्म को मानों गया भुलाया ॥ जिनसेना-४८ ॥
अब जिनसेना का मान हो गया कमती।
बस रत्नवती ही राजा को अति गमती।
शासन पर पड़ने लगी इसी की छाया ॥ जिनसेना-४९ ॥
वह जिनसेना पर रात और दिन जलती।
वह नित्य निकाला करती उसकी गलती।
छिड़ जाता बाद-विवाद कभी अनचाया ॥ जिनसेना-५० ॥

अपने-अपने विचार :—

क्या धर्म-कर्म दुनिया मे सुख पहुँचाता।
क्या धर्मी मरकर स्वर्गलोक मे जाता।
वहमों का कोई अंत नहीं है पाया ॥ जिनसेना-५१ ॥

इन्कार करेगा कैसे कहो विवेकी।
जो है उसका अस्तित्व सामने आया॥ जिनसेना-५९ ॥
जिन ज्ञानी पुरुषों ने देखा फरमाया।
यह जीव-जन्मता-मरता-फिरता आया।
क्या अमर रही है कोई सी भी काया॥ जिनसेना-६० ॥
सुन रत्नवती खिसियाई मन ही मन में।
क्यों धार्मिक चर्चा छेड़ी इस जीवन में।
अपमान स्वयं का हाथों से करवाया॥ जिनसेना-६१ ॥
जल बोली-तेरा धर्म जाल तोड़ूगीं।
पीछा न आज से तेरा मैं छोड़ूगीं।
सुन जिनसेना शांत भाव अपनाया॥ जिनसेना-६२ ॥
क्या सूर्य छिपा है कभी बादलों द्वारा।
क्या सत्य धर्म भी वादों द्वारा हारा।
कर बंद बात वे गई, समय हो आया॥ जिनसेना-६३ ॥

रत्नवती की चाल :—

है धर्म मुझे प्रिय तन में यथा हृदय है।
तुम सर्वाधिक प्रिय हो यह उत्तर आया ॥ जिनसेना २६॥
पतिधर्म यही कहता, हो नारी प्यारी।
तुम मेरे प्राणों की भी हो अधिकारी।
मैं अधिक प्रसन्न रहा करता बतलाया ॥ जिनसेना-२७॥
दो स्त्रियाँ आपके क्या है प्रेम बराबर।
दो स्पष्ट तथा बस मुझको इसका उत्तर।
क्रम दोनों में से किससे कैसा पाया ॥ जिनसेना-२८॥
जो अधिक चाहती उसे अधिक चाहूँगा।
पूछो निज मन से मैं क्यों बतलाऊँगा।
मैं सहमत हूँ अथ प्रश्न उभरकर आया ॥ जिनसेना-२९॥
मैंने तो मेरा हृदय टटोल लिया है।
क्रम अपना अपने मन से तोल लिया है।
लो करो परीक्षा दोनों की महाराया ॥ जिनसेना-३०॥
जो अधिक प्रेम करती वह है पटरानी।
यह बात नहीं क्या जा सकती है मानी।
जा जिनसेना से पूछो प्रश्न सुहाया ॥ जिनसेना-३१॥
पति से भी जो प्रिय धर्म बताये अपना।
वह रानी को तुम समझो खोटा सपना।
यह निर्णय अंतिम लेना यही बताया ॥ जिनसेना ३२॥

अंतिम निर्णय :—

नृप आया जिनसेना ने प्रेम दिखाया।

सम्मान सहित सिंहासन पर बिठलाया।
रानी ने मन का भेद एक न छुपाया॥ जिनसेना-७३॥
मैं निर्णय तुम से सुनने को आया हूँ।
क्या तुम्हे धर्म प्रिय ? अथवा मैं भाया हूँ।
मैं प्यारा हूँ तो छोड़ो धर्म सुहाया॥ जिनसेना-७४॥
पति चरणों में सिर स्त्रियाँ चढ़ाती आई।
पति-परमेश्वर का मान बढ़ाती आई।
क्यों डाल रहे हो संकट मे क्या भाया ?॥ जिनसेना-७५॥
पति और धर्म को कैसे तोला जाये।
कम अधिक किसी को कैसे तोला जाये।
रानी ने अपना धैर्य पूर्ण दिखलाया॥ जिनसेन-७६॥
है धर्म कल्पतरु, पतिव्रत उसकी शाखा।
तज तरू को शाखा को क्या जाये राखा।
सुत पति का, सुतका, धर्मवृक्ष से पाया॥ जिनसेना-७७॥
मैं छोड़ न सकती धर्म और पति को भी।
चेतन न छोड़ता सह जनमी मति को भी।
दे प्राण आहुति जाता धर्म निभाया॥ जिनसेना-७८॥
दूँ प्राण आपका पाकर एक इशारा।
मैं छोड़ न सकती धर्म प्राण से प्यारा।
तिलमिला उठा जयमंगल गुस्सा आया॥ जिनसेना-७९॥
महल छोड़ दो :—
तुम छोड़ न सकती धर्म यही है कहना।

मैं तुम्हें छोड़ता हूँ न यहाँ पर रहना।
उपवन में जाकर बसो साफ फरमाया ॥ जिनसेना-८०।
मिल जायेगी इक दासी और गुजारा।
अधिकार आज से खत्म समझलो सारा।
प्रिय रत्नवती रानी ने मुझे जगाया ॥ जिनसेना-८१॥
जिनसेना के नयनों से आंसू टपके।
कर चरण स्पर्श उठ खड़ी पलकके झपके।
स्थिर वने वचन मन और बनी स्थिर काया ॥ जिनसेना-८२॥
पति आज्ञा का मैं पालन किया करूंगी।
गर्भस्थ बालक का लालन किया करूंगी।
कृतकर्मों का यह उदयकाल जब आया ॥ जिनसेना-८३॥
ये समाचार फैले हैं राजभवन में।
फिर राजसभा में फिर अंगन अंगन में।
सुन सभी सज्जनों के मन विस्मय छाया ॥ जिनसेना-८४॥
जिन दास सचिव आया नृपको समझाने।
पर हठी भूप अब कहना किसका माने।
असफल ही रहा प्रयास किया जो भाया ॥ जिनसेना-८५॥
अनिवार्य वस्तुयें और एक ही दासी।
जिनसेना रानी बनी आज बनवासी।
ले प्याला समता रस वाला गटकाया ॥ जिनसेना-८६॥
जिनसेना रानी है अब से परित्यक्ता।
वह चाहे माने अपने को पति भक्ता।

क्या रिक्ता-तिथि को जाये शुभ बतलाया ॥ जिनसेना-८७ ॥
नवकार मंत्र पर पूर्ण बढ़ाती आस्था।
कर सामायक अपनाती सुख का रास्ता।
प्रतिक्रमण उभयटंक करके जगत खमाया ॥ जिनसेना-८८ ॥
बस विजय धर्म की आखिर होती आई।
पापी की आत्मा आखिर रोती आई।
शास्त्रोक्त वचन क्या जाये कभी भुलाया ॥ जिनसेना-८९ ॥

रत्नवती का रंग :—

पद पटरानी का रत्नावती ने पाया।
सम्मान सभा में उसको मिला सवाया।
ले मुकुट महिपोवाला है पहनाया ॥ जिनसेना-९० ॥
ले बदला रानी अपने मन में फूली।
हंस रही हाय! जिनसेना रास्ता भूली।
राजा पर अपना प्रेम जाल फैलाया ॥ जिनसेना-९१ ॥
युवराज बनेगा अब तो मेरा बेटा।
जिनसेना का सुत कहीं रहेगा बैठा।
राज्यासन आधा मैंने ही शोभाया ॥ जिनसेना-९२ ॥
ये सैनिक और सचिव हैं आज्ञाकारी।
इज्जत है मेरी राजा से भी भारी।
नारी ने नर को कैसा नाच नचाया ॥ जिनसेना ९३ ॥
हरिहर ब्रह्मा भी हार गये नारी से।
स्थिति पूछी जाये सारी संसारी से।

मुनियों के मुखसे क्या जाये बतलाया ॥ जिनसेना-६४।
पर किस्मत का है कोई खेल अनोखा।
वह देख रहो है अपना कोई मौका।
फल पुण्य-पाप का अलग अलग बतलाया ॥ जिनसेन-६४॥

पुत्रो का जन्म :—

कुछ समयान्तर सुत जिनसेना ने जाया।
फल मुक्ताफल समसरल सीप ने पाया।
सुत आनन-दर्शन से दुःख गया भुलाया ॥ जिनसेना-६६॥
सुत रत्नावती रानी ने जनमा प्यारा।
जनमा है लड़का मानो ईर्ष्या द्वारा।
दोनों का जन्मोत्सव आति गया मनमाना ॥ जिनसेन
जिनसेना का सुत श्री जिनसेन बड़ा है।
श्री रामसेन छोटे का नाम पड़ा है।
दोनों का लालन पालन अलग सुहाया ॥ जिनसे
श्री रामसेन के लिए रखी है धायें।
वे दूध पिलायें, नहलायें, खिलायें।
धायों ने अपना-अपना फर्ज निभाया ॥ जिनसेना
जिनसेन बिना धायों के पलता जाता।
बात्सल्य मात माता के मन का पाता।
संस्कार धर्म के पूर्व जन्म से लाया। जिनसेना

माँ की डांट :—

आ गया राम क्रीड़ा करने को बनमें।

ईर्ष्या हुआ न करती शिशुओं के मनमें।
जिनसेन खेलने लगा साथ सुख पाया ॥ जिनसेना-१०१ ॥
जब पता लगा रानी ने सुत को डाटा।
तू फूल तूल्य, जिनसेन जंगली काटा।
तू होनेवाला है राजा सुखदाया ॥ जिनसेना-१०२ ॥
वह दीन-दरिद्र-दुखी माँ का सुत प्यारा।
उसका न समादर होता अपने द्वारा।
सुत मन को माँ का कथन नहीं है भाया ॥ जिनसेना-१०३ ॥

शिक्षा और परीक्षा :—

अब आठ वर्ष के हुये, गये है पढ़ने।
जिनसेन गुणों से लगे रात-दिन बढ़ने।
गुदड़ी में मानों है यह लाल छुपाया ॥जिनसेना-१०४॥
वर कला बहत्तर सीखी पुरुषों वाली।
गुण-ज्ञान-कला से खिलतो शान निराली।
कर शिक्षा विधि संपूर्ण लौट घर आया ॥जिनसेना-१०५॥
घर आने पर माँ धार्मिक शिक्षा देती।
गुह्यात्म तत्व चर्चाओं में रस लेती।
अनुभव ही सबसे ऊँचाई बतलाया ॥जिनसेना-१०६॥
है रामसेन का ज्ञान पुस्तकों वाला।
माँ इसे पिलाती भौतिकता का प्याला।
दोनों में अंतर पड़ता गया सवाया ॥जिनसेना-१०७॥
श्री रामसेन का वेष राजसो प्यारा।

वह देवकुंवर सा सुन्दर आकृतिवारा।
मुखचंद्र सुधा बरसाता बहुत सुहाया ॥जिनसेना-१०८॥
जिनसेन पुत्र स्नेह नृपति करते हैं।
पर रत्नवती से मन ही मन डरते हैं।
लेकिन कुछ रास्ता नहीं निकलने पाया ॥जिनसेना-१०९॥
नृप रत्नवती से खिंचे-खिचे से रहते।
मन व्यथा किसी के सम्मुख कभी न कहते।
खुद ने ही अपने माथे इसे चढ़ाया ॥जिनसेना-११०॥
जिनसेन रमा है जनता की आँखों में।
सुत इसके जैसा कब मिलता लाखों में।
पर इसको कैसे जाये आगे लाया ॥जिनसेना-१११॥
नृप रामसेन बनने से जनता रूठे।
जिनसेन बने तो रत्नवती सिर कूटे।
यह सांप छछूंदर वाला खेल रचाया ॥जिनसेना-११२॥
कुछ सोच नरेश्वर बोले मंत्रिश्वर से।
तुम करो परीक्षा पुत्रों की गुण पर से।
युवराजा किसको जाये कहो बनाया ॥जिनसेना-११३॥
मंत्री ने एक विशाल सभा बुलवाई।
दो पुत्र-परीक्षा जो कुछ शिक्षा पाई।
घोड़ो का भारी झुंड वहाँ लगवाया ॥जिनसेना-११४॥
इनमें से चुन लो कोई उत्तम घोड़ा।
मत चढ़ना उस पर सको न जिसको दोड़ा।

जिनसेन अश्वचुन विजयी बनकर आया ॥जिनसेना-११५॥
हय क्रीड़ा विविध तरह की फिर दिखलाई।
दर्शक लोगों की मति भी अति चकराई।
पर रामसेन तो पिछड़ गया दुःख पाया ॥जिनसेना-११६॥॥
असिचालन-शरसंचालन किया अतिभारी।
जिनसेन दिखाता इसमें भी हुशियारी।
श्री रामसेन से धनुप न गया चढ़ाया ॥जिनसेना-११७॥
अब आत्म तत्व के विषयों में भी पूछा।
जिनसेन दार्शनिक बोला सत्य समूचा।
सज्ज्ञान स्वयं को माताजी से पाया ॥ जिनसेना-११८॥
रामसेन को पता नहीं आत्मा का।
क्या पता बताये वह फिर परमात्मा का।
हो गया किनारे खड़ा बहुत शरमाया ॥ जिनसेना-११९॥
नृप सचिव सभासद मन गदगद हो जाते।
जिनसेन कुंवर को श्रेष्ठ ज्येष्ट बतलाते।
कुछ पहेलियाँ भी पूछो हर्ष बढ़ाया ॥जिनसेना-१२०॥
मंत्रीश्वर बोले-दोनों योग्य बड़े है।
तुलना में पहले, पहले यहीं खड़े है।
उठ राजा ने अब उसको गले लगाया ॥जिनसेना-१२१॥
जिनसेना का प्रतिविंव पुत्र है प्यारा।
सुत संस्कारित बनता है माँ के द्वारा।
सुत माता के प्रति मन अनुराग बढ़ाया ॥जिनसेना-१२२॥

राजसभा में बुलाइयेगा :—

कल राजसभा में इनको आप बुलाना।
इन पुत्रों का कुछ है सम्मान बढ़ाना।
असि-अश्व-और युवपद देना ठहराया॥जिनसेना-
जो आज्ञा कहकर मंत्री चलकर आये।
जिनसेना को वे समाचार बतलाये।
कल भेज दीजिये सुत को जब बुलवाया॥जिनसेना-
सुन पुत्र प्रशंसा मन ही मन सकुचाई।
सुत की न प्रशंसा माँ की यही बढ़ाई।
मन सोच रही क्या भाग्य पलटनेआया॥जिनसेना-
निज सुत को भेज दिया है जिनसेना ने।
श्री रामसेन को भेज दिया रतना ने।
दोनों को मन में हर्ष विशेष सवाया॥जिनसेना-
भूपति ने पुत्रों को निज निकट बिठाया।
दोनों पर मनका बिमल स्नेह बरसाया।
जिनसेन पुत्र को उत्तम हय बकसाया॥जिनसेना-
असि रत्न मुष्टिमय दिया प्रेम से भरी।
जिनसेन पुत्र ने बक्सीस स्वीकारी।
इन चीजों की क्या आवश्यकता ? गाया॥ जिनसेना-
जो स्नेह आपका, वही पुत्र का धन है।
देने से, ऊँचा जो देने का मन है।
दी रामसेन को ये सब, स्पष्ट सुनाया। जिनसेना-

इस विनयभाव ने गद्‌गद् हो नृप बोला।
जो छिपा भाव था उसको मुख से खोला।
यह स्नेह नहीं, युवराज तुझे बनाया ।।जिनसेना-१३०।।
ये अश्व और असि राज्य चिन्ह सुखकारी।
अधिकार और पद पाने का अधिकारी।
देना था तुझको, इसीलिये बुलवाया ।।जिनसेना-१३१।।
उठ शीश झुका आशीष प्रेम से पाई।
जनता ने जय जय की आवाज लगाई।
श्री रामसेन का मुख दुःख से कुम्हलाया । जिनसेना-१३२।।

माँ का अनुमान :—

जिनसेन आ गया माँ से बात सुनाई।
माँ सुनकर थोड़ी-थोड़ी सी हरषाई।
ये चीजें लानी नहीं चाहिये, भाया ! ।।जिनसेना-१३३।।
दुःख पायेगी इससे वह देख विमाता।
ईर्ष्या से जिसका जुड़ा जन्म से नाता।
उसने ही महलो पर अधिकार जमाया ।।जिनसेना-१३४।।
लगता है चीजें पड़े तुझे लौटानी।
वह बड़ी हठीली है रोपीली रानी।
क्या तुझे पता, इतिहास न गया सुनाया ।।जिनसेना-१३५।।
सुत बोला-चीजें वापिस कभी न दूंगा।
अपमान स्वयं का मैं तो नहीं सहूँगा।
'अपमान न सहना' तूने ही सिखलाया ।।

ओ पगले बेटे। शक्ति प्रयोग न करना।
विद्रोह कलह से हमें हमेशा डरना।
चल भोजन करले, तेरे लिये पकाया ॥जिनसेना-१३

रत्ना का रोष :—

शुभ राज्य-चिन्ह असि-अश्व दे दिये भारी।
जिनसेन पुत्र को बना दिया अधिकारी।
सुन रत्नवती रानी ने मुँह बनाया ॥जिनसेना-१३
जा कोपालय लेटी लेटी, केश खुले हैं।
तन-बसन लपेटे जो उजले न धुले हैं।
नागिन ने मानों अपना फन फूलाया ॥जिनसेना-१३६
जब मिली सूचना आये नृपति मनाने।
क्यों सोई कोपभवन में उठो बताने।
रत्ना ने झटका दे नृप हाथ हटाया ॥जिनसेना-१४
बस गरजी सिंघण सी बाघण सी बोली।
क्या मुझे समझते आप अभी भोली।
क्यों आज कलेजा मेरा हाय! जलाया ॥जिनसेना-१४१
तुम मनसे जिनसेना के बने हुये हो।
तुम मन से रत्ना से तने हुये हो।
जो मन में था, वह आज सामने आया ॥जिनसेना-१४२
जयमंगल बोले ऐसा कैसे कहती।
तू महलों में रहती, वह बन में रहती।
सुख पटरानी का उसने कभी न पाया ॥जिनसेना १४३

वह अपने कर्मों से ही गई निकाली।
आपेक्ष लगाते कैसे मुझ पर खाली।
क्यों उसके सुत को पद-युवराज दिलाया ।।जिनसेना-१४४।।
क्या रामसेन सुत योग्य नहीं है पद के।
क्या भाव बिकेगा यह रद्दी कागज के।
नृप बोला कारण सुन लो जो सुखदाया । जिनसेना-१४५।।
वह योग्य विलक्षण और विचक्षण भारी।
कर चुके परीक्षण लक्षण से नर-नारी।
जिनसेन कुंवर जन-जन के मन पर छाया ।।जिनसेना-१४६।।
सुन रतना आग बबूला होकर बोली।
जल रही चौक में ज्यों फागण की होली।
लो सुन लो यह आदेश विशेष, सुनाया ।।जिनसेना-१४७।।
वे अश्व और असि उससे छीने जायें।
पद युवराज का मम सुत को दिलवायें।
सुनते ही नृप का मस्तक चक्कर खाया ।।जिनसेना-१४८।।
जो ऐसी इच्छा थी, तो पहले कहना था।
क्या कष्ट-रूष्टता का मुझको सहना था।
महिपति ने अपना स्वर कुछ रूक्ष बनाया ।।जिनसेना-१४९।।
मैं देकर वापिस कभी न लेनेवाला।
पद रामसेन को कभी न देनेवाला।
जो दिया गया वह है उसका बतलाया ।।जिनसेना-१५०।।
जो रामसेन को पद न दिया जायेगा।

तो मेरा मरना शय्या पर आयेगा।
यह अंतिम निर्णय सुन लो, फिर दुहराया ॥जिनसेना-१५१॥
भयभीत बना है भूपति सुनकर वाणी।
निर्भीक न होते कभी लोभी प्राणी।
"हाँ" वही करूँगा जो तुमने फरमाया ॥जिनसेना-१५२॥
उठ खड़ी हो गई रत्ना दिखाती।
बोली—मैं अन्न-जल पहले मुंह न लगाती।
हो जाये पहले काम, सभी चित चाया ॥जिनसेना-१५३॥

विश्वास और औदार्य :—

आ नृपति सचिव से मन की व्यथा सुनाता।
क्या करूँ प्रश्न इज्जत का क्या न सुहाता।
स्त्री हठ ने घर में यह कुहराम मचाया ॥जिनसेना-१५४॥
है कुंआ इधर है उधर बड़ी सी खाई।
है पुत्र इधर वह रानी इधर सुहाई।
फंस गया बीच में, कुछ न समझ में आया ॥जिनसेना-१५५॥
सुन कहा--सचिव ने सोच न इतना करिये।
रानी के कहने से मत इतना डरिये।
जा सकता सुत से सब कुछ वापिस पाया ॥जिनसेना-१५६॥
वह बहुत विनम्र सरल मन सीधा सादा।
कहना न पड़ेगा उससे हमको ज्यादा।
सुलझाने जाऊँ सूत गुत्थियों का खाया ॥जिनसेना-१५७॥
आश्वस्त बना नृप सचिव कथन सुनप्यारा।

दुःख क्या न मिटाया जाता औरो द्वारा।
चल सचिव स्वयं जिनसेना के घर आया ॥जिनसेना-१५८॥
रानी से अपने मन की व्यथा सुनाई।
सुत-मुख पर माँ ने अपनी दृष्टि टिकाई।
सुत ने निज आशय मंत्री से बतलाया ॥जिनसेना-१५९॥
है आप पिता सम आदरणीय बड़े ही।
आदेश आपका मान्य हमेशा खड़े ही।
लो ले जावो जो राजा ने मगवाया ॥जिनसेना-१६०॥
जा पूज्य पिताजी से ये चीजें देना।
माँ रत्नवती से इतना भी कह देना।
क्या भाग्य छीन सकती है कोई छाया ॥जिनसेना-१६१॥
असि-अश्व-राज्य कितने ही पा सकता हूँ।
भुजबल से महितल पर भी छा सकता हूँ।
सुन सचिव साहसी-वाणी मन हरपाया ॥जिनसेना-१६२॥
आ गया सचिव असि अश्व साथ में लाया।
जो कहा कुंवर ने राजा को बतलाया।
गुण गुणी गुणज्ञों की है, अद्भुत माया ॥जिनसेना-१६३॥

दुःख और देशाटन :—

असि-अश्व दे दिये राजा ने रानी को।
दुःख बहुत हुआ है इससे नृप-ज्ञानी को।
बन गई गले का फंदा स्त्री की माया ॥जिनसे
मैं सास स्वतंत्र अब नहीं ले पाऊँगा।

रानी की इच्छा से पीऊ-खाऊँगा।
बन गई घुटन मन चिन्तन से अकुलाया ।।जिनसेना-१६५।।
भूपति ने मंत्रीश्वर को बात बताई।
मैं जाऊँ देशाटन करने के ताँई।
शासन का संचालन करना सुखदाया ।।जिनसेना-१६६।।
है तुम पर शासन पटरानी का भारी।
पर आखिर में वह है जाति से नारी।
अनुचित आज्ञा को देना तुम ठुकराया ।।जिनसेना-१६७।।
जयमंगल राजा चले गये हैं बाहर।
अब रत्नवती को नहीं किसी का भी डर।
वह करती रहती जो कुछ मन को भाया ।।जिनसेना-१६८।।
जिनसेना को दुःख देना, उसने चाहा।
पर मंत्र आदि में कभी न लगता स्वाहा।
क्या टूटा छींका जो बिल्ली ने चाया ।।जिनसेना-१६९।।
थे सचिव सभासद इसके बड़े विरोधी।
इसलिये नही बन सकती यह प्रतिरोधी।
शासन पर अंकुश रखती जो हक पाया ।।जिनसेना-१७०।।

अनुकंपा और शौर्य :—

ले खड्ग पुराना और अश्व पुराना।
जिनसेन चला वन चिन्तन करता नाना।
जिनसेना ने रोका न और रुकवाया ।।जिनसेना-१७१।।
वन भ्रमण हेतु वह निकल पड़ा है आगे।

डरते हैं वन से कायर क्लीब अभागे।
वन बीच भय नहीं भय मन बीच समाया ॥जिनसेना-१७२॥
इत लदे माल से ऊँट तीन सौ जाते।
सामान जरूरी सीमा पर पहुँचाते।
असवारों ने तन शस्त्रों से सजवाया ॥जिनसेना-१७३॥
चलते थे अश्वारोही आगे-पीछे।
तलवार हाथ में लिये हुये थे खींचे।
कर रखा नशा कुछ होश हवास भुलाया ॥जिनसेना-१७४॥
वे रहमी से ऊंटों को मार रहे थे।
जिनसेन कुंवर उनको ललकार रहे थे।
क्या पशुओं के है जीव नहीं या काया ॥जिनसेना-१७५॥
यह राज्य नृपति जयमंगल का कहलाता।
पशुओं सिर अति भार न लादा जाता।
जो पीटे पशु को अपराधी कहलाया ॥जिनसेना-१७६॥
निर्भीक वचन सुन चमके सैनिक सारे।
है कौन वीर जो हमें खड़ा ललकारे।
क्यों रोक रखा है रास्ता, शस्त्र उठाया ॥जिनसेना-१७७॥
हट जा रे छोरे ! रास्ता छोड़ हमारा।
क्या तुझे नहीं है अपना जीवन प्यारा।
या कहीं विमाता ने घर से भगवाया। जिनसेना-१७८॥
जिनसेन सामना करने खड़ा हुआ है।
घमासान युद्ध भी बड़ा चालू हुआ है।

उन सबको इसने बन के बीच हराया ॥जिनसेना-१७९॥
ढेले से जैसे फट जाती जल काई।
फिटकरी नीर को करती यथा सफाई।
वे तितर बितर हो गये चित्त घबराया ॥जिनसेना-१८०॥
कुछ भागे कुछ घायल हो पड़े हुये हैं।
कुछ दूर दूर डर सुख से खड़े हुये हैं।
समझौता करने का प्रस्ताव उठाया ॥जिनसेना-१८१॥
हो वीर आप! हम सभी आपसे हारे।
हम शस्त्र छोड़, कर जोड़ खड़े हैं प्यारे।
दो परिचय अपना जो भी सत्य सुहाया ॥जिनसेना-१८२॥
जयमंगल नृप का पुत्र मैं बड़ा प्यारा।
जिनसेन नाम से जाता मुझे पुकारा।
है परिचय यह संक्षिप्त सत्य बतलाया ॥जिनसेना-१८३॥
हम आत्म सुरक्षा के हित शस्त्र उठाते।
अरियों को अपनी पीठ नहीं दिखलाते।
सम्यक्त्वी श्रावक का आचार सुहाया ॥जिनसेना-१८४॥
पशु और पक्षियों का न मारना भाई।
पीटो न बोझ अति मत लादो दुःख दाई।
इन नियमों का पालन जाता करवाया ॥जिनसेना-१८५॥
तुम जावो सुख से रास्ता छोड़ा जाता।
सुन चला काफिला तन मन से गुन गाता।
जिनसेन लौट घर आया, हाल सुनाया ॥जिनसेना-१८६॥

मां बोली बेटे। है यह बड़ी भलाई।
इस जीव दया को मानो दूध मलाई।
इससे ही जीवन जाता शुद्ध बनाया ॥जिनसेना-१८७॥
समता से माता रहती समय बिताती।
बेटे को साहस वाली कथा सुनाती।
प्रतिबिंब भावना का पड़ना मन भाया ॥जिनसेना-१८८॥

र की खोज :—

पुर एक 'विजयपुर' चन्द्रसेन नृप भारी।
थी जिसकी रानी 'कनकलता' सुखकारी।
थी मदन-मालती कन्या नाम बतलाया ॥जिनसेना-१८९॥
गुन-शील-लाज से जिसका रूप खिला है।
कुल-मर्यादा का मानों एक किला है।
गुरू द्वारा जिसको गया ज्ञान सिखलाया ॥जिनसेना-१९०॥
यौवन ने सोये मन को शीघ्र जगाया।
बचपन की क्रीड़ाओं को मार भगाया।
राजा ने इसके हित अब वर ढुंढ़वाया ॥जिनसेना-१९१॥
जब इसके लायक उत्तम वर पाऊँगा।
तब बड़े प्रेम से इसको परणाऊँगा।
लौट दुनिया ढूढ़कर, बतलाते निजबात।
कमियाँ जो देखी गईं, सुना रहे साक्षात॥
भेजे है चारों और सचिव-चर-ठाया ॥जिनसेना-१९२॥

कमी ही कमी :—

वर कोई काला वर कोई है नाटा।
वर कोई सा है बना बनाया है भाठा।
कुल कहीं कलंकित, शंकित हमें बनाया ॥जिनसेना-॥
है कहीं ताड़ सम लंबा खंभा मानो।
वर ऐसा कैसा एक अचंभा मानो।
रंभा के वास्ते इन्द्र योग्य कहलाया ॥जिनसेना-॥
हैं कहीं नहीं माता-पिता-कुटुबीभाई।
है कहीं नहीं ऐश्वर्य और ठकुराई।
कमियों का दर्शन होता प्रथम सुहाया ॥जिनसेना-॥
है नाक कहीं चिपटा, आखें हैं छोटी।
है कहीं रूप पर संगति नीची खोटी।
है ठोठ भटारक जिसे न लिखने आया ॥जिनसेना-॥
है कहीं दूजवर उमर अतर भरी।
अविनयी कहीं अविवेकी अत्याचारी।
मन टिका नहीं हम सबको घर ले आया ॥जिनसेना-॥

वर मिल गया :—

नृप बोला, तो क्या लड़की रहे क्वांरी।
क्या मात-पिता हम बने रहें दुखियारी।
इतने में सैनिक आया शीश नंवाया ॥जिनसेना-॥
जिनसेन कुंवर की बात बताई सारी।
गुण-रूप शौर्य का मिश्रण इचरजकारी।

उस वीर पुत्र ने हमको वहीं हराया ।।जिनसेना-१९९।।
नृप बोला तुमको शर्म नहीं क्यों आई।
क्यों मार अकेले नरसे तुमने खाई।
वह वीर बताओ तुमसे क्यों बच पाया ।।जिनसेना-२००।।
सुन मंत्रीश्वर ने सविनय अर्ज गुजारी।
यह मदनमालती के लायक वरभारी।
घर बैठे ही गुणवान योग्य वर पाया ।।जिनसेना-२०१।।
नृप बोला संकट दूर हो गया सारा।
जयमगल नृप का मिला पुत्र वर प्यारा।
तुम जाओ सगपन कर आवो सुखदाया ।।जिनसेना-२०२।।

मंत्री की चतुरता :—

कुछ सेवक और सचिव मिलकरके आये।
आ राजसभा में मंत्री से मिल पाये।
आने का कारण स्पष्टतया बतलाया ।।जिनसेना-२०३।।
है नृप चन्द्रसेन की सुता एक है प्यारी।
है मदनमालती नाम रूप गुण भारी।
जिनसेन कुंवर हित मागा गया पठाया ।।जिनसेना-२०४।।
संवध करो तय झेलो पान सुपारी।
नरवर ने हमको भेजा कर अधिकारी।
सुन प्रश्न, सचिव का उत्तर ऐसा आया ।।जिनसेना-२०५।।
जयमंगल नृप के पुत्र बड़े दो प्यारे।
है दोनों ही वे लायक और कंवारे।

महलों में उनको जाता नहीं बुलाया ॥जिनसेना-२१३॥
श्री रामसेन है मेरा आत्मज प्यारा।
हो सकता है जामाता वही तुम्हारा।
मैंने न आज तक उसे नहीं दिखलाया ॥जिनसेना-२१४॥
मैं उसकी माता कहलाती, पटरानी।
सुत युवराजा की उठती नई जवानी।
क्या माँ ने मुख से अपना पूत सराया ॥जिनसेना-२१५॥
सुन सभी स्तब्ध हो गये स्वयं के मन में।
यह बात नहीं थी अपने तो चिन्तन में।
क्या करें? कहें? कुछ नहीं समझ में आया ॥जिनसेना-२१६॥

बात का सार :—

हम सोच समझकर, कल ही बतलायेंगे।
तय करके सबकुछ, विजयपुरम जायगे।
कर परामर्श बोला गृह-सचिव सुहाया ॥जिनसेना-२१७॥
ले आप बारात सहर्ष विजयपुर आना।
है मदनमालती को निश्चित परणाना।
दोनों कुंवरों को लाना सजा-सजाया ॥जिनसेना-२१८॥
किसको निज कन्या देना नरपति जानें।
हम यहाँ बात का छोर एक क्यों तानें।
दो विदा हमें आशय सारा बतलाया ॥जिनसेना-२१९॥

रानी की उधेड़बुन :—

रानी ने बुलवा पूछा मंत्रीश्व से।

निष्कर्ष मिला क्या ? उनके चिंतन पर से।
क्या रामसेन का व्याह पका करवाया ॥जिनसेना-२२०॥
जो कहा आपने उसका असर पड़ा है।
श्री रामसेन का भारी ही पलड़ा है।
तिथी निश्चित कर दी, बेला पत्र दिखलाया ॥जिनसेना-२
जयमंगल की सुतबधू बनेगी प्यारी।
जो मदनमालती राजसुता है क्वारी।
जाना है दोनों पुत्रों को फरमाया ॥जिनसेना-२२२॥
जिसको नृप देना चाहेंगे दे देंगे।
जो गये देख स्थिति वे सब कुछ कह देंगे।
सुन रत्नवती के मन में संशय छाया ॥जिनसेना-२२३।
जिनसेन कहीं उसको न व्याह कर लाये।
रह जाये राम न कहीं वहीं मुंहवाये।
आने दूं लेकिन पहले समय सुहाया ॥जिनसेना-२२४॥
जिनसेन कुंवर को जाने ही नहीं दूंगी।
मैं बारातियों से सीधी बात कहूंगी।
पी गई बात, मन कामों में अलभाया ॥जिनसेना-२२५॥

बारात तब जायेगी :—

मन सोचा मंत्री ने, जो नृप आ जायं।
तो काम सरलता से वे ही निपटायं।
लेकिन न हुआ जो मन ने प्लान बनाया ॥जिनसेना-२२६॥
अत्यन्त निकट आ गई व्याह की वेला।

रह गया काम करने में सचिव अकेला।
बारात सजाई बाजा गया बजाया ॥जिनसेना-२२७॥
श्री रामसेन बारात सजाकर जाये।
जिनसेन साथ में कभी न जाने पाये।
रानी ने अपना नव्या संदेश सुनाया ॥जिनसेन-२२८॥
जिनदास और मंत्री भी सुनकर भड़के।
जायेंगे तो जायेगे दोनो लड़के।
जायेगी नहीं बरात, हाथ दिखलाया ॥जिनसेना-२२९॥
हम अनुचित आज्ञा को न पालने वाले।
आदेश उचित को नही टालने वाले।
मन घबड़ाई है रानी, यह क्या माया ? ॥जिनसेना-२३०॥
जन मानस सारा अगर विरोध करेगा।
सुत रामसेन क्या उससे नहीं डरेगा ?
वह कोमल दिलवाला है कोमल काया ॥जिनसेना-२३१॥
पड़ गई अकड़ ढ़ीली रानी रत्ना की।
आशंका मन को हुई बड़ी हानि की।
समयानुकुल स्वर अपना मधुर बनाया ॥जिनसेना-२३२॥
जो उचित लगे वह करिये आप सयाने।
मैं क्या जानूं ? सब आपलोग पह
ले जायें दोनों को, जाना जनसे
रानी की स्वीकृति पाई मं
जिनसेना से कुछ चला मं ।

जिनसेन कुँवर, को भेजो साथ सुहाया ॥जिनसेना-२३४॥

मैं इसे न भेजूंगी जिनसेना बोली।
क्या मुझे समझते आप अभी भी भोली।
"दुःख में ही हूँ मैं-सुखी" स्पष्ट फरमाया ॥जिनसेना-२

जो काम अन्य हो, तो उसको ले जाओ।
बारात साथ में उसे नहीं ले जाओ।
परिणाम न इसका आ सकता सुखदाया ॥जिनसेना-२३६॥

गृह कलह बढ़ेगा और अशांति बढ़ेगी।
महलों में रानी गीता यही पढ़ेगी।
सुन रत्नवती के पास सचिव फिर आया ॥जिनसेना-२३७॥

जिनसेना ने अरजी न हमारी मानी।
अब हाथ आपके बात उसे मनवानी।
सुन रानी के मन छाया हर्ष सवाया ॥जिनसेना-२३८॥

क्या दोष आपका ? जो न भेजती रानी।
ले रामसेन को जायें कर अगवानी।
मैं करूँ खुशामद क्यों उसकी, बतलाया ॥जिनसेना-२३९॥

आखिर में, मैं तो पटरानी कहलाती।
जो उसे मनावूं तो इज्जत धुल जाती।
मंत्री ने अपना भाव स्पष्ट दरपाया ॥जिनसेना-२४०॥

बारात भेजनी है तो उसे मनायें।
जिनसेन विना बारात कभी नहीं जाये।
मतिवान सचिव ने फाड़ा खूब फंसाया ॥जिनसेना-२४१॥

अच्छा ले जाइयें :—

मुख उतर गया रानी का सुनकर वानी।
जिनसेना को तो होगी मुझे मनानी।
हो गरज गधे को जाता बाप बनाया ॥जिनसेना-२४२॥
श्री चन्द्रसेन नृप भारी चतुर सयाने।
सह रामसेन को पुत्री को परणाने।
भाई को केवल उसके साथ बुलाया ॥जिनसेना-२४३॥
चल आई जिनसेना पै वात वताई।
क्या मेरे से भी बोलो हुई लड़ाई।
क्यों रूठ रही हो दो कारण समझाया ॥जिनसेना-२४४॥
जा रहा राम बारात सजाकर भारी।
जिनसेन कुंवर को भेजो कर तैयारी।
दोनों में कोई फर्क नहीं, इक माया ॥जिनसेना-२४५॥
है रामसेन भी पुत्र आपका प्यारा।
जिनसेन कुंवर है मेरा परम दुलारा।
है दाई बॉई आखे सम सुखदाया ॥जिनसेना-२४६॥
जिनसेना का मन अहंकार से सूना।
इसको न लगाना आता कत्था चूना।
ले जावो इसको, है यह तेरा जाया ॥जिनसेना-२४७॥
लौटी है रानी बात सचिव से कह दी।
दोनों के हार्थो लगवा दी
हो गई बरात रवाना श ॥जिनसेन

जन खड़े हुये फूलों की बरसा करते।
जयकारी नारों से आशायें भरते।
रास्ते में कोई "चंपापुर" आया ॥जिनसेना-२४९॥

जिनसेन की शादी :—

चंपापुर सुंदर नगर मनोहर भारी।
नृप "माधवसिंह" का शासन जन हितकारी।
पटरानी "रतिमाला" ने प्रेम निभाया ॥जिनसेना-२५०॥
है "चम्पमाला" पुत्री परम सयानी।
सम्यक्त्वधारिणी और श्राविका ज्ञानी।
वर मिला न धर्मी सम्यक्तवी सुखदाया ॥जिनसेना-२५१॥
मन चिन्ता करते रहते राजारानी।
सुन, समझ, सुता ने खोली अपनी बानी।
क्यों चिन्ताओं से सुखा रहे हो काया ॥जिनसेना-२५२॥
जो लिखी हुई वह वस्तु स्वतः मिल जाती।
हो वृद्धावस्था तो दाढ़े हिल जाती।
[सु]न अश्वासन मन कुछ-कुछ स्थिरता पाया ॥जिनसेना-२५३॥
आकास्मिक सूचन आया राजभवन में।
बारात रुकी है कोई अपने वन में।
जा करो पता है कौन कहाँ से आया ॥जिनसेना-२५४॥
बारात बड़ो है राजकुमारों वाली।
रुक करके आगे जल्दी जाने वाली।
सुन, हर्षित मन माधवसिंह मिलने आया ॥जिनसेना-२५५॥

जिनदास सचिव ने परिचय है करवाया।
जिनसेन कुंवर को देखा है मन भाया।
वर आया है घर मानों विना वुलाये ॥जिनसेना-२५६॥

यह धर्मनिष्ठ हो तो मैं वेटी दे दूँ।
कर तात्विक चर्चा यहीं परीक्षा ले लूँ।
जो पूछा, परखा, समाधान सव पाया ॥जिनसेना-२५७॥

वर चम्पकमाला के अनरूप मिला है।
नरपति का अंतर खुशियों से उछला है।
जिनदास सचिव को श्रमणोपासक पाया ॥जिनसेना-२५८॥

अतिथ्य ग्रहण करने की कृपा करोजी।
वन में न, भवन में आप उतरोजी।
माना है आग्रह, जो नृप ने फरमाया ॥जिनसेना-२५९॥

ले राजकुमारों को मंत्रीश्वर आया।
बारात वहीं पर रूकी, वहाँ ठहराया।
श्री माधव सिंह ने प्रेम भाव वरसाया ॥जिनसेना-२६०॥

पुत्री की माँ से, फिर पुत्री से पूछा।
पूछा है नृप ने अपना महल समूचा।
आशय उन सबका एक सरीखा पाया॥जिनसेना-२६१॥

जिनसेन कुंवर के साथ सुता परणाई।
जो रस्मे थीं वे विधि से गई निभाई।
अव आगे चलने का प्रोग्राम वनाया ॥जिनसेना-२६२॥

प्रवेश रोकना है :—

जिनसेन कुंवर ने कहा—लौट आवूंगाँ।
तब साथ बहू को लेकर घर जावूंगाँ।
जिनदास सचिव का अंतर मन हरषाया ॥जिनसे
बरात विजयपुर सुख से पहुँच रही है।
अगवानी करने आया भूप वहीं है।
उद्यान मनोहर में इसको ठहराया ॥जिनसेना-२॥
जिनदास सचिव से नृपति जानने आया।
है कुंवर कौन सा जिसने छक्का छुड़ाया।
कर अंगुली का संकेत वही बतलाया ॥जिनसेना-२॥
परित्यक्ता रानी का सुत साधारण है।
परिस्थिति में केवल पटरानी कारण है।
मैं दूंगा लड़की इसको ही, ठहराया ॥जिनसेना-२॥
यह बसुंधरा वीरों की भोग्या नारी।
वीरों ने हिम्मत नहीं कहीं भी हारी।
परिस्थितियों ने क्या पलटा कभी न खाया ॥जिनसेना-२॥
कर निर्णय अपना छिपा लिया है मन में।
जिनदास सचिव से बोला मधुर वचन में।
इन दोनों को इसलिये गया बुलवाया ॥जिनसेना-२॥
इन दोनों में से जिसे, आप परणायें।
वर वेश उसे पहना, मंडप में ले आयें।
कर नम्र निवेदन चन्द्रसेन चल आया ॥जिनसेना-२॥

मंडप की रचना दर्शनीय करवाई।
सेना की टुकड़ी को आज्ञा फरमाई।
बारात प्रवेश न करने पाये, गाया ॥जिनसेना-२७०॥
जो तुम्हें जीतकर मंडप में आ जाये।
हम उससे अपनी पुत्री को परणायें।
यह शक्ति परीक्षण का क्षण गया सजाया ॥जिनसेना-२७१॥

रामसेन की बारात :—

जिनसेन सभी से उदारता से बोला।
श्री रामसेन को पहनाओ, वर चोला।
मैं चंपापुर में फेरे खाकर आया ॥जिनसेना-२७२॥
वर वेश है सजाया रामसेन के तन पर।
है असर नहीं जिनसेन कुंवर के मन पर।
वर घोड़ा भारी शान सहित सजवाया॥जिनसेना-२७३॥
चलते हैं पीछे पीछे, सभी बराती।
चलते हैं सारे साजे हुये हय, हाथी।
बाजे ने अपना गीत सुरीला गाया ॥जिनसेना-२७४॥
चल रहा साथ जिनसेन चढ़ा है घोड़े।
जन खड़े हुये है हाथ प्रेम से जोड़े।
जनता ने फूलो का सावन बरसाया ॥जिनसेना-२७५॥
पुर बाजारो में धूमधाम से घूमें।
घर छतें ओर छज्जों पर जन है झूमे।
वर दर्शन करने नारीगण ललचाया ॥जिनसेना-२७६॥

वर की शोभा :—

वर राजा प्यारा सुंदर मुखड़े वाला।
इन आंखों पर से ढाला स्वर्णिम प्याला।
तन गोरा गोरा कनक समान सुहाया ॥जिनसेना०॥
है तोते जैसी तीखी नाक सुहाई।
है कमलनाल सम बांहों की लबाई।
है साथ सुघड़-जीवन मनहरणी काया ॥जिनसेना०॥
ये बाल बड़े घुंघराले काले काले।
है दाड़िम दाने उजले दांत निराले।
फलियों सी अंगुलियों ने छिद्र न पाया ॥जिनसेना०॥
हो जाये न नजर दोष सभी पुकारे।
मंडप के द्वारे सुख के साथ पधारे।
आरती न उतारी वर को नहीं वधाया ॥जिनसेना०॥

जिनसेन की जीत :—

बारात नहीं मंडप में घुसने पाई।
वर राजा के सह होने लगी लड़ाई।
सब बरातियों ने मिलकर जोर लगाया ॥जिनसेना०॥
श्री रामसेन का पलड़ा ऊंचा उठता।
दरवाजे पर से सैनिक एक न हटता।
जिनसेन जोश से झटपट आगे आया ॥जिनसेना०॥
जिनसेन कुंवर बलपूर्वक उन पर टूटा।
तब खड़े सैनिकों का साहस बल खूटा।
गिर गई हाथ से तलवारे भय छाया ॥जिनसेना०॥

हो गई सैनिकों की बस खूब पिटाई।
कर सके नहीं वे ज्यादा देर लड़ाई।
जिनसेन जोश से मंडप में घुस पाया ।।जिनसेना-२८४।।
बारात प्रविष्ट हुई है पीछे पल में।
हो गई शांति की स्थापन स्थल में।
नृप चन्द्रसेन ने आकर अब फरमाया ।।जिनसेना-२८५।।

यह उसे, वह उसे :—

जिनसेन तेज हैं शौर्य और साहस में।
दोनों को तोला जाये जो आपस में।
बल तोलन के हित पंथ यही अपनाया ।।जिनसेना-२८६।।
जिनसेन कुंवर से मम पुत्री परणाऊँ।
श्री रामसेन को खाली नहीं लौटाऊँ।
सामन्त सुता से दो इसको परणाया ।।जिनसेना-२८७।।
जिनसेन कुंवर ने मदनमालती पाई।
सामन्त सुता से व्याहा छोटा भाई।
दे दिया प्रेम से दान दहेज सुहाया ।।जिनसेना-२८८।।
रथ घोड़े-हाथी दास-दासियाँ भारी।
आभूषण वसनों की संख्या अनधारी।
आनन्द विजयपुर ने पुर-जोर मनाया ।।जिनसेना-२८९।।

जिनसेना के पास :—

ले विदा विजयपुर से चम्पापुर आये।
श्री माधवसिंह नृप प्रेम सहित ठहराये।

की खातिरदारी, कर सम्मान सवाया ॥जिनसेना-२६०॥
ले विदा साथ "चंपकमाला" कोली है।
धन दिया अधिक आशीशें सबने दी है।
चल पड़े कनकपुर पहुँचे हर्ष न माया ॥जिनसेना २६१॥
अब 'चंपकमाला" "मदनमालती" आई।
जिनसेना सासू से आशीषे पाई।
जिनसेन कुंवर ने दान दहेज दिखाया ॥जिनसेना-२६२॥
उद्यान भवन अब राज भवन सम लगता।
दिन में भी दिपोत्सव सम है जगमगाता।
माँ जिनसेना का जीवन सफल बनाया ॥जिनसेना २६३॥
है बड़ा भाग्यशाली बेटा यह मेरा।
ले आया बहुयें, मिटा दिया अंधेरा।
फल पूर्वजन्म कृत शुभ करणी का पाया ॥जिनसेना-२६४॥
बहुयें भी सुंदर विनयवती है भारी।
दोनों ही ऊंचे घर की राजकुमारी।
है धर्म तत्व का ज्ञान विशेष बढ़ाया ॥जिनसेना-२६५॥

रत्नवती का रोना :—

ले अपनी पत्नी रामसेन अब आया।
माँ रत्नवती उसको पगे लगाया।
सब बात सुनो, मंत्री को तुरंत बुलाया ॥जिनसेना-२६६॥
विश्वास घात हो गया साथ में मेरे।
समझो हथकंडे हैं ये सारे तेरे।

क्यों मदनमालती से उसको परणाया ॥जिनसेना-२९७॥
मैं तुझे हटा दूंगी अव मंत्री पद से।
फूले न समाते हो जिस पर के मद से।
सामान यहाँ पहुँचा दो, जो कुछ पाया ॥जिनसेना-२९८॥
जिनदास सचिव बोला है मीठे स्वर से।
कर्मों से होता, काम न होता नर से।
जिनसेन कुंवर को कर्मों ने परणाया ॥जिनसेना-२९९॥
नृप चंपापुर के तथा विजयपुर वाले।
हैं वहुत सयाने कहीं न भोले-भाले।
जो कुछ भी उसने किया समझ में आया ॥जिनसेना-३००॥
आयेंगे नरपति देशाटन कर घर को।
मैं त्याग पत्र दे दूंगा श्री नरवर को।
अनुचितता द्वारा अंतर अति अकुलाया ॥जिनसेना-३०१॥

निम्न स्तर का चिंतन :—

सुन रानी का मुख पड़ा एकदम फीका।
सिर मेरे निकलेगा अपयस का टीका।
मुख से न एक भी शब्द निकलने पाया ॥जिनसेना-३०२॥
दुर्भाव बनाने लगा चित रानी का।
मिथ्यात्व-परक ज्यों चिन्तन अज्ञानी का।
जिनसेन कुंवर को जाये अब मरवाया ॥जिनसेना-३०३॥
जिनसेन रहेगा जग में जब तक जिन्दा।
श्री रामसेन की जग में तब तक निन्दा।

गलफंदे को अब जाये शीघ्र कटाया ॥जिनसेना-३०५॥
पीछे तो सब कुछ मेरा ही घर में।
सुत स्वर का मिश्रण होगा मेरे स्वर में।
पहले से पति को है आधीन बनाया ॥जिनसेना-३०६॥
नृप कन्याओं से सुत को परणाऊगीं।
सुन्दर से सुन्दर बहुयें ले आवूंगीं।
सुत मेरा ही युवराज बड़ा कहलाया ॥जिनसेना-३०३॥
नृप मेरा कहना नहीं टाल पायेंगे।
जिनसेन कुंवर को वे ही मरवायेंगे।
घर से ही निकलवा देंगे या राया ॥जिनसेना-३०७॥
कुविचारों में यों डूबी रहती रानी।
अच्छा न इसे लगता है (इसे) भोजन पानी।
निर्दीया ने अपना वैर विरोध-बढ़ाया ॥जिनसेना-३०८॥
जिनसेन रानियों सहित महल में आया।
माँ रत्नवती को अपना शीश नवाँया।
दुर्भाव-सहित आशीश-शब्द फरमाया ॥जिनसेना-३०९॥
कर देशाटन जयमगल राजा आये।
निज राजव्यवस्था देख शांति सुख पाये।
सुन समाचार सुत व्याहों के चित हरपाया ॥जिनसेना-३१०
मन जिनसेना के प्रति अनुराग जगा है।
भय रत्नवती का लेकिन बड़ा लगा है।
मिलने को अपना पांव न गया उठाया ॥जिनसेना-३११॥

रानी ने स्वागत किया भूप का भारी।
यह कपट कलाओं में थी चतुरा नारी।
तन मन से अपना प्रेम अपूर्व दिखाया ॥जिनसेना-३१२॥

जहरीले लड्डू :—

जिनसेन बना जयमंगल[2] का [1]नृप प्यारा।
था राजसभा में इसका तेज सितारा।
राजा ने अपने पास इसे बिठलाया ॥जिनसेना-३१३॥
जनता के मन को है इससे ही आशा।
गुण नजर आ रहे इसमें उत्तम खासा।
जब झोड़ पड़ा तो इसने ही सुलझाया ॥जिनसेना-३१४॥
रानी की आशा पर फिरता है पानी
होती है रानी के मन को हैरानी।
जो सोच रखा था, एक न होने पाया ॥जिनसेना-३१५॥
निकलेगा नृप के कर से क्या यह कांटा।
अब तक न इसे जब एकबार भी डांटा।
मैं ही कुछ करूँ उपाय, मुझे जो भाया ॥जिनसेना-३१६॥
विष मिश्रित लड्डू करवाये तैयारी
कट जाये जिससे जीवन की बीमारी।
जिनसेन कुंवर को बुलवाकर खिलवाया ॥जिनसेना-३१७॥

विष छट गया :—

खा लड्डू घर आ गया कुंवर चल करके।
विष लगा फैलने नस-नस बीच उतरके।

निज शयन कक्ष में सोया कुछ न बताया ॥जिनसेना-३१८॥
दिन उगा कुंवर क्यों नहीं अभी तक आया।
जिनसेना ने मन ही मन प्रश्न उठाया।
क्रम वन्दन करने का उसने न चुकाया ॥जिनसेना-३१९॥
इत "मदनमालती" चम्पकमाला आई।
आये न हमारे पास रात में सांई।
क्यों निजी कक्ष में सोये ? यह न बताया ॥जिनसेना-३२०॥
माँ और पत्नियाँ दोनों मन अकुलाई।
महलों की खिड़की तुड़वाकर खुलवाई।
बेहोश पड़ा सुत नीली छम है काया ॥जिनसेना-३२१॥
रोती हैं तीनों हा हाकार हुआ है।
तूफ़ान बिना ही प्रलयंकार हुआ है।
क्या खाया इसने, किसने इसे खिलाया ॥जिनसेना-३२२॥
हम करें और क्या ? कहो कहाँ पर जायें ?
है कौन हमारा जिसको कथा सुनायें।
असमय में मेरे सुत को गया उठाया ॥जिनसेना-३२३॥
सुन बात नृपति जयमंगल दौड़े आये।
सुत हालात से मन बहुत बहुत घबड़ाये।
संदेह उसी रानी पर है फरमाया ॥जिनसेना-३२४॥
विष मूर्च्छा से मूर्च्छित है बेटा प्यारा।
चढ़ गया भूप का आसमान पर पारा।
रानी पर गुस्सा आया अधिक दिखाया ॥जिनसेना-३२५॥

जा रत्नवती से कह दो निकले घर से।
उसका न भरोसा है इस घटना पर से।
वह जहर मुझे भी दे सकती है, गाया ॥जिनसेना-३२६॥
जिनसेना रानी पांव पकड़ कर बोली।
उसको न निकालो है वह मन से भोली।
उसने न बिगाड़ा, कर्म उदय में आया ॥जिनसेना-३२७॥
आयुष्य अगर है तो न मरेगा बेटा।
हो जायेगा यह घड़ी-पलक बैठा।
रक्षक है इसका अपना पुण्य सवाया ॥जिनसेना-३२८॥
हम दोष स्वयं को क्यों दें अपने मन से
मन शांत बनायें निज समता दर्शन से।
जो सीखा, समझा ज्ञान न जाये गंवाया ॥जिनसेना-३२९॥
आदेश रद्द कर दिया गया है पहला।
जिनसेना ने खेला नहले पर दहला।
अनुकंपावाला भाव स्पष्ट बतलाया ॥जिनसेना-३३०॥
जिनसेना अब नवकार लगी है जपने।
तप चंपकमाला बैठ गई है तपने।
जिनशासन देव सहायक बन कर आया ॥जिनसेना-३३१॥
विष-मूर्च्छा दूर हटाई है सुरवर ने।
उठ कुंवर लगा है सुख से बातें करने।
सर्वत्र हर्ष छाया है, मोद मनाया ॥जिनसेना-३३२॥
हर्षाश्रु ढलकने लगे नयन-गिरिवर से।

बिन सावन ऋतु घन रिम-झिम करता बरसे।
माता ने सुत को अपने गले लगाया ॥जिनसेना-२३३॥
आ गिरी पत्नियां नमकर पति चरणों में।
है शक्ति यहि अरिहंतों के शरणों में।
यह चमत्कार आंखो से देखा पाया ॥जिनसेना-२३४॥
क्यों गये महल में क्यों फिर लड्डू खाये।
घर आकर हमको बोलो क्यों न बताये।
क्यों सोये आप अकेले ? क्यों दुःख पाया ॥जिनसेना-२३५॥
अब नहीं अकेले जाना, कहीं न खाना।
घर वालों कुछ बीतक नहीं छुपाना।
माँ और पत्नियों ने यह नियम सुनाया ॥जिनसेना-२३६॥

कर्म परीक्षा के लिये :—

अब कही लड्डुओं की सब कथा कुंवर ने।
पुण्यों ने केवल दिया न मुझको मरने।
सुन जयमंगल ने सुत का भाग्य सराया ॥जिनसेना-२३७॥
सुत बोला पूज्य पिताजी से झुक करके।
करना न मुझे कुछ अपने घर रुक करके।
धिक्कार पुत्र को जो मां ने दुःख पाया ॥जिनसेना-२३८॥

अनुमति दीजिये :—

दो अनुमति जाऊँ मैं परदेश यहाँ से।
कर पाऊँ कर्म-परीक्षा ठीक वहां से।
सुन अपने सुत को नरपति ने समझाया ॥जिनसेना-२३९॥

जिनसेना क्या सोचेगी अपने मन में।
रहने न दिया था जिसको राजभवन में।
जिनसेना पुत्र को आज विदेश पठाया ॥जिनसेना-३४०॥
सद्धर्म-प्रभाव निहार चुकारानी का।
मन न प्रभावित होगा जगप्रानी का।
तुम रहो यहाँ सुख से आदेश सुनाया ॥जिनसेना-३४१॥
संतोस विमाता को होगा जाने से।
संतोष मुझे होगा कुछ कर पाने से।
संतोप आपको होगा, सुन यश छाया ॥जिनसेना-३४२॥
जयमंगल ने "हाँ" कहो विवश होकर के।
मन रह जाता है बहुत वार रोकर के।
सुत उठ करके अब माता पै चल आया ॥जिनसेना- ३४३॥
माँ अनुमति दो परदेश आज मैं जाऊँ।
माँ बोली बेटे! तुझको क्या समझाऊँ।
बस जन्म नया क्या तू ने अभी न पाया ॥जिनसेना-३४४॥
माँ! मोह करो मत रोको पथ अथ मेरा।
"जंगल में मंगल होगा" है न अंधेरा।
हठ लठ के जैसा मैंने आज बनाया ॥जिनसेना-३४५॥
हट गई हठीले सुत के पथ से माता।
चल चंपकमाला के महलों मे आता।
चलने का अपना भाव उसे दरसाया ॥जिनसेना-३४६॥
वह बोली मुझको सुनो धर्म के नाते।

छाया को काया से क्यों अलग हटाते।
सह सीता को ले गये न क्या रघुराया ॥जिनसेना-३४७॥
मैं साथ चलूंगी सेवा किया करूँगी।
वन विपदाओं से किंचित नहीं डरूँगी।
दी स्वीकृति पति ने मत सम्मत जब पाया ॥जिनसेना-३४८॥
आ मदनमालती से कहता अब ऐसे।
मन तेरे से कुछ आजन मांगे कैसे।
क्या दोगी ? दे दो अपना वचन सुहाया ॥जिनसेना-३४९॥
है ऐसा क्या जो दूँ न आपको बोलो।
क्यों उदास से बटखोरों से तोलो।
मैं ना न करूँगी है हाजिर सब माया ॥जिनसेना-३५०॥
तुझको न साथ में आना, कहना मानो।
हित इसमें ही है हम सबका पहचानो।
मुंह रही ताकती कुछ न समझ में आया ॥जिनसेना-३५१॥
दासी को सेवा योग्य क्यों नहीं माना।
या मेरी आत्मा को न गया पहचाना।
क्या मैंने कदम कोई अयोग्य उठाया ॥जिनसेना-३५२॥
जिनसेव कुंवर के नेत्र हो गये गीले।
नारी के सम्मुख नर हो जाते ढीले।
फिर मधुर स्वरों से आश्वासन दिलवाया ॥जिनसेना-३५३॥
तुम दोनों मेरे साथ अगर आ जावें।
तो मां की सेवा कौन करे समझाओ।

सासू की सेवा तीर्थ बड़ा बतलाया ॥जिनसेना-३५४॥
घर रह कर मेरी कमी शर्त कर देना।
माता के मन में शक्ति स्फूर्ति भर देना।
मन साथ चलेगा यही रहेगी काया ॥जिनसेना-३५५॥
यों समझाकर करके अनुमति उससे पाई।
जो भोली होती जाती उसे ठगाई।
अब चंपकमाला का नरवेश बनाया ॥जिनसेना-३५६॥
सज गये वीर दोनों ही अश्वारोही।
है वहीं तीसरा निकले दो के दोही।
बन बुला रहा है मन इन्हें बतलाया ॥जिनसेना-३५७॥

वन से ससुराल :—

वन पहुँचा पाया इन्हें न कोई बाधा।
रुकने में इनने समय न खोया ज्यादा।
चंपापुर आये नृपको शीश नमाया ॥जिनसेना-३५८॥
क्या बात बनी जो आप अचानक आये।
क्यों समाचार पहले न हमें भिजवाये।
क्यों नहीं साथ में सेवक कोई आया ॥जिनसेना-३५९॥
है कौन महाशय। जो ये खड़े हुये हैं।
क्यों नहीं बोलते क्या भ्रम बीच पड़े हैं।
दो परिचय, परिचय जाये नया बनाया ॥जिनसेना-३६०॥
वह बोले—आओ पूज्य पिता से बोलो।
नरवेश उतारो, चंपकमाला होलो।

सुन भारी इचरज पाया ॥जिनसेना-३॥१॥
क्या चंपकमाला पुरुष वेश में आई।
मन नहीं मानता अब भी इसे लुगाई।
जब यह बोली विश्वास तभी से आया॥जिनसेना-३॥२॥
मैं कर्म परीक्षा करने निकला घर से।
घर इसे रखो मनवा लो मीठे स्वर से।
करना न सामना पड़े कष्ट का गाया ॥जिनसेना-३॥३॥
सुन कहा—पिता ने सत्य कुंवरजी कहते।
जाने दे इनको जो न यहाँ पर रहते।
रूकना है तेरा उचित पिता ने गाया ॥जिनसेना-३॥४॥
जो रूकना होता तो घर पर रूक जाती।
जो झुकती टहनी पर तो तरूपर झुकजाती।
रुक झुक कर के ही आना साथ मनाया ॥जिनसेना-३॥५॥
मैं किसी मूल्य पर पति का साथ न छोड़ूं।
मैं पतिव्रता के नियमों को क्यों तोड़ूं।
सुख-दुःख में स्त्री ने हाथ हमेशा बँटाया ॥जिनसेना-३॥६॥

आगे चल पड़े :—

दो चार दिनों तक दोनों यहां रूके हैं।
रूकना न मानते नरपति हार चुके हैं।
अज्ञात दिशा में अपना कदम बढ़ाया ॥जिनसेना-३॥७॥
रूक गये कहीं पर गांव देखकर छोटा।
रोटी पानी का नहीं पथिक को टोटा।

विश्राम रातभर लेकर थाक मिटाया ॥जिनसेना-३६८॥
वन से वन, पुर रह जाते पीछे।
ये चलते जाते कर्म रज्जु से खींचे।
कुछ दूर चले वन एक भयंकर आया ॥जिनसेना-३६९॥
कुछ आदमियों ने रोका इनको जाते।
लो मार्ग आपको हम सीधा बतलाते।
इस पथ में आगे भय भारी बतलाया ॥जिनसेना-३७०॥
है एक सिंह सिंहनी का जोड़ा भारी।
नरभक्षी है वह है वह बड़ा शिकारी।
जो गया पथिक वह घर न पहुँचने पाया ॥जिनसेना-३७१॥
इस पथ से मत जाओ आप मानों कहना।
है अगर आपको जग में जीवित रहना।
जिनसेन कुंवर ने साथी से पुछवाया ॥जिनसेना-३७२॥
नरवेशी साथी बोला क्या डरना है।
जब हमें परीक्षण कर्मों का करना है।
ले कफन साथ में वीर निकलता आया ॥जिनसेना-३७३॥
जिनसेन प्रसन्न बना है उत्तर पाके।
गधर्व हरपता गीत मधुर स्वर पाके।
शुभ चिन्तक लोगों को उनने समझाया ॥जिनसेना-३७४॥
बनपथ यह कब तक बन्द रहेगा भाई।
सिंह-सिंहनी की हम करदें आज सफाई।
है धन्यवाद जो पहले हमें चेताया ॥जिनसेना-३७५॥

एक के बाद एक :—

चल पड़े वीर गुणधीर बड़े साहस से।
इनको न मोह है निज जीवन से रस से।
उपकारी करते हैं उपकार पराया ॥जिनसेना०[illegible]
वन सघन हो गया सिंह गर्जना आई।
सम्हाला इनने धनुषत्राण सुखदाई।
फिर चंपकमाला ने पति से फरमाया ॥जिनसेना०[illegible]
नर नारी का वध नहीं किया करते हैं।
नर नारी पर नित दया करते हैं।
सिंहनी को मैं मारूँगी निश्चय ठाया ॥जिनसेना०[illegible]
शार्दूल सामने चला आ रहा वन में।
जिनसेन धनुष ले तीर छोड़ता धुन में।
चल गया तीर सिंह को झट मार गिराया ॥जिनसेना०[illegible]
मर चुका शेर ये लगे देखने आके।
आ गई सिंहनी इनको लक्ष्य बना (कर) के।
ये सावधान बन गये धनुष्य चढ़ाया ॥जिनसेना०[illegible]
तलवार खींचकर खड़ी हो गई माला।
सिंहनी को इसने परभव पहुंचा डाला
वन पार किया है शहर एक अब आया ॥जिनसेना०[illegible]

वीरों का आतिथ्य :—

नर पूछ रहे सिंह युगल नहीं क्या पाया?
क्यों नहीं आपको उस जोड़ी ने खाया?

ये बोले हमने उसका किया सफाया ।।जिनसेना-३८२।।
सुन विस्मित होकर लोग वहाँ चल आये ।
मृत सिंह देखकर पथिकों के गुन गाये ।
संवाद नृपति के महलों तक पहुँचाया ।।जिनसेना-३८३।।
राजा ने इनका स्वागत बहुत किया है ।
आतिथ्य प्रेम से कुछ दिन रोक लिया है ।
मन मैलू मानव दिखलाता है माया ।।जिनसेना-३८४।।
ये बोले अब हम आगे को जायेंगे ।
नृप बोला बोलो कब आयेंगे ।
रुक रहो यहीं क्यों जाये कष्ट उठाया ।।जिनसेना-३८५।।
जाना है "सिंहल दीप" लौट आयेंगे ।
आयेंगे तब शुभ दर्शन पायेंगे ।
दो अनुमति अब तो बहुत प्रेम है पाया ।।जिनसेना-३८६।।
मन बिना नृपति ने अपनी अनुमति दी है ।
अलविदा यहाँ से इन दोनों ने ली है ।
ले इन्हें जहाज चला द्वीपांतर आया ।।जिनसेना-३८७।।

दुःखी पर दया :—

हैं सिंहल द्वीप द्वीपों में सुंदर भारी ।
आते रहते है यहाँ बहुत व्यापारी ।
है छटा मनोहर सर तट तरु की छाया ।।जिनसेना-३८८।।
ये दोनों साथी चल, सर तट आये हैं ।
विश्राम यहाँ पर लेने ललचाये हैं ।

जो मिला कंद फल लिया-पकाया खाया ||जिनसेना-३६ [illegible]
सुःख दुःख की बातें करते हर्षित होते।
लेटे हैं ऐसे हीं न नींद में सोते।
रोने का करूणा स्वर कानों में आया ||जिनसेना-३६ [illegible]
नर दुःख के मारा रोता कोई वन में।
उपजी अनुकंपा इन दोनों के मन में।
जा देखूँ, दूर करूं, दुःख जो भी आया ||जिनसेना-३६ [illegible]
तूँ यहीं बैठ, मैं जबतक लौट न आवूँ।
तेरी न जरूरत, स्वयं अकेला जावूँ।
कर काम वहाँ का, अभी अभी मैं आया | जिनसेना ३६ [illegible]
जा देखा, नरबलि मंदिर में दी जाती।
आवाज उसी के रोने की है आती।
बलि देने वालो को इसने धमकाया ||जिनसेना-३६ [illegible]
बलि देती हो तो क्यों न अहं को देते।
बलि देने को क्यों नर पशु को चुन लेते।
अज्ञान बड़ा यह किस नर ने फैलाया ||जिनसेना-३६ [illegible]
ओ मूर्ख! देवता बलि से खुश होते हैं
नर जीते मरते स्वार्थो को रोते हैं।
जा अपने घर तू, किसने तुझे बुलाया ||जिनसेना-३६ [illegible]
मैं दिव्य प्रेरणा से आया समझाने।
तुम छोड़ो बलि को, आया इसे छुड़ाने।
सुन वन लोगों ने इस पर शस्त्र उठाया ||जिनसेना-३६ [illegible]

जिनसेन लपक कर उन पर टूट पड़ा है।
कुछ भागे कुछ का सिर भी फूट पड़ा है।
बलि वाले नर को सकुशल गया बचाया ॥जिनसेना-३६७॥

माला नहीं मिली :—

ले लिया साथ में जिसको मुक्त कराया।
चल उसी सरोवर के तट पर फिर आया।
माला न वहाँ पर मिली खोजने ॥जिनसेना-३६८॥
ले गया माला को कौन ठगा पटा के।
क्या सुख पाया है साथ विपिन में आके।
मत चलो साथ में, था कितना समझाया ॥जिनसेना-३६९॥
जिनसेन कुंवर ने ढूँढ़ा पत्ता-पत्ता।
लेकिन माला का मिला न अत्ता-पत्ता।
मालापहरण से दुःख अकारण छाया ॥जिनसेना-४००॥
बलि मुक्त पुरुष ने कहा—निराश न होवे।
साहस, पाने की आशा कभी न खोवें।
रघुपति ने खोई सीता को भी पाया ॥जिनसेना-४०१॥
घर चलो आप हम ढूढ़ेंगे मिल करके।
मिल जायेगी वह तब हँसना खिल करके।
जिनसेन उसी के साथ शहर मे आया ॥जिनसेना-४०२॥
यह नगर सेठ का पुत्र बड़ा था प्यारा।
घर आने पर माता ने इसे निहारा।
तू कहाँ गया था, कल से पता न पाया ॥जिनसेना ४०३॥

आ गये प्राण कंठों में घरवालों के।
कंठों में आते प्राण ग्वाल बालों के।
खो जायें गायें तो क्या झुंडचराया ॥जिनसेना-४०४॥
सुत बोला—माता जो न बन्धुवर आते।
तो मुझे नहीं तुम इस दुनिया में पाते।
देवी के सम्मुख जाता बलि चढ़ाया ॥जिनसेना ४०५॥
इतने ही उनको डांटा-डपटा-मारा।
करवाया उनसे, बन्धन से छुटकारा।
घर आकर सबके दर्शन मैं करपाया ॥जिनसेना-४०६॥
आभार मानने लगे कुंवर का सारे।
धन्य भाग्य हमारे घर पर आज पधारे।
इक सुत को क्या? हम सबको गया बचाया ॥जिनसेना-४०७॥
माला के दुःख से दुःखी रात-दिन रहता।
जिनसेन किसी से मन की व्यथा न कहता।
कर रहा समय संकट का जो सिर आया ॥जिनसेना-४०८॥
जब पता नहीं तब कहाँ खोजने जाये।
कब तक यह अन्न जल पिये न अथवा खाये।
जागेगा कब तक जीवन रहित न काया ॥जिनसेना-४०९॥

माला को मौसी ले गई :—

बैठी है चंपकमाला वहाँ अकेली।
बोली न किसी से उठी न झांकी खेली।
मन पति के हित चिन्तन में गया लगाया ॥जिनसेना-४१०॥

क्यों नहीं लौटकर प्रिय चल आये।
दिल लगा धड़कने चिन्तन बुरा बनाये।
क्या हुआ? हुआ कुछ नहीं, धैर्य अपनाया ॥जिनसेना-४११॥
थी सिंहलद्वीप में रूपवती धननारी।
वन भ्रमण हेतु आई ले रथ असवारी।
माला को देखा, निज अनुमान बनाया ॥जिनसेना-४१२॥
यह पुरुष वेष में बैठी सुन्दर नारी।
आंखें है इसकी मानों तेज कटारी।
इन कलाइयों से भेद न गया छुपाया ॥जिनसेना-४१३॥
परदेशिन नारी बैठी यहाँ अकेली।
गुरूणी न साथ गुरु भगिनी अथवा चेली।
जाये न इसे क्यों फंदे बीच बसाया ॥जिनसेना-४१४॥
धन लाख कमाऊंगी मैं इसके द्वारा।
नर मर जायेगा पाकर मात्र इशारा।
यों सोच समझकर आई प्रेम दिखाया ॥जिनसेना-४१५॥
नर वेश त्याग कर बैठो रथ में आओ।
मैं तुम को लेने आई, मत सकुचाओ।
सुन चंपकमाला के मन विस्मय छाया ॥जिनसेना-४१६॥
मैं स्त्री हूँ ऐसा इसने कैसे जाना।
क्यों मुझे चाहती अपने घर ले जाना।
है कौन आप यों सीधा प्रश्न उठाया? ॥जिनसेना-॥ ४१७

सुन रूपवती हँस पड़ी, घुमाकर बोली।
चलती न साथ क्यों बन जाती हो भोली।
हो नहीं अकेली, तुम को क्यों भय छाया ॥जिनसेना-४१८॥
क्या मेरे स्वामी मिले आपको जाते।
अब लगी न देरी जाल नया फैलाते।
हाँ उसने ही तो भेजा मुझे सुहाया ॥जिनसेना-४१९॥
मैं उसकी मौसी तुझको लेने आई।
नर वेश बनाये बैठी तुम्हें बताई।
सर पाली पर बर तरु की शीतल छाया ॥जिनसेना-४२०॥
सुन चंपकमाला रथ में बैठी आके।
घर वेश्या लाई चिड़िया नई फंसाके।
खोला है कमरा इसको वहाँ बैठाया ॥जिनसेना-४२१॥

सब समझ गई :—

तुम नहाओ धोओ बदलो कपड़े तनके।
आते ही होंगे प्रियतम जीवनधन के।
माला ने कोई भेद न अबतक पाया ॥जिनसेना-४२२॥
नरवेश उतारा स्त्री के कपड़े पहने।
पहने न देह पर बड़े कीमती गहने।
घर वाली स्थिति पर से अनुमान लगाया ॥जिनसेना-४२३॥
अश्लील चित्र ये सुरापात्र हैं खाली।
है सामग्री सब मन भड़काने वाली।
घर को क्या ऐसे जाता कहीं सजाया ॥जिनसेना-४२४॥

यह नगर-वधू का आवास है सलोना।
फँस गई मैं यहाँ सावधान है होना।
नर कोई आता देखा सजा सजाया ॥जिनसेना-४२५॥
कमरे का फाटक बंद किया मालाने।
उस नर को भीतर दिया नहीं है आने।
खोला न द्वार, नरने करसे मचकाया ॥जिनसेना-४२६॥
नवकार मंत्र की जपने बैठी माला।
माला ने अपने तन मन को संभाला।
क्या करना होगा सब प्रोग्राम बनाया ॥जिनसेना-४२७॥

शक्ति का चमत्कार :—

वेश्या को सारा पता चला पलभर में।
घुसने न दिया है उस नर को भीतर में।
पथ युक्ति का शक्ति का गया तुरत अपनाया ॥जिनसेना-४२८॥
खुल पाये नहीं किवाड़ किसी हालत मे।
क्यों पड़े दरारें दीवारों में छत मे।
जनता ने कौतूहल का विषय बनाया ॥जिनसेना-४२९॥
है चमत्कारिणी देवी इसके घर में।
विश्वास बड़ा है उसका परमेश्वर मे।
खुल पाता द्वार नहीं, जाता तुड़वाया ॥जिनसेना-४३०॥
नृप आया, आये सुभट साहसी सारे।
वे खोल न पाये द्वार जोरकर हारे।
जिनसेन कुंवर ने समाचार सब पाया ॥जिनसेना-४३१॥

राजा से बात :—

ले नगर सेठ के सुत को अपने संग में।
जिनसेन सभा में पहुँचा बड़ी उमंग में।
आ बोला-राजन्! सच क्या, सुना सुनाया ॥जिनसेना-४३२॥
परदेशी से राजा ने हाल बताया।
जो वहाँ देखकर अथवा सुनकर आया।
भूपति ने इसमें नहीं वगार लगाया। जिनसेना-४३३॥
घर रूपवती के नई सुन्दरी आई।
पुर रक्षक सुत को उसने उसे बताई।
कर द्वार बंद बैठी कुंडा अटकाया ॥जिनसेना-४३४॥
पुर-रक्षक सुत ने शक्ति बड़ी अजमाई।
पर द्वार नहीं खुल पाये आखिर ताई।
मैंने भी जाकर आग्रह, प्रेम दिखाया ॥जिनसेना-४३५॥
दो ध्यान बात पर, द्वार खोलदो करसे।
क्या बार-बार कहलाती पुर-नर-वरसे।
आखिर में नीचे से भी गया खुदाया ॥जिनसेना-४३६॥
जब सुभट घुसा तो उसने उसको मारा।
फिर सुभट दूसरा घुसा जोश के मारा।
छह सुभट घुसे पर जीवित एक न आया ॥जिनसेना-४३७॥
चारा न रहा क्या दरवाजा खुलवाऊँ।
उस महाशक्ति के कैसे दर्शन पाऊँ।
इस पर से देवी जाता है बतलाया ॥जिनसेना-४३८॥

जिनसेन सोचता यही सती है माला।
वह शील सत्य की प्रतिमूर्ति है आला।
उसने ही अपना साहस सौर्य दिखलाया ॥जिनसेना-४३६॥
दे अनुमति तो मैं द्वार खुलाने जाऊँ।
उस देवी माता के दर्शन करवाऊँ।
जिनसेन कुंवर ने राजा से फरमाया ॥जिनसेना-४४०॥
कर सके न कुछ भी सुभट बड़े बलशाली।
तुम मन की हिम्मत दिखलाते हो खाली।
क्यों प्राण गंवाने का दुस्साहस ठाया ॥जिनसेना-४४१॥
क्यों मारा जाये अतिथि एक परदेशी।
हम विदेशियों के होते परम हितैषी।
जिनसेन कुंवर ने फिर से ऐसा गाया ॥जिनसेना-४४२॥
जो वेश्या लूटे शील किसी नारी का।
सहयोग करे अन्यायी व्यभिचारी का।
अपयश क्या इसमें नृप का नहीं बताया ॥जिनसेना-४४३॥
इस रूपवती ने किसी सती को फांसा।
ले आई परदेशिन को देकर झांसा।
कर द्वार बंद उसने निज शील बचाया ॥जिनसेना-४४४॥
वह करे क्या? कहो? जो न नरों को मारे।
क्या शील लुटा दे, अपनी हिम्मत हारे।
मति-मंथन से नवनीत निकल यह आया ॥जिनसेना-४४५॥

जो सती द्वार खोले तो पता लगाऊँ।
इस नगर-वधू को अपराधी ठहराऊँ।
जिनसेन कुंवर ने फिर से जोर लगाया ॥जिनसेना-४४६॥
दो अनुमति, दो कुछ सैनिक साहसवाले।
हम जाकर अपनी युक्ति-शक्ति अजमालें।
जो द्वार हमारे से जाये खुलवाया ॥जिनसेना-४४७॥
नृप बोला—जाओ दरवाजा खुलवाओ।
उस महाशक्ति के शुभ दर्शन करवाओ।
जिनसेन सुभट ले वेश्या के घर आया ॥जिनसेना-४४८॥

द्वार खुल गये:—

"दरवाजा खोलो" यों आवाज लगाई।
"सिंह-सिंहनी" मारे बात स्मरो सुखदाई।
माला ने स्वर पहचान लिया मन भाया ॥जिनसेना-४४६॥
क्या हुआ बाद में ? सर पाली पर आये।
फिर अलग हो गये, दोनों मन पछताये।
मिलने को फिर दोनों का मन ललचाया ॥जिनसेना-४५०॥
सुन खोल दिया है दरवाजा माला ने।
पति चरणों में गिर आंसू लगी बहाने।
जिनसेन कुंवर ने ऊँचा उसे उठाया ॥जिनसेना-४५१॥
झट नगर-वधू आई माला पर बिगड़ी।
तू भली दिखती निकली औरत बिगड़ी।
मेरा नाम नहीं जो तुझे नहीं पिटवाया ॥जिनसेना-४५२॥

अपमान हुआ पुर-रक्षक-सुत का भारी।
छह वीरों की ली जान बड़ी हत्यारी।
तूने आजतक मेरे सा घर पाया ॥जिनसेना-४५३॥
क्यों बिगड़ रही हो तुम हो पति की दोपी।
मैं दोपी हूँ या तुम खुद ही हो दोपी।
क्यों झूठ बोलकर मुझको गया फंसाया ॥जिनसेना-४५४॥
अब पता नहीं कितने ही मारे जायेंगे।
जो सुभट सामने लड़ने को आयेंगे।
आ खड़ा हुआ मेरा रक्षक मनभाया ॥जिनसेना-४५५॥
सुन रूपवती ने सुभटों को ललकारा।
इस पापन ने ही छह सुभटों को मारा।
तुम इसे पकड़ लो कह करके उकसाया ॥जिनसेना-४५६॥
सुन सुभट अंगरक्षक माला पर झपटे।
जिनसेन कुंवर ने सबको डाटे डपटे।
तलवार दिखाकर सबको दूर हटाया ॥जिनसेना-४५७॥
जब पहुँची नृप के पास सूचना सारी।
राजा ने भेजी राजकीय असवारी।
उन दोनों को सम्मान सहित बुलवाया ॥जिनसेना ४५८॥
बिठलाया अपने पास वृत सब पूछा।
बांचा है उसने पोथा खोल समूचा।
सुन सभी सदस्यों का मन चक्कर खाया ॥जिनसेना-४५९॥

मैं धन्य हो गया पावन दर्शन पाके।
कर दिया चमत्कृत कुल इति वृत सुनाके।
माला ने कैसे अपना शील बचाया ॥जिनसेना-४६०॥

जीवन बदल गया :—

वेश्या को राजसभा में बुलवाया है।
सब भेद उसी के मुख से खुलवाया है।
हो खेदित नृप ने मृत्युदंड फरमाया ॥जिनसेना-४६१॥
अपराध जघन्य, दिया नारी को धोखा।
हो गया पाप का अंतिम लेखा-जोखा।
जिनसेन और माला ने उसे छुड़ाया ॥जिनसेना-४६२॥
हम चाह रहे हैं वेश्या भूल सुधारे।
फिर जाल किसी पर झूठा नहीं पसारे।
जाता न हमारे से स्त्री को मरवाया ॥जिनसेना-४६३॥
वेश्या ने अपना गंदा धंधा छोड़ा।
शिव शक्ति समझकर जोड़े को कर जोड़ा।
व्रत ब्रह्मचर्य का प्राणों से अपनाया ॥जिनसेना-४६४॥
हो रही प्रशंसा रूपवती की भारी।
माला ने इसकी जीवन दिशा सुधारी।
आदेश हुआ वापिस जो गया सुनाया ॥जिनसेना-४६५॥

लाख टका वेतन :—

चाहे तो मेरे पास आप रह जावो।
अपराध हमारी जनता का सह जावो।

जिनसेन कुंवर से राजा से फरमामा ॥जिनसेना-४६६॥
यह वात आपने कह दी मेरे मन की।
मैं लाख स्वर्ण मुद्रायें लूं वेतन की।
रहने की इच्छा से ही घर से आया ॥जिनसेना-४६७॥
क्या काम करोगे ? जो न अन्य कर पाये।
नर जिगरी कोई पास मुझे रख पाये।
सुन नरवर ने निज मुख से हाँ फरमाया। जिनसेना-४६८॥
दे दिया महल रहने को सुविधा वाला।
जिनसेन साथ में रहती चंपकमाला।
घर घर में इनका छाया सुयश सवाया। जिनसेना-४६९॥
चंपकमाला का शील वखाना जाता।
जिनसेन कुंवर का बल पहचाना जाता।
है धर्मनिष्ठ, दोनों की निर्मल काया ॥जिनसेना-४७०॥
नित राज सभा मे जाना घर आ जाना।
स्वाध्याय ध्यान में अपना समय विताना।
जो समय गया गवाया क्या वह वापिस आया॥जिनसेना-४७१॥
याचक को खाली कभी नहीं लौटाते।
जो अतिथि आ गया खुश खुश उसे खिलाते।
मुख से न वोलते कटुक वचन दुःख दाया ॥जिनसेना-४७२॥
क्यों शांति-भग आपस मे होने पाये।
जब चिन्तन धारा एक दिशा में जाये।
एकान्तवाद में तूॅ-तूॅ-मैं-मैं आया ॥जिनसेना-४७३॥

खुश चंपकमाला का मन है निज पति से।
शचि खुश रहती है यथा नित्य सुरपति से।
खुशियों ने स्थायी स्थान यहीं पर पाया ॥जिनसेना-४७४॥

कुछ काम दीजिये :—

हो गया महीना सेवा करते पूरा।
कुछ दिया नहीं तो हो क्यों काम अधूरा।
राजा ने मासिक वेतन अब दिलवाया ॥जिनसेना-४७५॥
लो लाख स्वर्ण मुद्रायें वेतन वाली।
जिनसेन कुंवर ने नहीं जेब में डाली।
मैं कैसे लूँ? जब बैठे-बैठे खाया ॥जिनसेना-४७६॥
क्या काम आपने मेरे से करवाया।
आ राजसभा में वापिस घर पर आया।
कुछ काम सौंपिये जो अति कठिन कहाया ॥जिनसेना-४७७॥
यदि ऐसा ही है कुंवर! आप का कहना।
निशि समय अंगरक्षक बन करके रहना।
लो काम आज से जाता यह भोळाया ॥जिनसेना-४७८॥
जिनसेन कुंवर ने कार्य सहर्ष स्वीकारा।
महलों में पहरा देना काम करारा।
क्या बिना योग्यता काम सुयश-पद-पाया ॥जिनसेना-४७९॥
निशि होते ही आ खड़ा हुआ पहरे पर।
चिन्ता का कोई चिन्ह नहीं चेहरे पर।
अथ अर्ध निशा का समय देख लो आया ॥जिनसेना-४८०॥

निज सय्या पर सोये है राजा रानी।
इतने में आया असुर एक अज्ञानी।
तूफ़ान भयंकर के झोंके सा आया ।।जिनसेना-४८१।।
बन शयनकक्ष में घुसा नृपति को पटका।
रानी से बोला—दिया हाथ का झटका।
तू बनी न अब तक मेरी, मुझे ठगाया ।।जिनसेना-४८२।।
मैं तुझे बनाऊंगा अब अपनी कल से।
मानी न अभी तक वो मानेगी कल से।
क्या मेरे बल को नृप न जानने पाया ।।जिनसेना-४८३।।
जो तू न करेगी आत्म समर्पण मन से।
धो बैठेगी कर तू अपने जीवन से।
टाइम से पहले गया तुझे चेताया ।।जिनसेना-४८४।।
सुन बात असुर को बोली सिंहल रानी।
क्या बोल रहा तू बेवकूफ अज्ञानी।
क्या भारतीयता का कुछ ज्ञान न पाया ।।जिनसेना-४८५।।
क्या पुनः समर्पण कर सकती सन्नारी।
क्या संस्कृति आज्ञा देती, हमे हमारी।
अभिमान शक्ति का तुझको झूठा आया ।।जिनसेना-४८६।।
रावण भी बहुत घमंड किया करता था।
आसुरी शक्ति पर अमर जिया करता था।
अपहरण सिया का कर क्या लाभ कमाया ।।जिनसेना-४८७।।
क्या ज्ञान सिखाती होकर अबला रानी।

कल रखना अपनी रक्षा की तैयारी।
यों कहकर राक्षस गया, जहाँ से आया ॥जिनसेना-४८८॥

राक्षस के साथ :—

प्रहरी ने प्रातः पूछ लिया नरवर से।
मैं बात पूछता अंतःपुर की उर से।
महलों में राक्षस जैसा कोई आया ॥जिनसेना-४८९॥
बोला न रात आदेश नहीं होने से।
सुनता था सब कुछ खिड़की के कोने से।
था असुर कौन वह क्या थी उसकी माया ॥जिनसेना-४९०॥
मम तनुरक्षक इसने[2] कितने[1] ही मारे।
बदनामी मेरी फैल रही है सारे।
हो कहने लायक तो जाये बतलाया ॥जिनसेना-४९१॥
जिनसेन हो गया सुन गंभीर सयाना।
कुछ बिना कहे मुख से जाता पहचाना।
"कल देखूँगा" कल जिसे सिर्फ सुन पाया ॥जिनसेना-४९२॥
रवि अस्त हो गया रात समय पर आई।
दिन और रात की मिटती नहीं लड़ाई।
द्वन्द्वात्मक मानी जाती जग की माया ॥जिनसेना-४९३॥
आ खड़ा हुआ जिनसेन समय से आगे।
क्या अच्छे प्रहरी नहीं रात भर जागे।
जब समय हुआ वह असुर धड़ाधड़ आया ॥जिनसेना-४९४॥
राजा को पटक दिया है शय्या पर से।

अब लगा उठाने रानी को निज कर से।
उठ, बैठ, मुझे अपनाले, मैं हूँ आया ॥जिनसेना-४९५॥
सुन प्रहरी ने इस राक्षस को ललकारा।
अब मारा जायेगा तू मेरे द्वारा।
कर अट्टाहस वह इससे लड़ने धाया ॥जिनसेना-४९६॥
ओ मच्छर मेरे हाथों से क्यों मरता?
तुझ जैसे मच्छर से न कभी मैं डरता।
तुझ जैसे मच्छर रोज मारता आया ॥जिनसेना-४९७॥
हाँ कभी मौत मच्छर बन कर के आती।
मर जाते चींटो से मतवाले हाथी।
तूँ जान जंचे सो तुझे मारन आया ॥जिनसेना-४९८॥
नर और असुर में युद्ध ठना है भारी।
पशु शक्ति आज तक आत्मशक्ति से हारी।
जिनसेन गिरा कभी राक्षस को गिराया ॥जिनसेना-४९९॥
जिनसेन रहा पैंतरे बदलता निशि भर।
गिर गया निशाचर गिरकर क्षण भर उठ कर।
उक्त समय सूर्य उगने को होने आया ॥जिनसेना-॥ ५००
उठ असुर-वक्ष में खड्ग कुंवर ने भोंका।
चीत्कार श्रवण-सुन चोंक महल का चौंका।
बन गया (है) धराशायी है, निश्चल काया ॥जिनसेना-५०१॥

प्रहरी का सम्मान :—

उन खुली हुई आँखों से भय लगता है।

मुख यमराजा के मुख को भी ठगता है।
बढ़ गया भार जायेगा नहीं उठाया ॥जिनसेना-५०२॥
ये समाचार फैले हैं पुर में घर घर।
क्या बात बात सम उड़ी नहीं है फर फर ?।
ला चौराहे पर इस शव को लटकाया ॥जिनसेना-५०३॥
जन आये देखे, इसके मुख पर थूके।
क्यों घृणा और निंदा करने से चूके।
क्यों असुर योनि में जीव जनमने पाया ॥जिनसेना-५०४॥
जिनसेन कुंवर का यश गाते नर नारी
बस सविनिक सम्मान किया है भारी।
बन गया हृदय का हार प्यार अति पाया ॥जिनसेना-५०५॥

दो पुत्र हो गये :—

जिनसेन कुंवर से नरपति ने यों पूछा।
दो अपने कुल का परिचय पत्र समूचा।
अतिरिक्त नाम के कुछ भी क्यों न बताया ॥जिनसेना-५०६॥
मैं सेवक, स्वामी आप, यही परिचय है।
परिचय देने का आया नहीं समय है।
आयेगा अवसर, जायेगा बतलाया ॥जिनसेना-५०७॥
राजा ने आग्रह अधिक नहीं दिखलाया।
अति आग्रह ही तो दुराग्रह कहलाया।
मिथ्यात्व इसी का नाम शास्त्र मे गाया ॥जिनसेना-५०८॥
पंचाब्दी बीत गई है सुख से रहते।

समभाव सहित सद्धर्म मर्ण पर वहते।
सुत-युगल सुमन चंपक माला ने पाया ॥जिनसेना-५०९॥
इक दानसेन, इक शील सिंह सुखकारी।
नामों को जोड़[2] दिया है गुण[1] से भारी।
नित दान दिया करते हम ऋमन चुकाया ॥जिनसेना५१०॥
कर द्वार वंद की शील सुरक्षा तैंने।
थी शील सिंह शुभ नाम रखा है मैंने।
घटना से जोड़ा गया महत्व वताया ॥जिनसेना-५११।
निज नाम और गुण से सुख पाता नामी।
ये पुत्र वनेगें जैनधर्म अनुगामी।
कुलदीपों ने ही कुल को सदा दिपाया ॥जिनसेना ५१२॥

वात एक रात की :—

आकाश वादलों से कुछ घिरा घिरा था।
घन वसन चन्द्र पर कुछ कुछ गिरा गिरा था।
फिर भी न धुधलका ज्योत्सना का छिप पाया ॥जिनसेना-५१३॥
बीती है आधी निशा नृपति जग जाते।
स्वर करूण-रूदन का कानों से सुन पाते।
तनु रक्षक को अव अपने पास बुलाया ॥जिनसेना-५१४॥
लो कान लगार सुनो रो रहा कोई।
दुर्घटना या अन्याय हो रहा कोई।
जा देखो दुखिये का दुःख जाये मिटाया ॥जिनसेना-५१५॥
आदेश नृपति का पा जिनसेन चला है।

है खड्ग हाथ में जो निज साथ पला है।
स्वर पीछे-पीछे अपना कदम बढ़ाया ॥जिनसेना ५१६॥
पुर बाहर पीपल तरू के नीचे नारी।
रो रही करूण स्वर है दुःखियारी भारी।
रामसान भूमि भयकारी स्थान बताया ॥जिनसेना-५१७॥
जल रही कुंड में बृहद-भानु की ज्वाला।
निज मति से कुछ भी अर्थ न गया निकाला।
धर साहस स्त्री से इसने प्रश्न उठाया ॥जिनसेना-५१८॥
भद्रे ! क्यों रोती ? क्या है कष्ट बताओ।
मैं बनूं सहाक जरा नहीं सकुचाओ।
कर रूदन-बंद उस स्त्री ने साफ सुनाया ॥जिनसेना-५१६॥
मैं अधिष्ठात्रिका पुर-देवी कहलाती।
कुछ जिम्मेवारी इसीलिये आ जाती।
"कल राजा की है मृत्यु" यही दुःख आया ॥जिनसेना-५२ ॥
इस असामयिक मृत्यु से कष्ट हुआ है।
तू लगा पूछने, मुख से स्पष्ट हुआ है।
टलने का कोई रस्ता दो बतलाया ॥जिनसेना-५२ ॥
है रास्ता लेकिन बहुत कठिन कहलाता।
भूपति के बदले कौन प्राण दे पाता।
नर राजभक्त ऐसा न किसी ने जाया ॥जिनसेना-५२२॥
इस अग्निकुंड में होमें जो अपने को।
वह टाल सकेगा राजा के खपने को।

जिनसेन कुंवर ने सुनकर के फरमाया ॥जिनसेना-५२३॥
ैयार खड़ा बलिदान स्वयं का करने।
दूंगा न नृपति को आसमयिक अब मरने।
नीघरवालों क अमति ले वापिस आया ॥जिसेना-न४५२॥
सुन देवी बोली—शीघ्र लौट कर आना।
आसान नहीं है परहित में मर जाना।
होगा न काम जो सूर्य उदय हो आया ॥जिनसेना-५२५॥
घर आया असमय पूछ रही घरवाली।
सौंपी है किसको राजा की रखवाली।
क्या काम छोड़कर आना उचित बताया ।जिनसेना-५२६
पति बोला मैंने काम नहीं है छोड़ा।
सब काम छोड़ ड्यूटी पर पहले दौड़ा।
वृत्तान्त बना वह माला को बतलाया ॥जिनसेना-५२७॥
आया हूं अनुमति पाने को मैं तेरी।
हो पाये जाने में जरा भी देरी।
सुन माला ने उल्लास सहित फरमाया ॥जिनसेना-५२८॥
हाँ इससे बढ़कर उत्तम कार्य नहीं है।
निज पति का साहस क्यों स्वीकार्य नहीं है।
बलिदान राष्ट्र-हित में हितकारी गाया ॥जिनसेना-५२९॥
फूला है सोना माला की सहमति से।
तत्काल चल दिया घर से फिर द्रुतगति से।
पुत्रों ने मां ने मानस एक बनाया ॥जिनसेना-५३०॥

जिनसेन बिना जग में जीयेगें कैसे।
क्या उत्तम अवसर मिलने फिर से ऐसे।
अनुसरण हमें भी करना है ठहराया ।।जिनसेना-५३१।।
दो पुत्र और माँ निकले पीछे-पीछे।
अदृश्य शक्ति ले जाये इनको खींचे।
आ गये श्मसानों में न कहीं भय खाया ।।जिनसेना-५३२।।
राजा ने तनुरक्षक को भेज दिया था।
पीछे से पीछा उसका तुरत किया था।
आ खड़ा आड़ में देख रहा क्या भाया ? ।।जि० सेना-५३३।।

जले और जी गये :—

जिनसेना यथा समय आ गया चल करके।
देवी को कैसे ठगा जाय छल करके।
जो दिया वचन वह जाये क्यों न निभाया ।।जिनसेना-५३४।।
आ अग्नि कुंड में कूद पड़ा है झटसे।
चट मुक्त हो गया चिन्तन के झंझट से।
क्षण हुआ दूसरा नजर नहीं वह आया ।।जिनसेना-५३५।।
सुत दान-शील भी कूदे, कूदी माला।
भभकी है दूनी बृहद्-भानु की ज्वाला।
अब लगा कूदने राजा भी अकुलाया ।।जिनसेना-५३६।।
देवी ने नृप को रोक लिया है कर से।
यह क्या करते हो बोली संयत स्वर से।
नृप प्राण बचाने को बलिदान चढ़ाया ।।जिनसेना-५३७।।

जिनसेन विना मुझ से न जिया जायेगा।
बलिदान आज का याद सदा आयेगा।
मत रोको, मेरे नहीं काम की काया।।जिनसेना-५३८।।
इन सब को जीवित कर दो तो मैं जीऊं।
जो ये न जिये तो मैं क्यों खाऊँ-पीऊं।
देवी ने अपनी शीघ्र समेटी माया।।जिनसेना-५३९।।

प्रशंसा और प्राप्ति :—

जिनसेन खड़ा है खड़ी सामने माला।
सुत दान-शील भी खड़े हाथ ले माला।
वह अग्निकुंड अब नजर नहीं है आया।।जिनसेना-५४०।।
मुस्करा रहे थे खड़े खड़े यह सारे।
लग रहे परस्पर पाचो प्यारे प्यारे।
हो रहा रहस्योद्घाटन जो थी माया।।जिनसेना-५४१।।
की इन्द्रराज ने प्रशंसा[2] स्वयं[1] भारी।
जिनसेन कुंवर की दानवीरता प्यारी।
दृढ़धर्मी श्रमणोपासक फिर बतलाया।।जिनसेना-।५४२
मैं यहाँ परीक्षा लेने को थी आई।
स्त्री और अग्नि की माया सृष्टि रचाई।
तुम सब को वैसा पाया जैसा गाया।।जिनसेना-५४३।।
जिनसेन कुंवर को दिया कामघट प्यारा।
मनवाछित पाया जाता जिसके द्वारा।
जब स्मरण करोगे आऊँगी, समझाया।।जिनसेना-५४४।।

हो गई तिरोहित देवी, ये घर आये।
संस्मरण सभी ने अपने मधुर सुनाये।
नृप बोला—करते हो हित नित्य पराया ॥जिनसेना-५४५॥

मौसा और मौसी :—

अब परिचय पूरा दे दो अपने कुल का।
अब तक न सिका क्या बोलो पतला फुलका।
क्यों बार बार आग्रह जाता करवाया ॥जिनसेना-५४६॥

लो परिचय अपना पूरा आज सुनाऊँ।
करवाना मुंडन तव क्यों शीश धुनाऊँ।
जयमंगल जिनसेना का मैं हूँ जाया ॥जिनसेना-५४७॥

सुन उछल पड़ा है नृप खुशियों के मारे।
आ महलों में रानी को खड़ा पुकारे।
जिनसेन कुंवर है तव भगिनी का जाया ॥जिनसेना-५४८॥

सुन कर के रानी दौड़ी-दौड़ी आई।
जिनसेन कुंवर को ऊंचा लिया उठाई।
भगिनी के सुत को छाती से चिपकाया ॥जिनसेना ५४९॥

हैं सकुशल प्यारे बहन और जीजाजी।
तू खबर सुना दे ताजी राजी-राजी।
क्यों बता आज तक परिचय गया छुपाया ॥जिनसेना-५५०॥

मुझ को न पता था तुम हो मेरी मौसी।
हूँ इसलिये मैं नहीं जरा भी दोषी।
सौभाग्य जगा जो परिचय अब भी पाया ॥जिनसेना-५५१॥

अब पू र्णतरुही से निज कथा सुनाई।
जो निज जीवन में अब तक घरती आई।
अब चंपकमाला से भी चरण-छुवाया। जिनसेना-५५२॥
ये नहीं दूसरे है सारे घरवाले।
घरवाले भी क्यों परिचय नहीं निकालें।
क्या बिना निकाले तेल तिलों से आया॥जिनसेना-५५३॥
संबध मधुर तब और अधिक बन जाता।
हम सभी एक हैं पना अगर मन पाता।
बब उगता छिपता सूरज पता न पाया॥जिनसेना-५५४॥

मदनमालको भी मिली :—

वन भ्रमण हेतु जिनसेन एक दिन निकला।
लग गया देखने भाग पहाड़ी पिछला।
चल एक गुफा में आया, बिना बुलाया॥जिनसेना-५५५॥
जल रहा अग्नि का कुंड वहाँ पर भारी।
अरू बंधी वहाँ इक बैठी राजकुमारी।
सिर लाल वस्त्र से बंधा नजर है आया॥जिनसेना-५.६॥
कल्याणी! बोलो किसने बाँध रखा है?।
क्या रोना ही किस्मत में सिर्फ लिखा है?!
मैं सहायता करने को समझो आया॥जिनसेना-५५७॥
हैं दोजों परिचित किन्तु अपरिचित लगते।
परिचित को परिचित नहीं कभी भी ठगते।
कर आखें निचो निज वृतात सुनाया। जिनसेना-५५८॥

है नगर विजयपुर चन्द्रसेन की जाई।
जयमंगल नृप की पुत्र-वधू कहलाई।
जिनसेन कुंवर पतिदेवा भाग्य से पाया ॥जिनसेना-५५६॥
वह कहाँ कनकपुर कहाँ सिंहल का वन है।
कितने कांटों से भरा हुआ जीवन है।
पति परदेशों को चले गये सुखदाया ॥जिनसेना-५६०॥
घर छोड़ गये थे करने माँ की सेवा।
जो करता सेवा वह पाता है मेवा।
पीछे से पीहर वालों ने बुलवाया ॥जिनसेना-५६१॥
कुछ अंगरक्षकों के सह भेजा घर से।
मैं चली विजलपुर को अब सोनापुर[1] से।
रास्ते में मिले लुटेरे, मुझे उड़ाया ॥जिनसेना-५६२॥
थी गुप्त योजना रत्नवती माता की।
टल गई घड़ी जो आई थी साता की।
ले मार्ग समुद्री मुझको कहीं छुपाया ॥जिनसेना-५६३॥
मैं कूद पड़ी सागर में शील बचाने।
मिल गया मगर सागर से पार लगाने।
तट बैठी इतने में इक योगी आया ॥जिनसेना-५६४॥
फिर गाढ़ बन्धनों से मेरे को बांधा।
दुखता है उससे तन का सांधा-सांधा।
बली देगा मेरी अग्निकुंड सुलगाया ॥जिनसेना-५६५॥
वह गया हवन-सामग्री लाने बन में।

दुःख वन में नहीं समाया वहा रूदन में।
पल भर में योगी है आया का आया ॥जिनसेना-५६६॥
जिनसेन कुंवर ने तत्क्षण बंधन खोले।
फिर मधुर वचन से बोला हौले-हौले।
अय मदने ! मैं जिनसेन स्वयं कहलाया ॥जिनसेना-५६७॥
गिर पड़ी चरण में मदनमालती रोई।
रोये है मिलकर पति-पत्नि दोनों ही।
अहसान बड़ा योगी का गया मनाया ॥जिनसेना-५६८॥
जो योगी लाता नहीं पकड़ कर वन में।
मिल पाते क्या हम इसी तरह जीवन में।
क्या अजब-गजब है, इन कर्मों की माया ॥जिनसेना-५६९॥
इतने में योगी आया उसने देखा।
क्या उपकारों का लिया आपने ठेका।
क्यों राजकुमारी को बोलो, छुड़वाया ॥जिनसेना-५७०॥
मैं यज्ञ कुंड में इसकी बलि चढ़ाऊँ।
कुछ मंत्र तंत्र भी इसको साथ पढ़ाऊँ।
ले आज्ञा, भिड़जा, कहकर लट्ठ घुमाया ॥जिनसेना-५७१॥
जिनसेन कुंवर ने भगा दिया है पल में।
कमजोर बहुत पड़ता था दैहिक बल में।
मदना को ले जिनसेन लौट घर आया ॥जिनसेना-५७२॥

---

१. कनकपुर

सुख के दिन :—

आ मदन मालती मालाजी से मिलती।
मिलने से मन की कलियाँ-कलियाँ खिलती।
शुभ शील सौर्य माला का गया सराया ॥जिनसेना-५७३॥
तू साथ रही, पति सेवा तन मन से की।
जीवन में भरी उथल-पुथल भी देखी।
माला ने मदना को अति श्रेष्ठ बताया ॥जिनसेना-५७४॥
की तूने सासूजी की सेवा सुख से।
पति विरह सहा चूं किया नहीं निज मुख से।
गुण-गान परस्पर गया प्रेम-बढ़ाया ॥जिनसेना-५७५॥
यह मौसी जी का घर अपना ही घर है।
कट गये कष्ट के दिन आये बेहतर है।
दुःख भोगा, उसको जाये क्यों न भुलाया ॥जिनसेना-५७६॥
दु:ख देकर के सुख पावेगी न विमाता।
वह पाता साता जो साता पहुँचाता।
सिद्धान्त धर्म का सही उतरता आया ॥जिनसेना-५७७॥

विवाह और राज्य प्राप्ति :—

दिन पर दिन [1] लगे सुख से बीतने भाई।
माँ जिनसेना की याद इक दिन आई।
आ मौसाजी से अपना भाग जताया ॥जिनसेना-५७८॥
दो आज्ञा जाऊँ माँ के दर्शन पाऊँ।

१—कडण कम्माण न मोक्ख अत्थि।

सुत-विरह-भोग का भारी कष्ट मिटाऊँ।
घर घोड़े को हो गया समय समझाया ॥जिनसेना-५७९॥
घर जाने की बात क्यों बोलते मुखसे।
तुम रहो यही पर करो राज्य यह सुखसे।
यह सब कुछ तेरा है तुझको भोलाया ॥जिनसेना-५८०॥
घर एक बार जाऊँ कर दर्शन आऊँ।
फिर दर्शन मौसी-मौसाजी के पाऊँ।
दी अनुमति नृप ने, मनने बुरा मनाया ॥जिनसेना-५८१॥
नृप परामर्श करता है रानी को ले।
क्या पुत्री कमला बनी इसी को ही दें।
वर इससे उत्तम क्या जायेगा पाया? ॥जिनसेना-५८२॥
कर-पीडन कमला का कर दिया गया है।
धन वैभव सारा मन भर दिया गया है।
जिनसेन कुंवर ने सुख से फेरा खाया ॥जिनसेना-५८३॥
फिर "सिंहलद्वीप" को राज्य देदिया इसको।
जो इसे नहीं देता तो देता किसको।
था पुत्र नहीं रानी ने कोई जाया ॥जिनसेना-५८४॥

ऋद्धियाँ और सिद्धियाँ :—

जमाता सिंहल पति जिनसेन कहलाता।
जय बोली जाती जिधर किधर भी जाता।
यह कर्म-परीक्षा का परिणाम बताया ॥जिनसेना-५८५॥
ले तीन पत्नियाँ युगल पुत्र सुखकारी।

प्रस्थान किया है लेकर सेना भारी।
आ चंपापुर विश्राम लिया सुख पाया ।।जिनसेना-५८६।।
श्री माधव सिंह नृप सबका स्वागत करते।
क्यों पड़े किसी से चढ़ते अधिक उतरते।
संपूर्ण राज्य दे दिया स्वभार हटाया ।।जिनसेना-५८७।।
अब चले विजयपुर रुके प्रेम से आके।
नृप चन्द्रसेन खुश हैं इनको ठहरा के।
इनने भी अपना राज्य इसे सम्हलाया ।।जिनसेना-५८८।।
ले विदा यहाँ से चले कनकपुर आते।
जब चलते चलते थक जाते रुक जाते।
यात्रा में कोई विघ्न न आने पाया। जिनसेना-५८९।।
था साथ सुरक्षा दल सैनिकों लोगों का।
था बड़ा आत्मबल, बल शुभ संयोगों का।
क्या विना वृक्ष के मिलती शीतल छाया ।।जिनसेना-५९०।।
पुण्यवान जहाँ भी जाते सब सुख पाते।
पुण्यहीन जहाँ भी जाते धक्के खाते।
सुख फूल और फल पुण्य मूल कहलाया ।।जिनसेना-५९१।।
पुण्य किये विना क्या सुख पाया जाता है।
मुँह विना हिलाये क्या खाया जाता है।
सुख पाया उनने जिनने पुण्य कमाया ।।जिनसेना-५९२।।

कनकपुर की चर्चा :—

अब हाल सुनायेंगे, सुनो कनकपुर वाला।

हरन पहुँचने पाई मदना—बाला
रत्ना ने रास्ते से अपहरण कराया ॥जिनसेना-५६३॥
जयमंगल नृप ने सब कुछ जान लिया है।
जिनसेना का है दोष न मान लिया है।
उद्यान-भवन में जाकर उसे मनाया ॥जिनसेना-५६४॥
क्या क्षमा करोगी प्रिय! न अबभो पतिको।
मैं समझ चुका हूँ वास्तव में अथ इति को।
तब मेरी मति पर पत्थर था गिरा पाया ॥जिनसेना-५६५॥
स्त्री सुन्दर, पुत्र विनीत, शरीर निरोग।
स्थिर राज्य संपदा भोग और उपभोग।
क्या धर्म बिना यह सब कुछ जाता पाता ॥जिनसेना-५६६॥
क्यों धर्म छोड़ने का बोला तेरे से।
क्यों मणि ढुढ़वाया था धुप-अंधेरे से।
तुम चलो महल मे, लेने को मैं आया ॥जिनसेना-५६७॥
जिनसेना बोली दोष कर्म का सारा।
कर्मों को भोगो बिना नहीं छुटकारा।
कृत कर्म उदय मे था मेरे ही आया ॥जिनसेना-५६८॥
मत रोष रखूँ क्यों, दोष किसी को क्यो दूँ।
पथ असतोष का उबड़ खाबड़ क्यों लूँ।
आ गयी महल में प्रेम नृपति से पाया ॥जिनसेना-५६९॥

रत्ना की दुर्दशा :—

रत्ना के तन से कोढ़ फूट कर निकला।

पापों ने बोला एक साथ मिल हमला।
हो गई घिनौनी जो थी सुन्दर काया ॥जिनसेना-६००॥
जिस काया से राजा पर जाल बिछाया।
जिस काया को सिंगारा तथा सजाया।
उस काया ने ही आज स्वयं को खाया ॥जिनसेना-६०१॥
काया का काम यही, सत्कर्म कमाये।
काया का पाना तब सार्थक कहलाये।
काया की माया है बादल की छाया ॥जिनसेना-६०२॥
मिट्टी की काया मिट्टी में मिल जाती।
जब प्राण न हो तब क्या काया हिल पाती।
यह एक अशुचियों का भंडार बताया ॥जिनसेना-६०३॥
महलों से बाहर रहती पड़ी किनारे।
आ जाता कोई जब दो बार पुकारे।
सेवा भी मुश्किल से हो पाती गाया। जिनसेना-६०४॥

प्रवेश और कल्याण :—

जिनसेन कुंवर आ रूका कनकपुर वन में।
आ गया अकेला ही उद्यान-भवन में।
जिनसेना माँ के दर्शन वहाँ न पाया ॥जिनसेना-६०५॥
नरपति ने पाया पता, पुत्र चल आया।
सौल्लास सभी का नगर प्रवेश कराया।
सुतवधुओं पुत्रों ने आशीश झुकाया ॥जिनसेना-६०६॥
निज बीती बातें कही सुनी आपस में।

मग्न डूब गये हैं प्रेमामृत के रस में।
जिनसेना का मन फूला नहीं समाया।।जिनसेना-६०७।।
जिनसेन पूछता, बोलो कहाँ बिगाता ?।
पर पता आ गया पुत्र रहा है साता।
बाहर से महलों के भीतर ले आया।।जिनसेना-६०८।।
आ मदन मालती बोलो कष्ठ मिटाऊँ।
तन हृष्ट-पुष्ट कर मन संतुष्ट बनाऊँ।
संकल्प किया जल अंजलि में भरवाया।।जिनसेना-६०९।।
मन-वचन-कर्म से सत्यशील जो पाता।
सासू का कुष्ठ मिटो दुःख देने वाला।
कह अंजलि का जल काया पर छिड़काया।।जिनसेना-६१०।।
कहते ही कंचन तुल्य तुल्य हो गई काया।
निज सत्य शील का चमत्कार दिखलाया।
महलों में सब ने जय जयकार बुलाया।।जिनसेना-६११।।
रत्ना ने माफी मागी अपराधों की।
कृत वाद-विवादों सारे उन्मादों की।
मन मंगल निर्णय लेने को ललचाया।।जिनसेना-६१२।।
संयम ले लिया :—
मैं सयंम लूंगी नहीं रहूंगी घर में।
वैराग्य भावना जाग उठी अंतर मे।
संयम के हित हो हुई निरोगी काया।।जिनसेना-६१३।।
जयमंगल जिनसेना भी जाग पड़े है।

लेने को संयम ये भी हुये खड़े हैं।
जिन और राम ने दीक्षोत्सव मनाया ॥जिनसेना-६१४॥
तीनों ने दीक्षा ली भवसागर तरने।
कल्याण स्वयं का और जगत का करने।
वन कर्म मुह पद सिद्ध बुद्ध का पाया ॥जिनसेना ६१५।

जिनसेन का शासन काल :—

जिनसेन राम अब प्रीति सहित रहते हैं।
दुख राज्य प्रजा का कभी नहीं सहते हैं।
शासन को स्थिरता दे स्थिर सुयश कमाया ॥जिनसेना-६१६॥
सुत मदनमालती का सत्पुत्र हुआ है।
क्या वचन केवली का उत्सुत्र हुआ है।
सुत एक सलौना कमला ने भी पाया ॥जिनसेना ६१७।
पढ़ लिखकर योग्य युवक दोनों हो जाते।
सुख मात-पिता-भ्राताओं को पहूँचाते।
जिनसेन नृपति ने आत्मा से सुख पाया ॥जिनसेना-६१८॥
सुख तन का मन का सत्य वचन का भारी।
सुख स्त्रीका सुतका, परिजन का हितकारी।
सुख विश्वासी भृत्यों से जाता पाया ॥जिनसेना-६१९॥
सुख राज-प्रजा का अस्त्र और गज रथ का।
सुख रत्न-वसन का सुख है मन-संयत का।
सुख सदाई का सच्चाई का गाया ॥जिनसेना-६२०॥
सुख व्यसन मुक्ति का सत्संगति का सुख है।

सुख आत्मशांति-गुरु दर्शन-भक्ति प्रमुख है।
सुख सात्विकता का वास्तव में सच गाया ॥जिनसेना-६२१॥

मुनि दर्शन और देशना :—

मुनिराज पधारे धर्म-देशना होती।
मुनि प्रवचन देते वरसाते शुभ मोती।
संसार दुःख भंडार सही समझाया ॥जिनसेना-६२२॥
इन भोगों का परिणाम भयंकर होता।
सुख भोक्ता आखिर सिर पर कर धर होता।
मधु-विन्दु तुल्य सुख से दुःख जाता पाया ॥जिनसेना-६२३॥
खुजलाने से ज्यों खुजली वढ़ती जाती।
भोगों से तृष्णा दुगुनी वढ़ती जाती।
है मार्ग शान्ति का भोग त्याग बतलाया ॥जिनसेना-६२४॥
है कौन किसी का साथी गोती न्याती।
स्वार्थों का रोना दुनिया रोती जाती।
सुन अमृत वाणी हर प्राणी हरपाया ॥जिनसेना-६२५॥

एक समाचार :—

आया है देखो दूत सिंहलपुर वाला।
इक दूत इधर आया चंपापुर वाला।
इक दूत विजयपुर से संदेश लाया ॥जिनसेना-६२६॥
हम संयम लेंगे राज्य भार संभालो।
देरी न करो वस वचन आपका पालो।
जिनसेन नृपति ने पुत्रों को बुलवाया ॥जिनसेना-६२७॥

जो उचित लगा वह राज्य सुतों को बांटा।
जो फूल दिया तो दिया साथ में कांटा।
थे राज्य चार, सुत चार बराबर गाया। जिनसेना-६२८॥
श्री दानसेन को दिया कनकपुर वाला
श्री शील सिंह ने चंपापुर संभाला।
था जिसका जो संस्कार वही है पाया ॥जिनसेना-६२९॥
मदना के सुत को राज्य विजयपुर वाला।
कमला के पुत्र को सिंहलपुर दे डाला।
अपने को अपने मन से मुक्त बनाया ॥जिनसेना-६३०॥
निवृत हो गये सांसारिक जीवन से।
मुनि बनने का संकल्प किया है मन से।
सुन सभी स्त्रियों ने मार्ग यही अपनाया ॥जिनसेना-६३१॥
ले आज्ञा पुत्रों से, ली गुरु से दीक्षा।
मुनि दीक्षा दी है आत्म ज्ञान की शिक्षा।
पथ सत का कठिन परीक्षा वाला गाया ॥जिनसेना-६३२॥
श्री रामसेन ने पांच महाव्रत धारे।
श्रद्धा से लेकर सुखसे पार उतारे।
जिस लिये उठे वह कार्य सिद्ध हो पाया ॥जिनसेना-६३३॥
हो कर्म मुक्त बन गये मोक्ष अधिकारी।
गुण गाते रहते सिद्धों के संसारी।
गुण गाने को मिष रचना को अपनाया ॥जिनसेना-६३४॥
जिनसेना रानी की यह कथा बनाई।

की शब्द तंतुओं द्वारा सफल बुनाई।
कर पुनः निरीक्षण गया इसे धुलवाया ॥जिनसेना-६३५॥

कथासार :—

धर्म कभी मत छोड़िये, सहिये लाखों कष्ट।
धर्म नष्ट होता नहीं, होता कष्ट विनष्ट ॥ १ ॥

वह जीवन क्या काम का, जो न किया उपकार।
भला शत्रु का भी करो, भला कहे संसार ॥ २ ॥

नर चाहे जाये कहीं, कर्म हमेशा साथ।
कर्म परीक्षा की करो, अगर करो कुछ बात ॥ ३ ॥

उदारता रखिये सदा, दें न किसी को दोष।
असंतोष दुःख मूल है, शान्ति मूल संतोष ॥ ४ ॥

शील बचाने के लिये, प्रस्तुत कर दो प्राण।
पाव बचाने के लिये, प्रस्तुत ज्यों पद त्राण ॥ ५ ॥

त्याग भावना का करो, मन से विशद विचार।
त्याग बिना होता नहीं, भव से बेड़ा पार ॥ ६ ॥

महामन्त्र नवकार का, जपते रहिये जाप।
टलते इसकी शक्ति से, भव भव के संताप ॥ ७ ॥



प्रशस्ति :—

दोहे

संप्रदाय गुरु हुक्म की, हुए योग्य आचार्य।
आचार्यों की पूज्यता, हमें सदा स्वीकार ॥ १ ॥

अष्टम पद पर शान्ति धर, पूज्य प्रवर नानेश।
देते रहते जगत को, समता का संदेश ॥ २ ॥

शिष्य पार्श्व करता सदा, गुरु पद के गुण-गान।
गुरु से ही मिलता रहा, ज्ञान-स्थान-सम्मान ॥ ३ ॥

करूं इन्द्र भगवान के, उपकारों को याद।
गूंगा भी पहचानता, मिश्री का जो स्वाद ॥ ४ ॥

दो हजार अड़तीस का, फाल्गुन चौतुमास।
शुक्रवार तीज को, की रचना सोल्लास ॥ ५ ॥

बीकानेरी संघ है, भाग्यवान गुणवान।
वृद्ध संत रहते यहाँ, साताकारी स्थान ॥ ६ ॥

भूल कहीं जो रह गई, है वह सबसे क्षम्य।
तत्व हमेशा ही रहा, केवल ज्ञानी गम्य ॥ ७ ॥

—o—